इस्लामी फ़िक़्ह

भाग-3

(व्यवहार)

मौलाना मिन्हाजुद्दीन मीनाई (रह०)

इस्लामी फ़िक़्ह

❸

व्यवहार
(मुआमलात)

मौलाना मिनहाजुद्दीन मीनाई

मकतबा अल हसनात

सूची

व्यवहार (मुआमलात)

इन्सान को दुनिया में ज़िन्दगी गुज़ारने के लिये, रोज़ी कमाने और सामाने रिज़्क़ मुहय्या करने की ज़रूरत है। इस्लाम ने जहां रूह को अख़लाक़ी गिज़ाएं फ़राहम करने की हिदायात दी हैं वहाँ जिस्म को माद्दी गिज़ा पहुंचाने के ज़राये और वसाईल इस्तेमाल करने के तरीक़े भी बताए हैं।

आम तौर पर जिन ज़रियों और वसीलों से इन्सान रिज़्क़ हासिल करता है और ज़रूरियाते ज़िन्दगी फ़राहम करता है वह ये हैं:

(1) **तिजारत** - यानी आपस में लेन देन और व्यापार (2)**मुज़ारिबत** - यानी एक आदमी का रूपया और दूसरे की मेहनत (3) **शिराकत** - यानी कई लोगों का मिल कर ख़रीदना या बेचना या कोई कारोबार चलाना (4) **क़र्ज़** - यानी किसी दूसरे आदमी से माल या रक़म उधार ले कर काम करना (5) **रहन** - यानी अपनी कोई चीज़ ज़मानत में दे कर माल या रूपया हासिल करना (6) **इजारह** - यानी अपनी चीज़ किराये पर दे कर या दूसरे की चीज़ किराये पर ले कर काम करना या अपनी मेहनत की मज़दूरी लेना और दूसरों की मेहनत का बदला देना (7) **ज़िराअत** - यानी अपनी ज़मीन पर खुद खेती करना या दूसरों की मदद से खेती करना।

रोज़ी कमाने के इन तरीक़ों को इस्तेमाल करने में कभी अपना माल किसी दूसरे शख़्स के पास अमानत रखने या दूसरों से माल उधार लेने की भी ज़रूरत पड़ती है।

इस्लाम ने इन सब तरीक़ो से काम लेने के नियम और क़ानून मुक़र्रर कर दिये हैं, इन्हीं को शरीअत की परिभाषा में मुआमलात

कहा जाता है। मुआमले का अर्थ है आपस में कोई काम करना, इन में कम से कम दो आदमियों या चीज़ों की साझेदारी होती है जैसे तिजारत में ख़रीदने वाले और बेचने वाले की, ज़िराअत में ज़मीन के मालिक, किसान, बीज, पानी और खेती करने के समान की, मुज़ारिबत में माल वाले और काम करने वाले की, यही हाल इजारा का है जिस में मालिक व मज़दूर की साझेदारी होती है।

इस्लामी निर्देशः ऊपर ज़िक्र किये गये मुआमलों में इस्लामी शरीअत की हिदायतें (निर्देश) मौजूद हैं यानी सही काम का हुक्म और ग़लत कामों से रोका गया है। पहली बुनियादी हिदायत (निर्देश) यह है कि जो मुआमला भी किया जाये उसमें दोनों आदमियों का राज़ी होना पहली शर्त है। अगर दोनों में से कोई एक राज़ी न होगा तो इस्लाम में वह मुआमला बातिल (अवैध) और नाजाइज़ माना जायेगा। रोका इस बात से गया है कि रज़ामंदी किसी हराम चीज़ जैसे सूद लेने या देने, धोका करने, झूट बोलने वग़ैरा में न हो तो अगर कोई तिजारत या ज़िराअत का मुआमला ऐसा किया जाये जिसमें इन रोकी हुई बातों की मिलावट हो तो इस्लामी शरीअत में वह हराम समझा जायेगा, चाहे मुआमला करने वाले आपस में राज़ी ही क्यों न हों, शराब बनाने का कारख़ाना या ऐसे सामान तैयार करने का करोबार जिस से अख़लाक़ बिगड़ते हों या दौलत बेकार होती हो इस्लामी शरीअत में मना किया जाएगा बल्कि मज़दूरों को भी ऐसे कारख़ानों में काम करने से रोका जायेगा चाहे बनाने वाले और ख़रीदने वाले मालिक व मज़दूर आपस में राज़ी ही क्यों न हों। हराम पर रज़ामंदी की इजाज़त तो सिर्फ़ बहुत ज़्यादा मआशी मजबूरी या जान व माल और इज़्ज़त व आबरू के बहुत ही ख़तरे की हालत में दी जा सकती है।

इस्लामी शरई हिदायतों पर अमल करने का फ़ायदा

दुनिया में: यह है कि न मुआमला करने वालों में कोई

इख़्तिलाफ़ (मतभेद) होगा, न एक फ़रीक़ (पक्ष) दूसरे फ़रीक़ पर जुल्म कर सकेगा। रोज़ी कमाने के उपाय कुछ लोगों के लिये ऐश व आराम के सामान का इन्तिज़ाम कर के बाक़ी लोगों के लिये मुसीबत का कारण न बन सकेंगे। आज कल पूरी दुनिया और ख़ासतौर पर बर्रे सग़ीर (भारतिय उपमहाद्वीप) में ज़िन्दगी की ज़रूरतों की कमी और महंगाई की वजह से जो बेचैनी पाई जाती है उस की बड़ी वजह यही है कि उन आदेशों और मनाही की सही तौर पर पाबन्दी नहीं की जाती।

आख़िरत में: जिस तरह आपसी रज़ामंदी के बग़ैर या बातिल और हराम शर्तों पर मुआमला करने से किसी न किसी की हक़तलफ़ी और नुक़सान होता है, उसी तरह आख़िरत में भी ऐसा मुआमला करने वालों को नाकामी और घाटे का सामना करना पड़ेगा। क़ुरआन मजीद में हराम तरीक़ों और रज़ामन्दी के बग़ैर रोज़ी कमाने वालों के अमल को क़त्ल और जुल्म क़रार दिया है और आख़िरत में दोज़ख़ की सज़ा उनके लिये तय (नियुक्त) फ़रमा दी है –

يٰاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَاْكُلُوْٓا اَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ اِلَّآ اَنْ تَكُوْنَ تِجَارَةً عَنْ تَرَاضٍ مِّنْكُمْ وَلَا تَقْتُلُوْٓا اَنْفُسَكُمْ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِكُمْ رَحِيْمًا. وَمَنْ يَّفْعَلْ ذٰلِكَ عُدْوَانًا وَّظُلْمًا فَسَوْفَ نُصْلِيْهِ نَارًا ؕ وَكَانَ ذٰلِكَ عَلَى اللّٰهِ يَسِيْرًا. (نساء: ۲۹_۳۰)

"या अय्युहल्लज़ीना आमनू ला ताकुलू अमवालकुम बैनकुम बिलबातिलि इल्ला अन तकूना तिजारतन अन तराज़िम मिनकुम वला तक़तुलू अनफ़ुसकुम इन्नल्लाहा काना बिकुम रहीमा। वमंय्यफ़अल ज़ालिका उदवानवं वज़ुल्मन फ़सौफ़ा नुसलीहि नारा, वकाना ज़ालिका अलल्लाहि यसीरा। (सूरह निसा:29,30)

अनुवाद: ऐ ईमान वालो! अपने माल आपस में ग़लत तरीक़े से न खाओ मगर यह कि रज़ामंदी के साथ कोई तिजारत हो

(हो इस में कोई हर्ज नहीं, और ग़लत मुआमला कर के) एक दूसरे को (मआशी तौर पर) क़त्ल न करो, अल्लाह तुम पर रहम फ़रमाता रहा ह (तो तुम भी रहम के ख़िलाफ़ काम न करो) और जो शख़्स जुल्म व ज़्यादती के साथ ऐसा करेगा उस को हम जल्द की आग में डालेंगे और यह अल्लाह पर बहुत आसान है।

रिश्वत और झूटे मुक़दमों के ज़रिये रूपया कमाने वालों को यह कह कर इस काम से मना किया गया है कि "एक दूसरे का माल नाहक़ तौर पर न खाओ हालाँकि तुम इस गुनाह को जानते हो" इसी तरह यतीमों का माल हड़प कर जाने वालों के बारे में कुरआन में कहा गया है कि ये लोग "अपने पेट में आग भर रहे हैं।"

ऐसे हराम तरीक़ों से आपस की रज़ामंदी के बग़ैर रोज़ी कमाने का मुआमला करना कुछ दिनों के लिये किसी आदमी को दुनिया में फ़ायदा पहुंचा भी दे लेकिन दूसरों को नुक़सानी ही पहुंचायेगा और खुद उस के लिये दुनिया और आख़िरत दोनों जगह तबाही का सबब होगा। कुरआन नें ग़लत तरीक़े पर माल खाने वालों को "अक्कालूना लिस्सुहति" कहा है, सुहुत का अर्थ नेस्त व नाबूद (बरबाद) कर देने का है। यानी इस तरीक़े से रोज़ी कमाने वाला खुद को भी बरबाद करता है और दूसरों को भी।

हलाल कमाई की तरग़ीब (प्रेरणा): कुरआन में दी गई है और नबी (स.अ. व.) के फ़रमान में भी विस्तार के साथ मौजूद है। सबसे ज़्यादा अपने हाथ की कमाई पर ज़ोर दिया। क्योंकि इसमें ग़लत तरीक़े की सम्भावना कम होती है। आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया –

مَا اَكَلَ اَحَدٌ طَعَامًا خَيْرًا مِنْ اَنْ يَّاكُلَ مِنْ عَمَلِ يَدِهٖ۔

"वमा अकला अहादुन तआमन ख़ैरन मिन अय्याकुला मिन अमलि यदिही।"

अनुवादः कोई रोज़ी उस रोज़ी से बेहतर नहीं है जो मेहनत मज़दूरी कर के हासिल की गई हो।

आपने अपने बारे में फ़रमाया कि मैं कुरैश की बकरियाँ एक क़ीरात रोज़ाना की मज़दूरी पर चराता था, हज़रत दाऊद, हज़रत इदरीस अलैहिस्सलाम और कुछ दूसरे अंबिया के बारे में हदीस में है कि वह अपने हाथ के काम से कमाते थे, सहाबाकिराम और बहुत से बुज़ुर्गों का रोज़ी कमाने का ज़रिया उनके हाथ की कमाई रहा है यानी ख़ुद अपने हाथ से मेहनत मज़दूरी कर के अपनी ज़िन्दगी का ख़र्च चलाते थे।

हराम माल इबादत को बेकार कर देता है। इस बारे में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के फ़रमान में से कुछ ये हैं -

हराम माल से पला हुआ जिस्म जन्नत में नहीं जाता, उसकी दुआ कुबूल नहीं होती। जिसने किसी की एक बालिश्त ज़मीन जुल्म से दबा ली क़यामत में उसे लानत का तौक़ पहनाया जायेगा, आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि हलाल रोज़ी कमाना हर मुसलमान पर फ़र्ज़ है और हलाल माल हासिल करने की कोशिश का सवाब जिहाद के बराबर है।

ये तो थीं मुआमलात के बारे में कुरआन व सुन्नत की बुनियादी हिदायतें हर मुआमले पर इन हिदायतों की रोशनी में उलमा की रायें तो इन का विवरण भी जानना ज़रूरी है। मगर पहले यह समझ लेना चाहिये कि हराम चीज़ें हैं क्या क्या?

मुआमलात के मसाइल बयान करने से पहले फ़िक़ह की पुस्तकों में "बाबुल-हज़्र वल इबाहा" यानी हलाल व हराम चीज़ों का बयान होता है।

हलाल और हराम चीज़ें:

1. जो जानवर हराम क़रार दिये गये हैं उनका ख़रीदना और बेचना भी हराम है, मगर जबकि कोई बड़ी ज़रूरत पेश आ जाये। हाँ अगर उनके सींग और चमड़े को दिबाग़त (पकाने) के बाद इस्तेमाल किया जाये या ख़रीदा बेचा जाये, या उनसे कोई सामान तैयार करके बेचा जाये तो जाइज़ है। लेकिन सुवर का चमड़ा या उसकी कोई चीज़ किसी हाल में जाइज़ नहीं।

2. खुशकी में रहने वाले मुर्दार अर्थात मरे हुए जानवर का गोश्त बेचना हराम है। उसके चमड़े का वही हुक्म है जो ऊपर बयान हुआ।

3. नशीली चीज़ों जैसे हर क़िस्म की शराब, ताड़ी, अफ़ीम, भंग, गाँजा, चर्स वग़ैरा हराम हैं।

4. तमाम ज़हरीली चीज़ें, जैसे संखिया वग़ैरा हराम हैं।

5. सोने चाँदी का इस्तेमाल औरतों के लिये जाइज़ है मगर उसी हद तक कि मुनासिब श्रंगार हो जाये। मर्दों के लिये उनका इस्तेमाल हराम है और उनसे बने हुए बरतन, चमचे, ख़ासदान, घड़ी और आइने का इस्तेमाल जाइज़ नहीं है।

6. मर्दों को रेशमी कपड़ों का इस्तेमाल जाइज़ नहीं यानी ख़ालिस रेशम से बने हुये कपड़ों का।

7. सूद और उसकी जितनी भी क़िस्में हैं सब हराम हैं।

8. जुआ और उसकी जितनी भी क़िस्में हैं जैसे लाटरी, सट्टेबाज़ी, घोड़ा दौड़ पर शर्त लगाना, ग़ायब माल का बेचना और ख़रीदना, धोका देकर तिजारत करना, यह सब काम नाजाइज़ और हराम हैं।

9. नाच गाना और नाचने गाने के सामान बनाना।

10. जानदार की तसवीर बनाना या फोटो लेना, ऐसी तसवीरें और फ़िल्में बनाना जिन में नाच गाने और औरतों की नुमाइश हो।

हलाल और हराम जानवर: चिड़ियों और चार पैर वाले जानवरों का बयान जिनका खाना हराम है नीचे किया जाता है:

1. ऐसे तमाम चिड़ियों का गोश्त हराम है। जो पंजों से शिकार करते हों जैसे शकरा, बाज़, शाहीन, गिद्ध, उक़ाब चील वग़ैरा। वे चिड़ियाँ जिनके पंजे तो हैं लेकिन उनसे शिकार नहीं करतीं जैसे कबूतर, फ़ाख़्ता वग़ैरा वे हलाल हैं। हुदहुद लटोरा जो चिड़ियों का शिकार करता है (जिसकी ख़ास ग़िज़ा गोश्त है) उल्लू, चमगादड़, जंगली अबाबील, चितकबरा कौआ जो मुर्दार के अलावा कुछ नहीं खाता, ये सब हराम हैं हाँ खेत का कौआ जिसका रंग काला होता है और चोंच पाँव लाल होते हैं हलाल है। चिड़ियों में से हर क़िस्म के चिड़े, बटेर, चंडोल, भट, तीतर, चकोर बुलबुल, तोता, शुत्रमुर्ग़, मोर, सारस बत्तख़, मुर्ग़ाबी दूसरे मशहूर परिंदे और टिड्डी हलाल हैं।
2. वे तमाम दरिन्दे जानवर जो कुचलियों से दूसरों पर हमला करते हैं हराम हैं। जैसे शेर, चीता, भेड़िया, रीछ, हाथी, बन्दर, तेंदुआ, गीदड़, बिल्ली, इनमें वे कुचली के दाँत वाले जानवर दाख़िल नहीं हैं जिनकी कुचलियाँ तो हों लेकिन उनसे हमला न करते हों जैसे ऊँट यह हलाल है। पालतू गधा, घोड़ा और ख़च्चर हराम हैं। मालिकी फ़ुक़हा के नज़दीक ख़च्चर और गधा मकरूह और घोड़े का गोश्त कराहत के साथ जाइज़ है। हनफ़ी फ़ुक़हा के नज़दीक मकरूहे तनज़ीही है। हिरन, नीलगाय की तमाम क़िस्में, भैंस, बैल, गाय, बकरी, भेड़ और दुम्बा, हलाल हैं, नेवला, गोह, बिज्जू, लोमड़ी, सनजाब, समोर, सही और फ़तक (लोमड़ी जैसा जानवर जिसकी खाल बहुत ही नर्म होती है) हलाल नहीं हैं।

3. ज़मीन के जीव (ज़मीन के कीड़े मकोड़े) खाना हराम है जैसे बिच्छू, साँप, चूहा, मेंढक चियूँटी वग़ैरा।
4. दरयाई जानवर जो पानी में रहते हैं हलाल हैं अगरचे उन की शक्ल मछली जैसी न हो जैसे बाम मछली जिस की शक्ल सांप जैसी होती है। यानी मगरमछ के अलावा तमाम क़िस्म की मछलियाँ हलाल हैं। हनफ़ी फ़ुक़हा के नज़दीक वह दरयाई जानवर जो मछली की तरह न हों हलाल नहीं है, और मछलियों में ताफ़ी का खाना जाइज़ नहीं, ताफ़ी वह मछली है जो पानी में स्वभाविक मौत मर कर पलट गई हो, पेट ऊपर और पीठ नीचे हो गई हो।
5. कछुआ हराम है खुश्की का हो या दरयाई हो जो तरसा के नाम से मशहूर है। यह खुश्की में भी रहता है और तरी में भी।
6. सुअर, कुत्ता और मरा हुआ हर जानवर (जो शरीअत के मुताबिक़ ज़िब्हा किये बग़ैर मर जाये) हराम है। ख़ून हराम है (जिगर और तिल्ली ख़ून में शामिल नहीं इस लिये वे हलाल हैं) वह हलाल जानवर जो गला दबा कर मारा गया हो (मुनहनिक़ह) या किसी औज़ार से मारा गया हो (मौक़ूज़ह) या ऊँचाई से गिर कर मर गया हो (मुतरद्दिया) या किसी दूसरे जानवर ने सींग वग़ैरा मार कर मार डाला हो (नतीहा) इन सब का गोश्त खाना हराम है, इसके अलावा कि मरने से पहले उन्हें ज़िब्ह कर लिया जाये और ज़िब्ह करते वक़्त उनमें ज़िन्दगी की निशानियाँ पूरी तरह पाई जाती हों।

दूसरी हलाल व हराम चीज़ें:

1. उपर हराम जानवरों का विवरण बयान किया गया। तो जो जानवर हराम हैं उनका ख़रीदना और बेचना भी बग़ैर किसी शरई मजबूरी के हराम है, अगर उनके सींग खाल और चमड़े को दिबाग़त कर के यानी पका कर इस्तेमाल किया जाये या उनको

ख़रीदा और बेचा जाये या उनसे सामान बनवा कर बेचा जाये तो जाइज़ है लेकिन सुअर का चमड़ा या उसकी और कोई चीज़ किसी हाल में भी जाइज़ नहीं, हर मुर्दार जानवर का गोश्त या चमड़ा बेचना हराम है, अलबत्ता अगर पकाया हुआ चमड़ा अगर कोई बेचे तो जाइज़ है।

2. हर ऐसी चीज़ जो इन्सान के बदन या उसकी अक्ल के लिये नुक़सानदेह हो उसका लेन देन हराम है जैसे अफ़ीम, भांग, गाँजा, चर्स, कोकीन, और ऐसे ही वे तमाम चीज़ें जो नशीली, नुक़सान पहुंचाने वाली या ज़हरीली हों।

पीने की चीज़ें जो हराम हैं: इस्लामी शरीअत में शराब का पीना सख़्त हराम है, बड़ा गुनाह और जुर्म है क्योंकि इसमें अख़लाक़ी, जिस्मानी और इजतिमाई नुक़सानात पर इसका हराम होना क़ुरआन व हदीस और उम्मत के इजमा (आम सहमति) से साबित है, क़ुरआन करीम में है –

يٰاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا اِنَّمَا الْخَمْرُ وَالْمَيْسِرُ وَالْاَنْصَابُ وَالْاَزْلَامُ رِجْسٌ مِّنْ عَمَلِ الشَّيْطٰنِ فَاجْتَنِبُوْهُ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ. اِنَّمَا يُرِيْدُ الشَّيْطٰنُ اَنْ يُّوْقِعَ بَيْنَكُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَآءَ فِي الْخَمْرِ وَالْمَيْسِرِ وَيَصُدَّكُمْ عَنْ ذِكْرِ اللّٰهِ وَعَنِ الصَّلٰوةِ فَهَلْ اَنْتُمْ مُّنْتَهُوْنَ.

(سورۂ مائدہ۔۹۰۔۹۱)

"या अय्युहल्लज़ीना आमनू इन्नमल ख़मरू वल-मैसिरू वल-अन्साबु वल अज़लामु रिजसुम मिन अमलिश्शैतानि फ़ज्तनिबूहु लअल्लकुम तुफ़लिहून। इन्नमा युरीदुश्शैतानु अय्यूक़िआ बैनाकुमुल अदावता वलबग़ज़ाआ फ़िलख़मरि वल-मैसिरि व यसुद्दकुम अन ज़िक्रिल्लाहि व अनिस्सलाति फ़हल अनतुम मुनतहून।" (सूरह मायदा:90-91)

अनुवादः ऐ ईमान वालो! यह शराब और जुआ और यह बुत और पांसे गंदे शैतानी काम हैं इनसे बचो, उम्मीद है कि तुमको कामयाबी मिलेगी। शैतान तो यह चाहता है कि शराब और जुए कि ज़रिए तुम्हारे बीच दुश्मनी और कीना डाल दे और तुम्हें खुदा की याद और नमाज़ से रोक दे, फिर क्या तुम उन चीज़ों से रूके रहोगे?

इन आयतों में शराब के हराम होने की दस दलीलें हैं (1) शराब को जुए, बुत और पाँसों के तीरों की तरह बुरा क़रार दिया गया (2) रिज्स यानी गंदगी जैसी मकरूह चीज़ (3) शैतानी काम होना (4) बचे रहने के क़ाबिल चीज़ (5) निजात (मुक्ति) इसके छोड़ने पर निर्भर होना। (6) शैतान उसे आपसी दुश्मनी पैदा करने में इस्तेमाल करता है (7) उसे कीने (कपट) का ज़रिया बनाना चाहता है (8) अल्लाह की याद से रोकना चाहता है (9) नमाज़ से रोक देना चाहता है (10) उससे न रुकने वालों को बहुत ज़्यादा डराया धमकाया गया है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया है "शराब पीने वाला पीते वक़्त मोमिन नहीं रहता।"

पूर उम्मत और मुसलमानों के सारे इमाम इस बात पर एकत्रित हैं कि शराब हराम है उसके पीने से बहुत ज़्यादा गुनाह है और बहुत बड़ा जुर्म है।

ख़म्र का अर्थ है अक़्ल पर पर्दा डालने वाली चीज़, तो जो चीज़ अक़्ल को ख़ब्त कर देने वाली हो वह ख़म्र है चाहे वह अंगूर से बनाई जाये या खुजूर या शहद या गेहूँ या जौ या किसी और चीज़ से तैयार की जाये। आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने यह वज़ाहत (स्पष्टीकरण) भी कर दी है कि "जो ज़्यादा मात्रा में नशीली हो वह थोड़ी सी भी हराम है" चाहे नशा न लाये। अंगूर से बनी हुई हर क़िस्म की शराब चाहे वह ख़म्र हो (जो शीरा अंगूर का ख़म्र उठा कर और जोश दे कर बनाई जाती है) या बाज़क़ (बादह)

हो जो अंगूर के रस को दो तिहाई मिला कर बनती है या मुनस्सफ़ (यानी दो आतिशा) या मुसल्लस यानी सह आतिशा सब हराम हैं। इसी तरह सकर (ताज़ा खजूरों को भिगो कर बनाई गई) और फ़ज़ीख़ (खुश्क खजूर की पानी में भिगो कर बनाई गई) और नबीजुत्तमर (खजूरों का पानी जोश दे कर बनाई हुई) ये सब जब नशीली हो जायें तब हराम हैं चाहे ज़्यादा हों या एक ही बूँद हो, यही हुक्म किशमिश, मुनक्क़ा वगै़रा का है जब उन्हें जोश दे कर नशा लाने वाला बना लिया जाये। खजूर और अंगूर को मिला कर बनाई हुई या शहद, जै़तून और जौ वगै़रा से तैयार की हुई हर वह चीज़ जो नशीली हो जाये हराम है, इन शराबों की थोड़ी मात्रा का भी वही हुक्म है जो ज़्यादा का है। हर मुकल्लफ़ आकि़ल जिस पर शरीअत के आदेश लागू होते हैं) शराब हराम है, मजबूर व नाचार पर नहीं। जिस तरह पीना हराम है उसी तरह उसका ख़रीदना और बेचना भी हराम है, नबी (स.अ.व.) का फ़रमान है –

"जिस ज़ाते पाक ने उसका पीना हराम किया है उसी ने उसका बेचना और ख़रीदना भी हराम कर दिया है।"

हज़रत अनस बिन मालिक (र.अ.त.) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाह अलैहि वसल्लम ने शराब से संबंधित दस लोगों पर लानत की है (1) इसका निचोड़ने वाला (2) इस का निचोड़वाने वाला (3) पीने वाला (4) उठा कर लाने वाला (5) जिस के लिये लाई जाये (6) इसका पिलाने वाला (7) बेचने वाला (8) इसकी क़ीमत खाने वाला (9) इसका ख़रीदने वाला और (10) वह शख़्स जिसके लिये ख़रीदी जाये (इब्ने माजा व तिर्मिज़ी)। शराब को दवा के तौर पर इस्तेमाल करना हराम है उस शख़्स के जवाब में जिस ने कहा था कि "शराब दवा है" आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया "यह दवा नहीं, यह बीमारी है" (मुस्लिम) नबी करीम (स.अ.व.) ने फ़रमाया –

अनुवाद: अल्लाह ने मर्ज़ और इलाज दोनों बनाये और हर मर्ज़

की दवा पैदा की, तुम हराम चीज़ से इलाज न किया करो।

अंगूर का रस ताज़ा निकाल कर पीना हलाल है, फ़क़ाअ जो गेहूँ और खजूर से और कुछ लोगों के नज़दीक दूसरे मेवों के रस से बनाया जाता है जाइज़ है, वे तमाम पीने वाली चीज़ें जिस में नशे की संभावना न हो मुबाह हैं लेकिन अगर झाग और फेन आ जाये तो हराम होगा और नजिस माना जायेगा और नशा आने पर हद मारी जायेगी। ताड़ी, अफ़ीम, भांग, गाँजा, चर्स वग़ैरा नशीली चीज़ें हैं इस लिये ये सब हराम हैं।

ज़हरीली चीज़ों का हराम होनाः हर वह चीज़ जो नुक़सान देने वाली और ज़हर पैदा करने वाली हो चाहे वह जल्द असर करने वाली हो जैसे संखिया वग़ैरा या जिस में बुरे असरात के बाद में ज़ाहिर होते हों हराम है।

हराम व हलाला लिबासः ऐसा लिबास जो हराम माल से या धोके और बेईमानी से हासिल किया गया हो पहनना हराम है। आँहज़रत सल्लल्लाह अलैहि वसल्लम का फ़रमान है कि "अल्लाह तआला ऐसे शख़्स की नमाज़ कुबूल नहीं करता और न रोज़ा जिस ने चादर या कुर्ता हराम कमाई का पहन रखा हो जब तक उसे हटा न दे।" इसी तरह तकब्बुर और घमंड के लिये लिबास पहनना हराम है, मर्दों को रेशम का लिबास पहनना हराम है, उन को ज़ाफ़रानी रंग वाला और लाल रंग वाला लिबास पहनना मकरूह है, औरतों को रेशम का लिबास और हर तरह से उस का इस्तेमाल हलाल है और हर रंग का लिबास पहनना भी बिला कराहत जाइज़ है।

रेशम की बनी हुई जानमाज़ पर नमाज़ पढ़ना मर्दों के लिये जाइज़ है। तसबीह का रेशमी डोरा, कुरआन शरीफ़ का रेशमी ग़िलाफ़ बनाना जाइज़ है। काबे पर रेशम का ग़िलाफ़ चढ़ाना बिल्कुल जाइज़ है। ऐसा लिबास मर्द के लिये हलाल हैं जिसमें रेशम के साथ रूई या कतान या ऊन मिला हुआ हो मगर ज़रूरी है कि रेशम बराबर का हो

या कम हो। अगर रेशम का हिस्सा ज़्यादा हो तो नाजाइज़ है। रेशम का हाशिया या गोट और बेल भी जाइज़ है जबकि चार उंगुल से ज़्यादा चौड़ी न हो।

सोने चाँदी का इस्तेमाल: सोने चाँदी का इस्तेमाल कुछ सूरतों के अलावा हराम है, हुर्मत का सबब यह है कि नक़दी जिस से आम लोग कारोबार करते है कम हो जाती है और ग़रीब लोगों पर ज़िन्दगी गुज़ारने का दायरा तंग हो जाता है सिर्फ़ औरतों को इजाज़त दी गई है कि वे सोने चाँदी से ख़ुद को संवारें क्योंकि औरत के लिये बनाव श्रंगार ज़रूरियात में से है। इस लिये वे सोने चाँदी के ज़ेवरात पहन सकती हैं, इसी तरह मर्द को भी चाँदी की अंगूठी पहनना जाइज़ है क्योंकि कभी कभी उसको नगीने पर नाम लिखवाने की ज़रूरत पड़ती है जैसे क़ाज़ी और हाकिम को मुहर के तौर पर और यह सुन्नत भी है, क्योंकि आँहज़रत सल्लल्लाह अलैहि वसल्लम की चाँदी की अंगूठी दो दिर्हम के बराबर थी, इस से ज़्यादा वज़न की अंगूठी न होना चाहिये और एक से ज़्यादा अंगूठियाँ पहनना भी मर्द के लिये जाइज़ नहीं। सोने चाँदी के बरतन रखना और उनमें खाना पीना हराम है, आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है-

لَا تَشْرَبُوْا فِیْ اٰنِیَةِ الذَّھَبِ وَالْفِضَّةِ وَلَا تَاْکُلُوْا فِیْ صِحَافِھَا فَاِنَّھَا لَھُمْ فِی الدُّنْیَا وَلَکُمْ فِی الْاٰخِرَةِ.

"ला-तशरबू फ़ी आनियतिज़्ज़हबि वल फ़िज़्ज़ति वला ताकुलू फ़ी सहाफिहा फ़इन्हा लहुम फिद्दुनया व लकुम फ़िलआख़िरति"

अनुवाद: सोने चाँदी के बरतनों में न पियो न उनके बने हुए प्यालों में खाओ। यह दुनिया में उनके लिये और आख़िरत में तुम्हारे लिये हैं।

जिस तरह इनका इस्तेमाल हराम है उसी तरह इन का रखना भी

हराम है। इससे बने हुये चमचे, आईना, इत्रदान, पानदान, ख़ासदान और घड़ी वग़ैरा चाय और क़हवा की प्याली, सिगरेट केस, हुक़्क़ा की मुनहिनाल, ये सब नाजाइज़ हैं।

शिकार और ज़बीहे और उनमें हलाल व हराम: जिन जानवरों का खाना हलाल है उनमें से जो जानवर शिकार करने के लायक़ हों उनका शिकार किया जा सकता है शर्त यह है कि इससे किसी को नुक़सान न हो और शिकार का मक़सद खेल कूद न हो क्योंकि ऐसी सूरतों में शिकार करना हराम है -

शिकार की इजाज़त: कुरआन में अल्लाह तआला का फ़रमान है -

يَسْئَلُوْنَكَ مَاذَآ اُحِلَّ لَهُمْ قُلْ اُحِلَّ لَكُمُ الطَّيِّبٰتُ وَمَا عَلَّمْتُمْ مِّنَ
الْجَوَارِحِ مُكَلِّبِيْنَ تُعَلِّمُوْنَهُنَّ مِمَّا عَلَّمَكُمُ اللّٰهُ فَكُلُوْا مِمَّآ
اَمْسَكْنَ عَلَيْكُمْ وَاذْكُرُوا اسْمَ اللّٰهِ عَلَيْهِ. (مائدہ-۴)

"यसअलूनका माज़ा उहिल्ला लहुम कुल उहिल्ला लकुमुत्तय्यिबातु वमा अल्लमतुम मिनल-जवारिहि मुकल्लिबीना तुअल्लिमूनहुन्ना मिम्मा अल्लमकुमुल्लाहु फ़कुलू मिम्मा अमसकना अलैकुम वज़कुरूस्मल्लाहि अलैहि।" (सूरः मायदा, 4)

अनुवादः लोग तुम से पूछते हैं कि उन के लिये क्या क्या हलाल किया गया है तो उन्हें बता दो कि तुम्हारे लिये पाकीज़ा चीज़ें हलाल की गई हैं, वह शिकारी जानवर जिन्हें तुम ने सधा लिया है और उन्हें वह सब कुछ सिखा रखा है जो तुम्हें अल्लाह ने सिखाया तो अगर वे (सधे हुए जानवर) तुम्हारे लिये शिकार को दबोच रखें तो वे खाओ और बिस्मिल्लाह कह लिया करो।

इसी तरह यह फ़रमाया "इज़ा हललतुम फ़स्तादू" (जब हज से

फ़ारिग़ हो चुको तो शिकार कर सकते हो) इन आयतों से शिकार किये हुए जानवरों का हलाल होना साबित है।

सही बुख़ारी और सही मुस्लिम में अबू सअलबा से रिवायत मौजूद है, वह कहते हैं कि मैं ने आँहज़रत (स.अ.व.) से कहा कि या रसूलल्लाह मैं ऐसी ज़मीन में हूँ जहाँ शिकार मिलते हैं मैं अपनी कमान से और सधाये हुए कुत्ते से और बेसधाये कुत्ते से शिकार किया करता हूँ, क्या ये बातें ठीक हैं? आप ने फ़रमाया, जो तुम ने तीर से शिकार किया और अल्लाह का नाम लेकर तीर चलाया तो उसे खाओ, और जो सधाये हुए कुत्ते से शिकार किया और अल्लाह का नाम ले लिया तो वह भी खाओ और बेसधाये कुत्ते से जो शिकार किया तो अगर उसे ज़िब्ह कर सके तो खाओ।

इमाम मुस्लिम ने अदी बिन हातिम से रिवायत की है कि आँहज़रत सल्लल्लाह अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया –

اِذَا رَمَيْتَ بِسَهْمِكَ فَاذْكُرِاسْمَ اللّٰهِ فَاِذَا وَجَدْتَهٗ مَيِّتًا فَكُلْ اِلَّا اَنْ تَجِدَهٗ قَدْ وَقَعَ فِي الْمَاءِ فَمَاتَ فَاِنَّكَ لَا تَدْرِيْ اَلْمَاءُ قَتَلَهٗ اَوْ سَهْمُكَ.

"इज़ा रमैता बिसहमिका फ़ज़्कुरिसमल्लाहि फ़इज़ा वजदतहू मैतन फ़कुल इल्ला अन तजिदहू क़द वक़ाआ फ़िलमाइ फ़माता फ़इन्नका ला तदरी अल-माउ क़तलहू औ सहमुका"

अनुवाद: तीर चलाना हो तो अल्लाह का नाम ले कर चलाओ अब अगर शिकार मर जाये तब भी खा सकते हो लेकिन अगर वह पानी में जा गिरा और मर गया तो तुम्हें क्या मालूम कि उसकी मौत पानी से हुई या तुम्हारे तीर से (यानी पानी में मर जाने वाले जानवर का खाना जाइज़ नहीं)।"

अदी बिन हातिम (र.अ.त.) ने पूछा था कि मिअराज़ से शिकार करने का क्या हुक्म है, मिअराज़ ऐसा तीर है जिसके दोनों पहलू

धारदार होते हैं और बीच से मोटा होता है, ज़ख़्म पहलुओं से लगता है नोक से नहीं लगता तो आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया –

اِذَا اَصَبْتَ بِحَدِّهٖ فَكُلْ وَاِذَا اَصَبْتَ بِعَرْضِهٖ فَلَا تَاكُلْ فَاِنَّهٗ وَقِيْذٌ.

"इज़ा असबता बिहद्दिही फ़कुल व इज़ा असबता बिअरज़िही फ़ला ताकुल फ़इन्नहू वक़ीज़ुन"

अनुवाद: अगर शिकार तीर के पहलू से ज़ख़्मी हुआ है तो खाओ और अगर बीच से हुआ तो न खा ओ क्योंकि वह वक़ीज़ (चोट से मारा हुआ) हो जायेगा जो हराम है।"

(बुख़ारी व मुस्लिम)

इन हदीसों में शिकार के बारे में अहम बातें हैं –

इस बात में सबका इजमा है कि शिकार हलाल है जबकि निम्नलिखित शर्तें पाई जायें –

1. जिन जानवरों का शिकार हलाल है उनमें एक तो वे हैं जिनका खाना हलाल है दूसरे वे जानवर हैं जिन का खाना हलाला नहीं जैसे दरिन्दे तो उनका शिकार करना उनके नुक़सान से महफ़ूज़ रहने के लिये हलाल है। इसी तरह दाँत और बाल या खाल से फ़ायदा हासिल करने के लिये भी शिकार करना हलाल है।
2. जो जानवर फ़ितरी तौरपर इन्सान से हिले मिले न हों जैसे हिरन, नील गाय, जंगली ख़रगोश वग़ैरा ऐसे जानवरों का शिकार जाइज़ है लेकिन जो जानवर इन्सान से फ़ितरी तौर पर या हमेशा के लिये हिल मिल जायें तो ऐसे हलाल जानवर बग़ैर ज़िब्ह किये हलाल नहीं हैं। अगर उनमें से कोई जानवर बेक़ाबू हो जाये और क़ाबू में लाना मुश्किल हो तो अक़्र कर के खाया जा सकता है। अक़्र का अर्थ है कि तीर या नेज़े वग़ैरा से बदन के किसी हिस्से को ज़ख़्मी कर दिया जाये कि ख़ून उसके जिस्म से बह जाये और उसी ज़ख़्म से मरा हो और अक़्र करते वक़्त ज़िब्ह

करने की नियत रही हो। ऐसे जानवर जो पकड़े जा सकते हैं वे शिकार के ज़रिये हलाल न होंगे जैसे मुर्ग़ी, पालतू बत्तख़, हंस और कबूतर, जंगली कबूतर के अलावा, इनमें वहशत होती है और पकड़ में नहीं आते इस लिये इनका शिकार हलाल है।

3. एक शर्त यह है कि उस जानवर का कोई दूसरा शख़्स मालिक न हो, उसका कोई दूसरा मालिक हो तो शिकार हराम है।
4. अगर शिकार किया हुआ जानवर ज़िन्दा हाथ आया हो तो बग़ैर ज़िब्ह किये हलाल न होगा।

शिकारी से संबंधित शर्तें:

1. मुसलमान या अहले किताब का मारा हुआ शिकार हलाल है। मजूसी, मूर्ति की पूजा करने वाला, इस्लाम से फिर जाने वाला दहरिया और वह शख़्स जो इलहामी (आसमानी) किताबों में से किसी का मानने वाला न हो उसका मारा हुआ शिकार हलाल नहीं है, अहले किताब का ज़बीहा हलाल होने की तीन शर्तें हैं – पहली यह कि उस जानवर पर अल्लाह के अलावा किसी और का नाम न पुकारा गया हो। दूसरी यह कि वह जानवर उसका अपना माल हो किसी दूसरे का न हो। तीसरी शर्त यह कि वह जानवर ऐसा हो तो अहले किताब की शरीअत में भी हलाल हो और हमारी शरीअत में भी। अगर वह जानवर हमारी शरीअत में हलाल और शिकार करने वाले अहले किताब के यहाँ हराम हो तो वह शिकार भी हराम होगा जिस तरह दूसरे हराम जानवरों का शिकार हमारे लिये हराम है।

2. जिन लोगों का ज़बीहा हलाल नहीं उन के हाथ का मारा हुआ शिकार भी हलाल नहीं जैसे नाबालिग़ जो समझदार न हो, पागल जो जुनून की हालत में हो, बदमस्त जो मदहोश हो। हिजड़ा और औरत और बदकार इन्सान।

3. ज़िब्ह या शिकार के वक़्त अल्लाह का नाम लिया गया हो, किसी और के नाम लेने से शिकारी का मारा हुआ शिकार हलाल न होगा। अगर तीर चलाने और शिकारी जानवर को छोड़ते वक़्त बिस्मिल्लाह कह लिया तो अब उस से जो शिकार भी होगा वह हलाल होगा, अगर कोई तीर उठा कर शिकार के लिये अल्लाह का नाम लिया लेकिन उस तीर को छोड़ कर कोई और तीर बग़ैर अल्लाह का नाम लिये चला दिया तो शिकार हलाल न होगा। इस के विपरीत अगर हाथ में छुरी ले कर ज़िब्ह करने के लिये बिस्मिल्लाह कहा लेकिन उस छुरी को छोड़ कर किसी और छुरी से दूसरी बार बग़ैर बिस्मिल्लाह कहे ज़िब्ह किया तो वह ज़बीहा हलाल होगा क्योंकि ज़िब्ह के वक़्त अल्लाह का नाम जानवर पर लिया जाता है और शिकार के वक़्त उस औज़ार पर जिससे शिकार किया जाता है।

4. शिकारी कुत्ते या शिकारी जानवर को शिकार के लिये छोड़ा गया हो चाहे शिकारी ने ख़ुद छोड़ा हो या नौकर को छोड़ने का हुक्म दिया हो। शिकार का हुक्म देने वाले की नियत और अल्लाह का नाम लेना काफ़ी है, लेकिन अगर शिकार करने वाले या ज़िब्ह क़रने वाले ने जानवर को हलाल करने की नियत न की जैसे किसी जानवर को किसी औज़ार से मारा जिस से उसका गला ज़ख़्मी हो गया और वह मर गया तो वह हलाल न होगा क्योंकि उस मार से जानवर को हलाल करने की नियत न थी। कुछ फुक़हा के नज़दीक शिकार करने वाले के लिये यह शर्त है कि उसने किसी ख़ास जानवर को शिकार करने का इरादा किया हो, अब अगर निशाना ठीक बैठे तो उस के हलाल होने में कोई शुबहा नहीं। लेकिन अगर निशाना चूक गया और जिस पर निशाना लगाया उसके बजाए उस के किसी हमजिन्स को लग गया तो उसका खाना जाइज़ है। जैसे हिरन की डार पर तीर चलाया और उससे कोई भी हिरन घायल हो

गया,तो उसका खाना हलाल है, क्योंकि इरादा हिरन को शिकार करने का था, यही हुक्म उस सूरत में है जब किसी ख़ास जानवर का इरादा किया और कोई दूसरा शिकार हो गया। लेकिन अगर न तो किसी ख़ास जानवर का इरादा किया और न किसी जिन्स का बल्कि धारदार हथियार किसी जानवर को लग गया जिस से ख़ून बह गया या ज़िब्ह हो गया तो हलाल न होगा, क्योंकि ज़िब्ह करने की नियत ही सिरे से न थी।

शिकार के हथियार की शर्तें: शिकार दो क़िस्म के औज़ार से किया जाता है, पहली क़िस्म बेजान औज़ारों की है जैसे तीर, नेज़ा, बल्लम, तलवार, और ख़नजर। दूसरी क़िस्म जानदार औज़ारों की है जिस की मिसाल शिकारी जानवर हैं। कुत्ता जिसे शिकार करने के लिये सधाया गया हो या शेर, तेंदुआ, और चीता जिसको तर्बियत दे कर सधाया गया हो। इसी तरह शिकरा, बाज़, उक़ाब व शाहीन।

पहली क़िस्म के औज़ारों से हलाल शिकार होने की शर्त यह है कि जानवर औज़ार की धार या नोक के ज़ख़्म से मरा हो। लेकिन अगर धार या औज़ार के बजाये उन औज़ारों के दूसरे हिस्सों की चोट से मरा और उसे ज़िन्दा पा कर ज़िब्ह नहीं किया गया तो वह मुर्दार है जैसे लकड़ी लाठी या पत्थर की चोट खा कर मर जाये तो वह हलाल न होगा। गोली या छर्रे का ज़ख़्म खा कर अगर ज़िन्दगी बाक़ी रह गई और उसे ज़िब्ह कर लिया तो वह हलाल हो गया। समकालीन फुक़हा ने गोली से मारा हुआ जानवर हलाल क़रार दिया है क्योंकि गोली लगने से ख़ून बहता है। ज़ख़्म के लिये यह ज़रूरी नहीं कि वह फाड़ने वाला हो, अगर सुराख़ वाला ज़ख़्म हो तब भी सही है, गोली से शिकार करने में यह शुब्हा रहता है कि शिकार की मौत ज़ख़्म से हुई है या चोट से, अगर यह यक़ीन हो जाये कि ज़ख़्म खा कर ख़ून बहने के बाद मौत हुई है तो हलाल होगा वर्ना जब तक वह ज़िन्दा हाथ न आये और उसे हलाल न कर लिया जाये उस का

खाना जाइज़ न होगा। छर्रे से शिकार किये हुये जानवर का हुक्म भी गोली से शिकार किये हुए जानवर की तरह है।

शिकार के हलाल होने की एक शर्त यह है कि शिकार के हथियार से जानवर के जिस्म का कोई भी अंग ज़ख़्मी हो जाये और वहाँ से ख़ून बहे। और एक शर्त यह है कि उस शिकार का उसी तीर या उसी शिकार के आले से मरना साबित हो और उस की मौत में किसी और सबब का दख़ल न हो। जैसे किसी शिकार पर तीर चलाया और वह ज़ख़्मी हो गया लेकिन कहीं ऐसे पानी में जा पड़ा जहाँ डूब कर मर जाने के आसार है। अब अगर वह वहाँ मुर्दा पाया गया तो वह हलाल न होगा। क्योंकि मरने के बाद दो सबब हो गये, एक ऐसा था कि उसका खाना हलाल है यानी तीर का ज़ख़्म और दूसरा सबब ऐसा था जो हलाल होने से रोकने वाला है यानी पानी में डूब कर मरना अब एहतियातन उस सबब को तरजीह दी जायेगी जो उस के हलाल होने से रोकने वाला है।

अगर शिकार हथियार से ऐसा ज़ख़्मी हुआ कि दो टुकड़े हो गया तो उसके तमाम हिस्से हलाल हैं लेकिन अगर ऐसा अंग कटा कि उसके बग़ैर उस जानवर के ज़िन्दा करने के आसार है जैसे हाथ पैर या रान, फिर उसे ज़िब्ह कर लिया जाये तो उसका खाना हलाल है लेकिन वह अंग जो कट कर अलग हो गया है हराम होगा क्योंकि ज़िन्दा जानवर से जो हिस्सा अलग हो जाये मुर्दार होता है। अगर कटा हुआ हिस्सा बिल्कुल अलग न हुआ हो और गोश्त के साथ लटका हुआ हो तो यह लटका हुआ हिस्सा ज़बीहा के हुक्म में है।

शिकारी जानवरों के ज़रिये शिकार करने की शर्तें ये हैं - शिकारी जानवर चाहे वह मुँह से भंभोड़ कर शिकार करता हो जैसे कुत्ता चीता वग़ैरा या पंजों से शिकार करता हो जैसे बाज़, शाहीन वग़ैरा वह सधा लिया गया हो, कुरआन में तुअल्लिमूहुन्ना का शब्द है (जिन्हें तुम ने सिखा लिया हो) और ऐसा सधाया गया हो कि वह

शिकार को दबोच रखे, कुरआन में है "फ़कुलू मिम्मा अमसक्ना अलैकुम" (तो खाओ जिस को तुम्हारे लिये पकड़ रखा है)। जानवर का सधा होना चार बातों पर निर्भर है (1) उसे शिकार पर छोड़ते वक़्त अगर रोका जाये तो रूक जाये (2) जब शिकर पर छोड़ा जाये तो शिकार करने के लिये तैयार हो जाये यानी मालिक का इशारा पाते ही झपट पड़े (3) शिकार को पकड़ कर मालिक के लिये रोक रखे, छोड़े नहीं (4) उस में से खुद कुछ न खाये।

पंजों से शिकार करने वाले जानवर का सधा हुआ होने की पहचान यह है कि जिस वक़्त उस को शिकार पर छोड़ा जाये तो वह मालिक का कहा माने और जब वापस बुलाया जाये तो वापस आ जाये, रहा शिकार न खाना तो यह शर्त शिकारी चिड़ियों के लिये लाज़िम नहीं है इस लिये शिकारी चिड़ियों का किया हुआ शिकार हलाल है चाहे उसमें से कुछ खाया हो और शिकार ज़ख़्मी हो लेकिन गला दबा कर मारा हुआ शिकार जाइज़ नहीं है।

अगर ऊपर ज़िक्र की हुई शर्तों में से कोई शर्त शिकारी जानवर के तर्बीयत याफ़्ता होने की न पाई गई तो शिकार हलाल न होगा। हाँ अगर ज़िन्दा हाथ आ जाये और उसको ज़िब्ह कर लिया जाये तो वह हलाल हो जायेगा।

हराम जानवर: जिनका गला दबा दिया गया हो चाहे हाथ से या मशीन से, जो किसी चीज़ से टकरा कर या किसी चोट से मरा हो। जो ऊपर से गिर कर मरा हो, जो किसी दूसरे जानवर से लड़ कर या उसके सींग मार देने से मरा हो। जिस को किसी दरिन्दे ने मार डाला हो और जो अल्लाह के अलावा किसी नाम पर ज़िब्ह किया गया हो।

कुछ और हराम चीज़ें: वे तमाम मुआमले जिन में सूद की मिलावट हो हराम हैं, इसको अलग से विस्तार के साथ बयान किया जायेगा,

इसी तरह जुआ और उसकी तमाम क़िस्में हराम हैं जैसे लाटरी, सट्टेबाज़ी, पाँसा फेंकना, शर्त लगा कर मुक़ाबला करना। ख़रीदने और बेचने का मुआमला ऐसे वक़्त करना जबकि माल मौजूद न हो वह व्यापार जिस में धोका और बेईमानी का दख़ल हो। ये सब चीज़ें हराम हैं। नाच गाना और नाचने गाने का सामान, फ़िल्म बनाना और तसवीर बनाना जिसमें नाच गाना और औरतों की नुमाइश हो शरीअते इस्लामी में मना है।

वे चीज़ें जिनका इस्तेमाल हराम है लेकिन बेचना और ख़रीदना हराम नहीं: रेशमी कपड़ों और सोने चाँदी का इस्तेमाल मर्दों पर हराम है लेकिन वे औरतों के लिये रेशमी कपड़ों और सोने चाँदी के ज़ेवरों को ख़रीद और बेच सकते हैं। हराम जानवरों और मुर्दार का गोश्त और चर्बी हराम है मगर हड्डी, सींग और बाल का ख़रीदना और बेचना जाइज़ है क्योंकि उनसे ऐसी चीज़ें बनाई जाती हैं जिनको सब इस्तेमाल कर सकते हैं। इसी तरह मुर्दार की खाल को पकाने यानी दिबाग़त करने से पहले इस्तेमाल करना और बेचना नाजाइज़ है लेकिन अगर उसे पका लिया जाये और उस के बाद बेचा जाये ताकि उस के जूते या बक्स वग़ैरा बनाये जायें तो जाइज़ है मगर सुअर की कोई चीज़ किसी हाल में हलाल नहीं है, इसी तरह मुर्दार जानवर की चर्बी अगर किसी चीज़ पर लगाने के काम में लाई जाये तो कुछ फ़ुक़हा के नज़दीक मुबाह (जाइज़)है।

घोड़ादौड़ और तीरअंदाज़ी के मुक़ाबले: घुड़दौड़ या ऊँटदौड़ या तीरअंदाज़ी के मुक़ाबले जब जिहाद और मुल्क की हिफ़ाज़त के लिये कराये जायें तो फ़िक़ह के इमामों के नज़दीक यह सुन्नत तरीक़ा है, सही हदीस में हज़रत इब्ने उमर से रिवायत है कि आँहज़रत सल्लल्लाह अलैहि वसल्लम ने मुज़्मरह (छरेरे बदन के) घोड़ों की दौड़ का मुक़ाबला कराया। इसी तरह तमाम ऐसे मुक़ाबले जिनसे मक़सद जिस्मानी वर्ज़िश और जिहाद की कुव्वत हासिल करना हो

सही है। अल्लाह तआला का फ़रमान है "व अइद्दू लहुम मस्ततअतुम मिन कुव्वतिन" (यानी दीन के दुश्मनों से मुक़ाबले की तैयारी के लिये जहाँ तक हो सके अपनी ताक़त बढ़ाओ)।

फ़ुक़हा के नज़दीक ऐसे तमाम मुक़ाबले जो जंगी कारवाईयों में काम देने वाले हों और जिन का मक़सद अभ्यास और ताक़त को बढ़ाना हो और फिर न किसी के लिये नुक़सान देने वाला हो और न मुआवज़े की शर्त हो तो सब हलाल हैं और अगर दिल बहलाने और खेल के लिये हों जैसे पाँसा फेंकना और शतरंज खेलना तो हराम हैं।

घुड़दौड़, ऊँटदौड़ या तीरअन्दाज़ी पर इनाम की शर्त लगाना उस सूरत में जाइज़ है जब दोनों मुक़ाबला करने वालों में से सिर्फ़ एक शख़्स यह कहे कि अगर तुम जीत गये तो यह इनाम तुम को दूँगा और अगर मैं जीत गया तो तुम से कुछ न लूँगा या कोई तीसरा शख़्स यह कहे कि मुक़ाबला करने वालों में जो बाज़ी ले जायेगा मैं उस को इतना इनाम दूँगा, अगर मुक़ाबला करने वालों में हर एक की तरफ़ से माल शर्त पर लगाया जाये तो हलाल नहीं है क्योंकि इस सूरत में जुआ हो जायेगा। घुड़दौड़ का मुक़ाबला करने वालों के लिये यह शर्त है कि हर एक अपने साथी के घोड़े की रफ़्तार से बेख़बर हो और यह कि मुआवज़ा या इनाम कोई ईमानदार शख़्स मुक़र्रर करे जो ख़ुद मुक़ाबले में हिस्सा लेने वाला न हो, फिर अगर किसी शख़्स ने जीतने वाले के लिये कोई इनाम पेश किया तो आगे बढ़ जाने वाले को उसका लेना हलाल है। इसी तरह अगर मुक़ाबला करने वालों में से एक ने यह शर्त लगाई कि अगर उसका मुक़ाबिल जीत जाये तो वह इतना माल या रक़म उसे देगा। लेकिन दूसरे ने ऐसी कोई शर्त नहीं लगाई और वही मुक़ाबला जीत गया तो इनाम लेना हलाल होगा और अगर इनाम देने वाला जीत गया तो उसे किसी से कुछ लेने का हक़ नहीं है बल्कि उसे रक़म वहाँ मौजूद लोगों में बाँट देना होगी लेकिन अगर दोनों में से हर एक ने इनाम देने की शर्त

लगाई कि जो जीते वह ले तो यह सही नहीं है क्योंकि यह जुए की शक्ल है। हाँ अगर दो ने शर्त लगाई और एक तीसरा शख़्स और शामिल हो गया जिसने इनाम की कोई शर्त नहीं की तो यह तरीक़ा जाइज़ है। जबकि यह तीसरा शामिल होने वाला शख़्स अपने साथियों के घोड़ों की रफ़्तार से बेख़बर हो। लेकिन अगर उसे उनकी रफ़्तार की जानकारी है और वह जानता है कि उसका अपना घोड़ उन दोनों घोड़ों से आगे जायेगा जिन्होंने शर्त लगा रखी है तो शर्त लगाना जाइज़ नहीं, क्योंकि हदीस में है "अगर कोई दो मुक़ाबले में शरीक होने वाले घोड़ों में अपना घोड़ा मुक़ाबले के लिये शामिल करे और जानता हो कि उसका घोड़ा उन दोनों से आगे जायेगा तो यह जुआ है'

इमाम अहमद बिन हम्बल (रह॰) के मसलक में दौड़ के मुक़ाबले के लिये मुआवज़ा या इनाम मुक़र्रर करना सही है और मुक़ाबले में हिस्सा लेने वालों में से हर एक के लिये मुआहिदा तोड़ देना जाइज़ है मगर दौड़ शुरू हो जाने के बाद जब एक की जीत दूसरे पर नज़र आने लगे तो हारते हुये शख़्स को मुआहिदा तोड़ना जाइज़ न होगा हाँ जीतने वाला मुआहिदा तोड़ सकता है। मुआहिदे के सही होने की पाँच शर्तें हैं -

1. घुड़सवारों की नियुक्ति एक दूसरे के सामने किया गया हो और शुरू से आख़िर तक कोई परिवर्तन न हो। यही बात तीरअंदाज़ों के लिये भी ज़रूरी है।
2. घोड़े एक ही क़िस्म के हों, असील (अरबी) घोड़े का मुक़ाबला हजीन (दोगले) घोड़े के साथ सही नहीं। इसी तरह अरबी कमान (क़ौसे नबल) का मुक़ाबला फ़ारसी कमान (क़ौसे निशाब) से सही नहीं।
3. दूरी और मंज़िल की हद मुक़र्रर हो यानी दौड़ शुरू होने और ख़त्म होने की जगहें मुक़र्रर हों और दौड़ की शुरूआत एक

मुक़र्रर वक़्त से की जाये। इसी तरह तीरअंदाज़ी के लिये दूरी और निशाना मुक़र्रर हो।

4. इनाम जो मुक़र्रर किया जाये वह सब को मालूम हो, या आँखों के सामने हो, और एक मुक़र्ररह चीज़ हो और कोई हराम चीज़ न हो जैसे सुअर या शराब।

5. जुए की तरह न हो यानी तमाम शरीकों की तरफ़ से माल का देना शर्त न हो।

वे चीज़ें जो हालात की तबदीली से जाइज़ या नाजाइज़ हो जाती हैं: ख़ालिस रेशमी कपड़े पहनना मर्दों के लिये जाइज़ नहीं हैं औरतों के लिये जाइज़ हैं। चाँदी सोने की बनी हुई चीज़ों का इस्तेमाल सिर्फ़ औरतों के लिये जाइज़ है इस शर्त पर कि वे ज़ेवर की शक्ल में हों वर्ना नहीं। इस लिये उन चीज़ों का बेचना और ख़रीदना हराम नहीं है। हराम जानवरों और मुर्दार का गोश्त और उसकी चर्बी हर हाल में हराम है लेकिन अगर उनकी हड्डी, सींग और बालों का इस्तेमाल किया जाये तो जाइज़ है इसी तरह मुर्दार की खाल को पकाने (दिबाग़त करने) से पहले इस्तेमाल करना नाजाइज़ है, लेकिन दिबाग़त के बाद इस्तेमाल करना जाइज़ है और उनसे बनी हुई चीज़ों का ख़रीदना और बेचना भी जाइज़ है। मगर सुअर की कोई चीज़ किसी हाल में हलाल नहीं है, मुर्दार की चर्बी खाने के अलावा किसी दूसरे इस्तेमाल में ज़रूरत के तौरपर लाई जा सकती है।

कुछ इस्तिलाहें (शब्दावलियां): ख़रीदने और बेचेने के सिलसिले में जिन शब्दों का ज़िक्र बार-बार आयेगा उनका मतलब ज़ेहन में हाज़िर रहना चाहिये जैसे बैअ, शिरा, ईजाब व कुबूल, मबीअ और समन।

1. बैअ का अर्थ बेचना है और बेचने वाले को बायेअ कहते हैं।
2. शिरा का अर्थ ख़रीदना है और ख़रीदने वाले को मुशतरी कहते हैं।

3. ईजाब व क़ुबूल। बेचने और ख़रीदने वाले के वह अल्फ़ाज़ हैं जिनसे मुआमला तै पाता है। जैसे जब बेचने वाले ने कहा कि यह चीज़ मैंने इतने में बेच दी तो यह हुआ "ईजाब"। और ख़रीदने वाले ने कहा कि मैंने ख़रीद ली तो यह हुआ "क़ुबूल" दूसरी सूरत इसकी यह है कि ख़रीदने वाले ने बेचने वाले से कहा कि इस चीज़ की इतनी क़ीमत ले लीजिये और उसने क़ीमत ले ली तो ख़रीदने वाले का कहना ईजाब हुआ और बेचने वाले का ले लेना क़ुबूल हुआ। तीसरी सूरत यह है कि बेचने वाले ने कोई चीज़ दिखा कर क़ीमत बताई और ख़रीदने वाले ने कहा मुझे मंज़ूर है तो ईजाब व क़ुबूल हो गया। लेकिन अगर ईजाब व क़ुबूल के शब्द भविष्यकाल में बोले जायेंगे यानी ख़रीदूँगा या बेचूँगा तो बेचना सही नहीं होगा।

4. मबीअ, वह चीज़ है जो बेची जाये।

5. समन वह रक़म है जो मबीअ के बदले में दी जाये। समन और क़ीमत में थोड़ा सा फ़र्क़ है। फ़रीक़ैन (पक्षों) में जो दाम तै हो जायें वह समन और जो उस की असली क़ीमत हो वह क़ीमत कहलाती है।

तिजारत

रोज़ी कमाने का सब से अहम और बड़ा ज़रिया तिजारत है, खेती बाड़ी, उद्योग-धंधों और दूसरे तमाम ज़रिये इसके बाद हैं। तिजारत अगर सही तरीक़े से हो यानी माल जमा करने, सट्टेबाज़ी, खुदगर्ज़ी और बेईमानी वग़ैरा से पाक हो तो खेती और उद्योग-धंधों की पैदावार भी मुल्क की खुशहाली में बढ़ोतरी करती है। लेकिन अगर तिजारत सही तरीक़े पर न हो तो उसका असर कमाई के दूसरे ज़रियों पर भी पड़ता है। चीज़ों की कमी और महंगाई मुल्क की मईशत (अर्थव्यवस्था) को तबाह करती है और आम बदहाली फैल जाती है। तिजारत की इसी अहमियत को सामने रखते हुये नबी करीम (स.अ.व.) का फ़रमान है कि इन्सानों को रोज़ी का ज़रिया 9/10 हिस्सा तिजारत में है, बाक़ी 1/10 हिस्सा तिजारत के अलावा दूसरे कमाई के तरीक़ों से हासिल होता है। इस्लाम ने ताजिरों की इस्लाह के लिये जो हिदायतें दी हैं वे अख़लाक़ी और क़ानूनी दोनों क़िस्म की हैं। जो बात ईमान, अक़ीदे और आम इन्सानी क़द्रों के ख़िलाफ़ होगी वह अख़लाक़न भी नापसन्दीदा होगी और आख़िरत में सज़ा के लायक़ होगी और जो बात मुक़र्ररह क़ानून के ख़िलाफ़ की जायेगी उसकी सज़ा दुनिया में मिल जायेगी। इस किताब में क़ानूनी अहकाम बयान किये जा रहे हैं लेकिन चूँकि इनका संबंध ईमान व अक़ीदे से जुड़ा हुआ है इस लिये अख़लाक़ी हिदायतों की तरफ़ भी इशारा कर देना ज़रूरी है।

जैसा कि ऊपर ज़िक्र किया गया है कुरआन ने ग़लत और हराम तरीक़े से कमाने खाने वालों को दोज़ख़ के अज़ाब से डराया है और ऐसे लोगों को ज़ालिम कहा है। इस बारे में नबी सल्लल्लाहु अलैहि

वसल्लम के फ़रमान विस्तार के साथ मौजूद हैं जिन में से कुछ नीचे लिखे जाते हैं -

"ताजिर (व्यापारी) अपनी और आम इन्सानों की इ़ज़्ज़त व आबरू के रक्षक और ज़मीन में अल्लाह के अमानतदार हैं।"

"सच्चा और अमानतदार ताजिर क़यामत के दिन अल्लाह की रहमत के साये में होगा।"

"अल्लाह उस शख़्स पर रहम करेगा जो बेचने ख़रीदने और तक़ाज़ा करने में नर्मदिल और रहीम हो।"

"तमाम ताजिर क़यामत के दिन, उनके अलावा जो ख़ुदा से डरते और लोगों के साथ नेकी व नर्मी से पेश आते रहे, गुनहगार उठेंगे।" यानी जिन्होंने ऐसा व्यवहार अपनाया कि वे लोगों के लिये तकलीफ़ व ज़हमत का सबब बने, गुनहगार क़रार पायेंगे।

"झूठ बोल कर या धोका दे कर जो तिजारत की जाती है वह ज़ाहिर में तो फ़ायदा देने वाली नज़र आती है मगर नतीजे में नुक़सान का सबब होती है।"

"तिजारत आपस की रज़ामंदी से ही सही हो सकती है।"

इस्लाम ने इन्हीं अख़लाक़ी शिक्षाओं की बुनियाद पर तिजारत की पूरी इमारत खड़ी की है। यही वह साफ़ सुथरा तरीक़ा है जो इन्सानों की भलाई और ख़ुशहाली का है दुनिया में भी और आख़िरत में भी। इमाम अबू हनीफ़ा के मशहूर शागिर्द इमाम मुहम्मद (रह०) से किसी ने कहा कि आप ज़ुहद व तक़वा के बारे में कोई किताब क्यों नहीं लिख देते, इस पर उन्होंने जवाब दिया "मैंने ख़रीदने और बेचने के सिलसिले में एक किताब लिख दी है" जिसमें रोज़ी हासिल करने के हलाल ज़रियों के अपनाने और हराम तरीक़ों से बचने का ज़िक्र है। ज़ुहद व तक़वा इसी को कहते हैं।

तिजारत या बैअ की परिभाषाः बैअ या बैअ व शिरा ख़रीदने और बेचने के लिये बोला जाता है। इसी के लिये इस्लामी शरीअत में तिजारत का शब्द भी इस्तेमाल हुआ है जिस का मतलब है फ़ायदे के लिये एक चीज़ दूसरी चीज़ के मुक़ाबले में देना या लेना। लेकिन इस्लामी शरीअत में ऐसी पसन्दीदा चीज़ों को जो ग़लत और हराम न हों आपसी रज़ामन्दी के साथ आपस में बदल लेने या बेचने और ख़रीदने का नाम तिजारत है। जो तिजारत ग़लत या हराम चीज़ों में या ऐसे ज़रियों से जो हलाल न हों, की जायेगी ग़लत और हराम क़रार पायेगी चाहे उसमें ज़ाहिर में फ़ायदा ही क्यों न नज़र आता हो। हलाल चीज़ों और हलाल ज़रियों से की गई तिजारत भी ग़लत समझी जायेगी अगर आपसी रज़ामन्दी साबित न हो। इस लिये तिजारत का ग़लत और हराम न होना और आपसी रज़ामन्दी से होना लाज़िम है।

बातिल और फ़ासिद की परिभाषाः जो चीज़ें इस्लाम ने बिल्कुल हराम क़रार दी हैं जैसे शराब, सुअर, कुत्ता, मुर्दार का गोश्त और उसकी चर्बी, नाचने गाने के सामान वग़ैरा और जिन ज़रियों से कमाई करना हराम ठहराया है, जैसे सूद और जुए की तमाम शक्लें, तो ऐसी चीज़ों की और ऐसे ज़रियों से हर तिजारत बातिल होगी। यही हाल उन चीज़ों के ख़रीदने और बेचने का है जो न किसी के क़ब्ज़े में आई हों और न अभी उनका वजूद हुआ हो जैसे ग़ल्ला जो पेड़ों की बालियों में हो। फ़ासिद तिजारत की मिसाल यह है कि माल बाज़ार में आया न हो और ताजिर उसका ग़ायबाना लेन देन शुरू कर दें।

तराज़ी की परिभाषाः बेचने वाले और ख़रीदने वाले दोनों की रज़ामन्दी को तराज़ी कहते हैं। इस शर्त का मक़सद यह है कि बेचने वाले और ख़रीदने वाले में कोई इख़्तिलाफ़ (मतभेद) न हो। न किसी पर ज़ुल्म हो न किसी का माल नाहक़ लिया जाये। ऐसी तिजारत जिस में कुछ लोगों का नफ़ा मुक़र्रर हो और कुछ का मुक़र्रर न हो सही न होगी। वह तिजारत भी सही न होगी जिसमें आम आदमी

हालात और ज़रूरियात से मजबूर हो कर नापसंदीदगी के साथ चीज़ ख़रीदे, जैसे माल जमा करने और सट्टेबाज़ी की वजह से चीज़ों की कमी और मँहगाई हो जाये। इसी तरह अगर कोई ताजिर झूठ बोल कर ज़्यादा दाम ले ले तो ज़ाहिर में ख़रीदार ख़ुशी से ख़रीद रहा है मगर हक़ीक़त यह नहीं है, क्योंकि यह जानने पर कि झूठ बोल कर दाम लिये गये वह बहुत ही नाराज़ होगा। गर्ज़ यह कि धोका, फ़रेब, झूठ, और बेजा दबाव के जितने कारोबार हैं सब तराज़ी न होने में शामिल हैं।

तिजारत की हैसियत: तिजारत एक मुआहदा है जो ख़रीदने वाले और बेचने वाले के बीच तै पाता है और दोनों उसके पाबन्द होते हैं। जिस तरह कोई मुआहदा धोका फ़रेब के साथ और फ़रीकों (पक्षों) की रज़ामन्दी के बग़ैर मुकम्मल नहीं हो सकता इसी तरह ख़रीदने और बेचने के मुआहदे में भी अगर धोका फ़रेब हो या रज़ामन्दी न हो तो वह भी मुकम्मल और सही न होगा।

ख़रीद, फ़रोख़्त: कोई चीज़ भी बेची या मोल ली जाये तो छः बातें उस काम के पूरे होने के लिये ज़रूरी हैं –

(1) बेचने वाला (2) ख़रीदने वाला (3) चीज़ जो बेची जा रही है (4) रक़म या माल जो चीज़ के बदले में दी जाये (5) ईजाब और (6) क़ुबूल – इन्हीं को बैअ के अरकान कहते हैं। ख़रीद व फ़रोख़्त का तरीक़ा यह है कि ख़रीदार उस चीज़ को अच्छी तरह से देख ले जिसे वह ख़रीद रहा है और बेचने वाला क़ीमत को अच्छी तरह तै कर ले और फिर ज़ुबान से इक़रार किया जाये यानी बेचने वाला अपनी चीज़ की क़ीमत बता दे और ख़रीदने वाला उसे देख कर हाथ में ले कर कह दे कि मुझे मंज़ूर है, या ख़रीदार किसी चीज़ की क़ीमत ख़ुद लगा दे और कहे कि मैं यह चीज़ इस क़ीमत में लूँगा और बेचने वाला कहे कि अच्छा क़ीमत लाइये, दोनों सूरतों में बैअ सही होगी, और इस ईजाब व क़बूल के बाद ख़रीदार को

उस चीज़ का ख़रीदना और दुकानदार को बेचना ज़रूरी है। अगर उन में कोई इन्कार करेगा तो क़ानूनी तौर पर उनको अपना क़ौल व क़रार पूरा करने पर मजबूर किया जायेगा। इस क़ौल व क़रार को शरीअत में ईजाब व क़बूल कहते हैं। इस की शर्त यह है कि ईजाब क़ुबूल के मुवाफ़िक़ हो यानी चीज़ की मात्रा उसका गुण क़ीमत की शक्ल (नक़द या जिन्स) का एक जैसा इज़हार हो और हालत और वक़्त भी एक हो। इस लिये जब बायअ ने कहा कि मैंने एक घर एक हज़ार में बेचा और ख़रीदने वाले ने कहा कि मैंने यह घर पाँच सौ में लिया तो बैअ नहीं हुई। इसी तरह अगर उस ने कहा कि मैंने एक हज़ार चाँदी के रूपयों में बेचा और दूसरे ने कहा कि मैं ने एक हज़ार रूपयों के बदले में लिया तब भी बैअ नहीं होगी, जब तक कि एक हज़ार के नोट एक हज़ार चाँदी के रूपयों के बराबर न हों। यह भी शर्त है कि यह बात चीत एक ही बैठक में तै पा जाये जब तक ख़रीद व फ़रोख़्त की बातचीत का सिलसिला जारी हो उस वक़्त तक दोनों को सौदा ख़त्म करने का इख़्तियार है, लेकिन अगर मुआमला तै हो गया तो फिर किसी को इख़्तियार नहीं है। हाँ बातचीत के दौरान दूसरा शख़्स उस जगह से उठ गया या किसी दूसरे काम में इस तरह लग गया जिससे ज़ाहिर हो सौदा करना नहीं चाहता तो मुआमला ख़त्म समझा जायेगा। हनफ़ी और मालिकी फ़ुक़हा का यही मसलक है। इमाम शाफ़ई और इमाम अहमद बिन हम्बल (रह०) की राय यह है कि जहाँ बातचीत हो रही हो जब तक वहाँ से चले न जायें उस वक़्त तक ईजाब व क़ुबूल का इख़्तियार बाक़ी रहेगा चाहे बातचीत का सिलसिला टूट क्यों न गया हो। सिर्फ़ उठ खड़े होने से यह नहीं समझा जायेगा कि सौदा करना नहीं चाहते। इसे शरीअत की ज़बान में ख़यारे मजलिस और ख़यारे क़ुबूल कहते हैं। बेहतर यही है कि जब बातचीत से सौदा हो जाये तो उसे उसी वक़्त तै कर दिया जाये।

जिस तरह ज़ुबान से रज़ामंदी का इज़हार होता है उसी तरह तहरीर से भी होता है, अगर वह ऐसी क़ाबिले इतमीनान शक्ल में लिखी

जाये कि फिर पक्षों में इख़्तिलाफ़ न हो।

बैअे तआती: ज़बान से क़ौल व क़रार की जगह अगर अमल से बायअ व मुशतरी की रज़ामंदी ज़ाहिर होती हो जैसे, जिन चीज़ों की क़ीमत बाज़ार में मुक़र्रर है जैसे कुछ क़िस्म के साबुन या पालिश की डिबिया तो सिर्फ़ उसकी क़ीमत दे देना ही काफ़ी है, किसी चीज़ की क़ीमत का मुक़र्रर होना और ख़रीदार को उसको दे देना इक़रार व रज़ामंदी समझा जायेगा। इसी तरह कोई चीज़ अगर किसी दुकान से लेकर यह कहा कि इसकी इतनी क़ीमत ले लीजिये और दुकानदार ने वह ले ली तो यह भी रज़ामंदी हुई और बैअ हो जोयेगी या दुकानदार ने किसी तरकारी की ढेरियाँ बना रखी हों और एक ढेरी दस पैसे में बिक रही हो, कोई शख़्स दस पैसे दे कर एक ढेरी उठा ले तो अगरचे ज़ुबान से दोनों ने कुछ न कहा फिर भी बैअ हो जायेगी।

सौदे और क़ीमत का बयान: बिकने वाली चीज़ मबीअ और उस की क़ीमत को समन कहते हैं। मबीअ के लिये कुछ बातों का होना और कुछ बातों का न होना ज़रूरी है। मबीअ (वह चीज़ जो बेची जाये) सामने मौजूद होना चाहिये, अगर मौजूद न हो तो उस का बेचना सही न होगा, जैसे किसी ने हिन्दुस्तान में बैठे हुये अमरीका में ख़रीदे गये कपड़े का सौदा किया तो सही न होगा। हाँ अगर उसे इस शर्त पर बेचा जाये कि ख़रीदार देखने के बाद आख़िरी फ़ैसला करेगा तो इस की इजाज़त है या उस माल का नमूना सामने हो और उस के मुताबिक़ माल देने की शर्त कर ली जाये तो मुआमला किया जा सकता है, इसी तरह जो चीज़ अभी वजूद में न आई हो जैसे वह बाग़ जिसमें अभी फल नहीं आया या जानवर का बच्चा जो अभी पेट में है तो ऐसे फल और बच्चे की ख़रीद व फ़रोख़्त नाजाइज़ होगी। इसी तरह वह चीज़ जो मौजूद थी मगर कहीं खो गई तो उसे नहीं बेचा जा सकता।

मबीअ या तो बेचने वाले की मिल्क हो या मालिक ने उस को बेचने की इजाज़त दी हो, तभी उस को बेचा जा सकेगा। तालाब या दरिया का पानी या उसकी मछलियाँ, आसमान में उड़ते हुये कबूतर जंगल की लकड़ियाँ या उस में रहने वाले जानवर और मैदान की घास, ये ऐसी चीज़ें हैं जो इस्लाम में किसी की मिल्क नहीं हैं। इस लिये उनको बेचने का हक़ किसी को नहीं है चाहे वे ज़ाहिर में किसी की मिलकियत समझी जाती रही हों। नबी करीम (स.अ.व.) ने फ़रमाया है कि पानी, घास और आग तमाम इन्सानों की मुश्तरक (सही) सरमाया हैं। इसी तरह अगर कोई जानवर ग़ायब हो गया और उसे बेच दिया गया या जंगल के जानवरों को बेच दिया गया तो बैअ बातिल होगी।

नापाक चीज़ या नापाक करने वाली चीज़ की बैअ सही नहीं जैसे शराब और सुअर। इसी तरह उन चीज़ों की बैअ भी सही नहीं जिनसे शरई तौरपर कोई फ़ायदा नहीं उठाया जा सकता जैसे ज़मीन के वे कीड़े जिनसे कोई फ़ायदा न हो।

दरिया की मछली और घास वग़ैरा की ख़रीद व फ़रोख़्तः जंगल की लकड़ी घास और दरिया की मछली और उन जैसी तमाम चीज़ें उस वक़्त तक बिक सकती हैं जब उन पर मेहनत या रूपया ख़र्च किया गया हो। जैसे कोई शख़्स मेहनत कर के जंगल से लकड़ी काट कर लाया या पैसा ख़र्च कर के और मेहनत कर के घास लगाई या दरिया से मछली पकड़ीं या पकड़ने के लिये कोई उपाय किया तो इन सूरतों में वह इन चीज़ों को बेच सकता है।

अगर किसी शख़्स या हुकूमत ने दरिया पर बांध बनाया या तालाब का पानी रखने के लिये कोई उपाय किया या दरिया से नहर निकाल कर या किसी मशीन के ज़रिये उसका पानी बाहर निकाला तो उस शख़्स या हुकूमत के लिये पानी का बेचना या बेचने की इजाज़त देना जाइज़ है। इसी तरह ज़मीन के अन्दर की मअदनी चीज़ें

जब तक उन्हें निकाल न लिया जाये बेची नहीं जा सकतीं। जैसे लोहा, ताँबा, सोना, चाँदी, गंधक, अबरक, कोयला, पेट्रोल, मिट्टी का तेल वग़ैरा। लेकिन जब इन चीज़ों को मालूम करने और उन्हें निकालने पर मेहनत और दौलत ख़र्च की गई हो तो मेहनत करने वाले और रूपया ख़र्च करने वाले की मिलकियत कुबूल की जा सकती है।

मिलकियत की परिभाषा: किसी चीज़ का मिल्क में आना कई सूरतों से होता है। इब्ने हम्माम ने फ़तहुलक़दीर (जिल्द 5, पेज, 456) में इस का परिचय इस तरह कराया है "मिलकियत उस तसर्रूफ़ पर क़ाबू होने और कुदरत रखने का नाम है जिसका हक़ शुरू में शरीअत ने दिया। फुक़हा ने इसका परिचय और दूसरी तरह से भी कराया है। उन सब की रोशनी में शैख़ मुसतफ़ा ज़रक़ा ने अपनी किताब "अल मदख़लुल फ़िक़ही" में इस तरह से परिचय कराया है, अधिकार की वह ख़ुसूसियत जो किसी शख़्स को शरीअत की इजाज़त से उस वक़्त तक हासिल रहती है जब तक कोई दूसरा मानेअ (रोकने वाला) न हो (अल मदख़लुल फ़िक़ही जिल्द 1 पेज 220) हाजिज़ से मुराद यह है कि उसकी इजाज़त के बग़ैर दूसरा शख़्स उससे फ़ायदा न उठा सके। मानेअ का मतलब है अधिकार से रोकने वाला यानी वह अधिकार के लायक़ और इस्तेमाल के क़ाबिल हो, कोई दूसरा शख़्स उसको अधिकार और इस्तेमाल से रोकने वाला न हो।

मिलकियत की दो क़िस्में हैं (1) मिल्के ऐन यानी असल चीज़ पर अधिकार का इख़्तियार (2) मिल्के मनफ़अत यानी असल चीज़ से हासिल होने वाले मुनाफ़े पर अधिकार का इख़्तियार। हनफ़ी फुक़हा मिल्क और माल में यही फ़र्क़ करते हैं। मिल्क की परिभाषा यह है कि वह चीज़ जिसका आदमी मालिक हो चाहे उस मुतअय्यन (सुनिश्चित) चीज़ का या उस से हासिल होने वाले मुनाफ़े का और माल की परिभाषा है वह चीज़ जिस को ज़रूरत के लिए जमा किया

जा सके। चाहे उसे एक जगह से दूसरी जगह ले जाया जा सके या न ले जाया जा सके, गोया माल सिर्फ़ माद्दी (भौतिक) चीज़ को बोला जा सकता है और मिल्क में माद्दी और ग़ैर माद्दी (यानी नफ़ा हासिल करना) दोनों शामिल हैं।

मिलकियत में आने की सूरत: किसी चीज़ का मालिक होने की चार सूरतें हैं और उन चार ज़रियों से ही कोई शख़्स मालिक बनता है-

(1) **उक़ूद:** यानी दो आदमी आपस में मुआहदा कर के एक दूसरे को अपनी-अपनी चीज़ का मालिक बना दें। इसी की एक क़िस्म उक़ूदे जबरिया है यानी हुकूमत किसी शख़्स को दूसरे शख़्स की चीज़ का मालिक बना दे। मिसाल के तौर पर क़र्ज़ लेने वाले का माल क़र्ज़ देने वाले को दिला देना या नाजइज़ तरीक़े पर जमा किया हुआ माल एहतिकार करने वाले (जमा करने वाले) से ले कर बाज़ार के भाव में बेच देना। शुफ़आ की सूरत में भी पड़ोसी को हक़ दिलाने के लिये यही होता है। इसी तरह आम जनता की भलाई के लिये किसी की मिल्क को हुकूमत अपने क़ब्ज़े में ले कर लगा दे जैसे स्कूल या मस्जिद या रास्ते के लिये कोई ज़मीन किसी की मिल्क से निकाल ली जाये।

(2) **एहराज़ुल मुबाहात:** यानी वे चीज़ें जो पूरे इन्सानी नस्ल का साझा सरमाया हों और किसी एक शख़्स की मिलकियत न हों उन पर अगर कोई अपनी मेहनत और पैसा लगा कर उन्हें हासिल कर ले तो वे चीज़ें उस की मिल्क हो जायेंगी जैसे समुद्र का पानी, मछलियाँ और दूसरी चीज़ें जो समुद्र में होती हैं। जंगल की घास, आसमान में उड़ने वाले पंछी, इन चीज़ों पर किसी का स्थाई क़ब्ज़ा और अधिकार सही नहीं है लेकिन जब मेहनत कर के या पैसा ख़र्च कर के कोई शख़्स उन्हें हासिल कर ले तो यही चीज़ें उसकी मिल्क हो जायेंगी।

(3) **ख़लफ़ियत यानी जानशीनी:** (1) जानशीन और वारिस बन कर मालिक हो जाना (2) नुक़सान का मुआवज़ा और जुर्माना पा कर मालिक हो जाना। मक़तूल (मृतक) के वारिसों को दियत में कोई माल मिले तो वह भी उस के मालिक होंगे।

(4) ऊपर लिखी तीन सूरतों का ज़िक्र आम तौरपर किया जाता है। चौथी सूरत मिलकियत की जिसको फ़ुक़हा ने अलग से बयान नहीं किया है यह है कि जो चीज़ मिलकियत से तबई (भौतिक) तौर पर पैदा हो जैसे पेड़ से फल, जानवरों के बच्चे, बकरी का दूध, भेड़ के बाल यह भी मिलकियत उसी की रहेंगी जो पेड़ों या जानवरों का मालिक होगा।

नम्बर 2 में जो सूरत मिलकियत की बयान की गई उसके अलावा वे चीज़ें किसी की मिल्क न होंगी जिन पर सब इन्सान क़ाबू हासिल न कर सकें। इस लिये समुद्र पर, फ़ज़ा पर या फ़ज़ा की चीज़ों पर मिलकियत का दावा करने वाला तमाम इन्सानों की मुश्तरक (साझे वाली) चीज़ों का हड़प करने वाला समझा जायेगा। मबीअ के बारे में बाक़ी ज़रूरी बातें ये हैं –

मबीअ के तमाम गुण ख़रीदार को बता देना ज़रूरी हैं जैसे गेहूँ अगर बेचा जा रहा है तो उसकी तफ़सील सफ़ेद या लाल, मोटा या पतला और अगर चावल है तो नया या पुराना, मोटा या बारीक। इसी तरह मकान अगर है तो उसकी पूरी कैफ़ियत ऐब और ख़ूबियाँ ज़मीन अगर है तो उसकी ज़रख़ेज़ी की हैसियत, जानवर की ख़ूबियाँ और बुराइयाँ, कपड़ा है तो किस क़िस्म का कपड़ा है और कटा फटा होने की सूरत में उसकी वज़ाहत कर देना चाहिये ताकि ख़रीदने वाले को शिकायत न पैदा हो। मिसाल के तौरपर अगर मकान टपकता है, ज़मीन बंजर है, जानवर मारता है, कपड़ा ज़्यादा दिनों से रखे-रखे कमज़ोर हो गया है या थान के अन्दर कोई हिस्सा कटा या फटा है,

अगर ये बातें ख़रीदने वाले को नहीं बताई गईं तो बैअ फ़ासिद हो जायेगी और ख़रीदने वाले को हक़ होगा कि माल वापस कर दे।

इसी तरह जो गुण बताया गया हो अगर चीज़ उसके ख़िलाफ़ निकली तो भी बैअ फ़ासिद होगी जैसे कपड़े का रंग पक्का बताया लेकिन कच्चा निकला, मोती सच्चे बताये लेकिन झूठे निकले, ज़ेवर सोने का बताया गया लेकिन पानी चढ़ाया हुआ निकला। इन सब सूरतों में बैअ फ़ासिद होगी।

अगर कोई शख़्स यह कहे कि मैं जिन चीज़ों का मालिक हूँ वे सब बेचता हूँ तो भी बैअ सही न होगी, मिलकियत की वज़ाहत होना ज़रूरी है, मजहूल (अस्पष्ट) चीज़ की बैअ फ़ासिद है।

नापाक चीज़ या नापाक करने वाली चीज़ की बैअ सही न होने का ज़िक्र हम कर चुके हैं इसी तरह जो चीज़ें इस्लामी शरीअत में हराम हैं वे शरअन माल क़रार न दी जायेंगी, उनकी ख़रीद व फ़रोख़्त भी नाजाइज़ है। अगर वह किसी ख़ास इन्सानी सिंफ़ के लिये जाइज़ क़रार दी गई हों तभी उनका कारोबार जाइज़ होगा। जैसे सोना, चाँदी और रेशमी कपड़े जो औरतों के लिये जाइज़ मगर मर्दों के लिये हराम हैं।

वे चीज़ें जो बैअ में दाख़िल हो जाती हैं और जो नहीं होतीं: अगर कोई शख़्स मकान बेचे तो उसके दरवाज़े, खिड़कियाँ और उसमें जाने का रास्ता भी बिक गया। इसी तरह बावर्चीख़ाने और पाख़ाने वग़ैरा को भी मकान का हिस्सा ही माना जायेगा। गाय या भैंस जो दूध देने वाली हो या उसके साथ दूध पीता बच्चा हो तो दूध और बच्चा दोनों उसके साथ बिक जायेंगे। हाँ अगर बच्चा दूध न पीता हो तो वह उसमें दाख़िल न होगा। ताला बेचेगा तो चाभी भी उसके साथ बिक जायेगी, अगर ज़मीन बेचेगा तो उस पर उगे हुए पेड़ भी बैअ में दाख़िल समझे जायेंगे।

ख़रीद व फ़रोख़्त का मुआहदा हो जाने के बाद और चीज़ ख़रीदार के क़ब्ज़े में आने से पहले अगर उसमें कुछ बढ़ोतरी हो गई तो वह ख़रीदार का हक़ है। जैसे किसी ने बाग़ ख़रीद लिया लेकिन अभी क़ब्ज़ा नहीं किया था कि फल लगना शुरू हो गया या गाभिन जानवर ख़रीदा और अभी उसे ले नहीं गया था कि उसने बच्चा दे दिया तो यह सब ख़रीदार का हक़ है, बेचने वाले का नहीं है।

अगर किसी ने अपना बाग़ बिल्कुल बेच दिया और पेड़ों पर फल था या अपना खेत बेच डाला जबकि उस पर फ़सल खड़ी थी तो फल और फ़सल बेचने वाले के हैं। ख़रीदने वाले को कोई हक़ नहीं होगा, जब तक मुआमला करते वक़्त यह सराहत न कर दी गई हो कि फल और लगी हुई फ़सल भी बैअ में शामिल है। इसी तरह अगर मकान बेचा तो वे चीज़ें जो मकान का हिस्सा नहीं हैं जैसे तख़्त, पलंग, कुर्सी, मेज़ और घर का दूसरा सामान उन पर ख़रीदार का कोई हक़ नहीं है।

ख़रीद व फ़रोख़्त में जिन बातों की आज़ादी है: बाज़ारों में आम तौर पर तोल कर, नाप कर या गिन कर चीज़ें बेची जाती हैं। बेचने वाले को यह इख़्तियार है कि चाहे उनको तोल कर, नाप कर बेचे या उनके ढेर को (अगर ग़ल्ला और फल हो) अन्दाज़े से बेच दे। गिन कर बेचे या टोकरी में रख कर पूरी टोकरी ही बेच दे लेकिन अगर कोई टोकरी यह कह कर बेची गई कि उसमें इतने फल हैं और इसकी यह क़ीमत है तो अगर गिनने से कम निकला तो ख़रीदार को इख़्तियार होगा चाहे तो ख़रीदे या न ख़रीदे लेकिन अगर बताई हुई तादाद से ज़्यादा हो तो वह बेचने वाले के होंगे।

मबीअ अगर सामने हो जैसे ग़ल्ले तरकारी या फल का ढेर और बेचने वाले ने उसकी तरफ़ इशारा कर के कहा कि यह ढेर मैं इतने रूपये में बेचता हूँ तो जाइज़ है।

पेड़ और पौधे दो क़िस्म के होते हैं। एक वे जिनमें फूल और फल आने का कोई मौसम मुक़र्रर नहीं है, जैसे अमरूद, महुवा। कुछ तरकारियों और फूलों के पौधे। दूसरे वे जिनके फलने का वक़्त मालूम है जैसे आम, बेर ग़ल्ले के पौधे वग़ैरा। पहले ज़िक्र किये हुए पेड़ों में अगर फल आ जायें तो उन्हें बेचा जा सकता है लेकिन दूसरे क़िस्म के पेड़ों में जब आने वाले सब फल ज़ाहिर हो जायें चाहे वे खाने के लायक़ न हों तो उनको बेचा जा सकता है मिसाल के तौर पर जब बेर पेड़ों में चमकने लगें, आम में कैरियाँ आ जायें, गेहूँ में बालियाँ ज़हिर हो जायें तो उन्हें बेचा जा सकता है।

वह ज़मीन जिसमें कई लोगों का हिस्सा हो तो हर हिस्सेदारी को अपना हिस्सा बेचने का हक़ है चाहे वह बाँट दी गई हो या न बाँटी गई हो। दूसरे हिस्सेदारों से इजाज़त ली गई हो या न ली गई हो।

समन का बयान: समन उस चीज़ को कहते हैं जो किसी माल को ख़रीदने के बदले में दी जाये यह कभी नक़द रक़म होती है और कभी चीज़ के बदले में दूसरी चीज़। जैसे एक जानवर के बदले में दूसरा जानवर या एक कपड़े के बदले में दूसरा कपड़ा। इसकी बहुत सी सूरतें ऐसी हैं जिनमें ज़रा सी बेएहतियाती से ख़रीद व फ़रोख़्त के मुआमले में सूद की मिलावट हो जाती है। सूद के बयान में इसको विस्तार के साथ बयान किया जायेगा। यहाँ कुछ बातें इस बारे में लिखी जा रही हैं –

1. समन यानी चीज़ को बेचने की क़ीमत खुल कर बताई जाये। अगर किसी ने मुख़्तसर (संक्षिप्त) बताई तो बैअ फ़ासिद होगी। मिसाल के तौर पर कोई कहे कि इस बैग में या इस हाथ में जितना रूपया है उसके बदले में फ़लाँ चीज़ मोल लेता हूँ तो यह जाइज़ नहीं है। इसी तरह दुकानदार जिससे चीज़ ख़रीदी जा रही है अगर कहे "चीज़ ले जाइये जो मुनासिब दाम होंगे आपसे

ले लिये जायेंगे" या "दाम मैं बाद में बता दूँगा" या "जितना फ़लाँ दे वही आप भी दे दीजियेगा" या "आप जो मुनासिब समझें दे दीजिये" या "फ़लाँ साहिब जो दाम लगा देंगे वही आप को भी देना होंगे।" इन तमाम सूरतों में बैअ फ़ासिद होगी। हाँ क़ीमत बताने और तै करने के बाद अगर कहे कि ले जाइये सोच कर लेने या न लेने का फ़ैसला कीजियेगा फिर अगर सोच कर ख़रीदार ने क़ीमत भिजवा दी तो बैअ होगी।

2. मात्रा या संख्या का बताना उस वक़्त ज़रूरी नहीं है जब ख़रीदी जाने वाली चीज़ और उसकी क़ीमत सामने मौजूद हो। बस इतना कहना काफ़ी है कि सामने रखी हुई रक़म या मौजूद ग़ल्ले के बदले हम यह चीज़ बेचते हैं।

3. अगर ख़रीदते वक़्त क़ीमत न दी जाये मगर बेचने वाले को बता दिया जाये कि हम इतने रूपये में यह चीज़ ख़रीदते हैं और रूपये बाद में देंगे तो यह जाइज़ है।

4. कोई चीज़ ख़रीदी लेकिन क़ीमत देने के लिये जो मुद्दत बताई वह बिल्कुल मुक़र्रर न हो जैसे यह कहे कि बारिश होने तक दे दूँगा तो बैअ फ़ासिद होगी।

5. अगर ख़रीदार कोई चीज़ उधार ख़रीदे और रूपया देने की कोई मुद्दत न बताये तो मुद्दत एक महीना मानी जायेगी, एक महीना होते ही क़ीमत अदा कर देना चाहिये।

6. अगर किसी दुकानदार के यहाँ से सामान आता रहता है और महीने में हिसाब हो जाता है तो यह सूरत उसी वक़्त जाइज़ है जब क़ीमत मुक़र्रर करने में किसी इख़्तिलाफ़ का डर न हो, लेकिन अगर इख़्तिलाफ़ का डर हो तो नाजाइज़ है।

7. जिस मुल्क में जो सिक्का चलता हो, क़ीमत उसी सिक्के में अदा की जायेगी, रूपया चाहे नोट की शक्ल में हो चाहे

रेज़गारी हो। हाँ अगर पहले से तै कर लिया गया हो कि रेज़गारी नहीं ली जायेगी तो उसके लेने से इन्कार किया जा सकता है। अगर किसी मुल्क में कई तरह के सिक्के चलते हों जैसे रियाल, डालर, पोन्ड जिनकी क़ीमतों में फ़र्क़ है तो बैअ करते वक़्त उसको बता देना ज़रूरी है।

8. जो माल उधार बेचा जाये उसमें मुद्दत मुक़र्रर कर के इकट्ठी क़ीमत लेना और क़िस्त मुक़र्रर कर के लेना दोनों सही है मगर मुद्दत ज़रूर मुक़र्रर होना चाहिये।

बैअ का वाकिअ होना (घटित होना): जब बायेअ और मुशतरी, ईजाब व क़बूल के बाद चीज़ और उसकी क़ीमत तै कर लें जैसा कि ऊपर बताया गया तो फिर दोनों में से किसी को इससे इन्कार करने का हक़ नहीं है। बायेअ को बेचना और मुशतरी को ख़रीदना ही पड़ेगा।

मुआमला हो चुकने के बाद बायेअ ने कहा कि मबीअ कल ले लीजियेगा या मुशतरी ने कहा कि मैं कल क़ीमत अदा करूँगा और चीज़ ले जाऊँगा तो यह सही है। तै किये हुये मुआहदे की पाबन्दी दोनों करेंगे। अगर कोई इन्कार करेगा तो वह गुनाहगार होगा यानी दूसरे दिन अगर चीज़ का भाव बढ़ या घट गया हो तो भी ये दोनों उसी मुआहदे के पाबन्द रहेंगे जो तै हो चुका है और इस्लामी हुकूमत क़ानूनी तौर पर उसी को लागू करेगी।

बैअ का फ़स्ख़ करना: ख़रीदार माल ख़रीदने के बाद उसे फेरना चाहे या दुकानदार किसी वजह से वह माल न देना चाहे, ऐसी सूरतों में दोनों को मुआमला फ़स्ख़ (ख़त्म) करने का इख़्तियार है जबकि दोनों इस पर राज़ी हों। रज़ामन्दी की सूरत में ख़रीदार माल वापस कर सकता है और दुकानदार क़ीमत। शरीअत में इसको इक़ाला कहते हैं।

अगर ख़रीदार ने माल का कुछ हिस्सा इस्तेमाल कर लिया हो या दुकानदार ने क़ीमत का कोई हिस्सा ख़र्च कर दिया हो तो भी इस्तेमाल किये हुए हिस्से की क़ीमत निकाल देने के बाद फेरने का

इख़्तियार है जबकि बक़िया क़ीमत लेने पर ख़रीदार राज़ी हो और बाक़ी माल वापस कर लेने पर दुकानदार राज़ी हो। लेकिन अगर उस पर वह राज़ी न हो तो कोई एक दूसरे को माल या क़ीमत वापस लेनें पर मजबूर नहीं कर सकता।

अगर ख़रीदार ने पूरी चीज़ इस्तेमाल कर ली तो अब उसकी वापसी का कोई सवाल ही पैदा नहीं होता चाहे चीज़ पसन्द आई हो या न आई हो, अच्छी रही हो या ख़राब हो गई क्योंकि जब वह चीज़ ही नहीं है तो वापसी भी नहीं हो सकती।

क़ीमत का मुआमला इससे अलग हैं, क्योंकि अगर वह ख़र्च कर दी गई है तो रूपया के बदले दूसरा रूपया दिया जा सकता है। इस लिये अगर बेचने वाला चीज़ को वापस लेने पर राज़ी हो तो क़ीमत के ख़र्च हो जाने का बहाना सही नहीं है। हाँ यह इख़्तियार है कि ख़रीदार की रज़ामन्दी से क़ीमत बाद में अदा करे।

इक़ाला यानी वापसी की शर्तें: (1) मबीअ की वापसी असल क़ीमत से ज़्यादा पर न होनी चाहिये। (2) अगर दुकानदार ने बाज़ार के भाव से क़ीमत ज़्यादा ली है तो उस को वापस करना ज़रूरी है (3) अगर मुशतरी ने उसमें कोई बढ़ोतरी या कमी पैदा कर दी है तो इक़ाला नहीं हो सकता।

मबीअ या समन वापस करने की दूसरी सूरतें: मुआमला तै होने से पहले जो इख़्तियार रद व कुबूल का पक्षों को रहता है उसे ख़यारे मजलिस और ख़यारे कुबूल कहते हैं। मुआमला तै हो जाने के बाद माल को वापस कर के क़ीमत फेर लेने की सात सूरतें हैं - ख़यारे शर्त, ख़यारे वस्फ़, ख़यारे नक़द, ख़यारे तअय्युन, ख़यारे रूयत, ख़यारे ऐब, ख़यारे ग़बन। इन सबका विवरण बयान किया जाता है -

ख़यारे शर्त: ख़रीद व फ़रोख़्त का मुआमला तै करने के बाद ख़रीदार यह शर्त लगा दे कि मैं दो या तीन दिन में बता दूँगा कि मैं

इस को लेता हूँ या नहीं या यह कि मैं इस चीज़ को घर में दिखाने के बाद बताऊँगा, या बायेअ यह शर्त लगा दे कि मैं ख़रीदार की पसन्दीदा चीज़ को बेच डालने का फ़ैसला दो या तीन दिन के बाद करूँगा, तो दोनों को मुआमला तै हो जाने के बाद वापसी का इख़्तियार है, इस को ख़यारे शर्त कहते हैं। इस सिलसिले में कुछ बातों का ध्यान रखना चाहिये -

(1) ख़यारे शर्त की मुद्दत का निर्धारण ज़रूरी है कि कितने दिन में लेने या न लेने का जवाब देगा। अगर वह मुद्दत गुज़र जायेगी तो वापस का इख़्तियार नहीं रहेगा हाँ अगर बायेअ ख़ुशी से वापस कर ले तो जाइज़ है। (2) अगर ख़रीदार ने घर ले जा कर वह चीज़ इस्तेमाल कर ली तो उस की वापसी का इख़्तियार बाक़ी नहीं रहेगा मगर जबकि वह चीज़ ऐसी हो जिस को इस्तेमाल करने के बाद ही फैसला किया जा सकता हो। जैसे घड़ी जिस से सही वक़्त देने का अन्दाज़ा इस्तेमाल कर के ही लगाया जा सकता है, मोटर, साइकल या घोड़ा जिस की रफ़्तार का अन्दाज़ा इस्तेमाल करके ही किया जा सकता है या दूध का जानवर जिस के दूध का अन्दाज़ा दुहने के बाद ही लगाया जा सकता है तो इन सूरतों में मुक़र्ररह मुद्दत के अन्दर इन चीज़ों का इस्तेमाल करने का हक़ है। क्योंकि इन चीज़ों की अच्छाई बुराई बग़ैर इस्तेमाल के नहीं मालूम की जा सकती। लेकिन अगर इस्तेमाल करने से कोई ख़राबी उस चीज़ में हो जाये तो फिर वापसी का हक़ न होगा और ख़रीदार को क़ीमत अदा करना पड़ेगा।

ख़यारे शर्त की मुद्दत के दौरान बायेअ या मुशतरी में से अगर किसी की मौत हो जाये तो उनके वारिसों को उस शर्त के तोड़ने का इख़्तियार नहीं रहेगा। बायेअ की मौत हो जाये तो मुशतरी को वह चीज़ लेना ही पड़ेगी, अगर मुशतरी की मौत हो जाये तो बायेअ को उसकी क़ीमत लेने का हक़ होगा। मुशतरी के वारिसों को चीज़ वापस करने का हक़ नहीं होगा। (हिदाया, बाब ख़यारेशर्त)

अगर ख़यारे शर्त बायेअ की तरफ़ से है तो माल उसी की मिलकियत समझा जायेगा। अगर उस मुद्दत में वह माल मुशतरी से ग़ायब हो गया तो उसे उसकी असल क़ीमत देना होगी। अगर ख़यार मुशतरी की तरफ़ से है और क़ब्ज़े के बाद उस मुद्दत में माल ग़ायब हो गया तो मुशतरी को समन यानी तै की हुई रक़म देनी होगी।

ख़यारे वस्फ़: मबीअ का जो परिचय या उसके जो गुण ख़रीदारी के वक़्त बताये गये हों अगर वह उसके मुताबिक़ नहीं पाई गई तो ख़रीदार को उसकी वापसी का हक़ है जबकि उसने उसको इस्तेमाल न किया हो। इस्तेमाल कर लेने की तफ़सील जो ख़यारे शर्त में बयान की गई है वही यहाँ भी सही होगी, उसी पर क़यास किया जायेगा। एजेन्ट के ज़रिये ख़रीदी हुई चीज़ों को, अगर वे उस नमूने के मुताबिक़ न हों जो एजेन्ट ने दिखाया था, लेकिन अगर वह चीज़ दूसरे के हाथ बेच दी तो उसका हुक्म वही है जो इस्तेमाल कर लिये जाने का है। ख़यारे वस्फ़ की सूरत में अगर ख़रीदार की मृत्यु हो जाये तो उसके वारिसों को वापसी का हक़ बाक़ी रहेगा।

ख़यारे रूयत: बेदेखे अगर कोई शख़्स कोई चीज़ ख़रीद ले तो देखने के बाद उसे ख़रीदने या न ख़रीदने का हक़ बाक़ी रहेगा। ख़यारे रूयत का हक़ बेचने वाले को नहीं होता। जैसे किसी शख़्स ने मालियत की कोई चीज़ या जायदाद किसी दूसरे शहर में हासिल की या विरसे में पाई और उसे देखने से पहले किसी के हाथ बेच दिया तो अब उसको देखने के बाद वापसी का हक़ नहीं चाहे उसमें कितना ही नुक़सान क्यों न हो। यह इस लिये कि चीज़ उसकी मिलकियत में थी और वह उसे देख सकता था, ख़रीदार के विपरीत जिसको ख़रीदने के बाद देखने का इख़्तियार मिला। ख़रीदार अगर किसी दूसरे मुल्क से कोई माल मंगा ले और देखने के बाद पसन्द न आये तो उसे लेने या न लेने का हक़ हासिल होगा और यही हक़ उसे किसी दूसरी जगह मकान ख़रीदने की सूरत में रहेगा।

ख़यारे रूयत के सिलसिले में कुछ बातों का ध्यान ज़रूरी है -

1. किसी चीज़ का नमूना देख लेने के बाद बैअ का मुआमला तै पा गया तो वापसी का हक़ नहीं है। मगर जबकि माल नमूने के मुताबिक़ न हो तो ऐसी सूरत में वापस हो सकती है।

2. जहाँ किसी चीज़ का नमूना देख कर उसी जैसी चीज़ों का अन्दाज़ा न हो सके। जैसे एक बकरी दिखा कर सौ बकरियों का मुआमला करना, एक बैल दिखा कर चार बैलों का मुआमला करना या एक फल दिखा कर पूरे एक गाड़ी फल का मुआमला करना तो इन सब में ख़रीदार को ख़यारे रूयत का हक़ रहेगा क्योंकि इन चीज़ों में यकसानियत (समानता) नहीं होती।

3. खाने पीने वाली चीज़ों के ख़रीदने में देखने के साथ साथ चखने का भी इख़्तियार है जबकि चीज़ ख़राब न हो जाये और बायेअ को ख़बर हो कि चीज़ चखी जायेगी। अगर बायेअ राज़ी हो तो चखने के बाद ख़रीदार उसे वापस कर सकता है लेकिन अगर राज़ी न हो तो चखने का हक़ भी नहीं है और न उस को ख़रीदार मजबूर कर सकता है। कुछ चीज़ें बन्द डिब्बों में होती हैं जैसे जीली वग़ैरा जिन के खुल जाने के बाद क़ीमत घट जाती है और ख़राब हो जाने का भी डर रहता है। लेकिन मामूली फल वग़ैरा चखने में यह बात नहीं है। इस लिये उसे चखने की इजाज़त है। अगर गेहूँ या आटा ख़रीदा और पकाने पर वह ख़राब निकला तो उसे वापस करने का हक़ ख़रीदार को है और जितना इस्तेमाल किया गया है उस की क़ीमत काट लेने का हक़ बायेअ को है।

4. अगर चीज़ को देखने के बाद ख़रीदार ने मुआमला तै किया तो फिर ख़यारे रूयत का हक़ बाक़ी नहीं रहता। हाँ अगर देखने और मुआमला तै करने के बीच की मुद्दत में कोई ख़राबी आ गई जैसे बारिश आ गई या अचानक कोई दुर्घटना पेश आ गई जिस

से माल ख़राब हो गया तो उसको वापस करने का हक़ है।

5. अगर माल को ख़रीदने वाला किसी दूसरे शख़्स को अपना प्रतिनिधि बना कर ख़रीदारी के लिये भेजे और वह माल को देख कर ख़रीद लाये तो असल ख़रीदार को वापसी का हक़ नहीं है। लेकिन अगर उस ने यह सराहत कर दी हो कि मैं इस प्रतिनिधि को सिर्फ़ माल को उठवाने या हिफ़ाज़त के साथ पैक करा देने के लिये भेज रहा हूँ तो असल ख़रीदार को देखने के बाद वापस करने का हक़ बाक़ी रहेगा।

6. अगर ज़्यादा मात्रा में ख़रीदी हुई चीज़ ख़रीदार इस्तेमाल करना या बेचना शुरू कर दे तो फिर वापसी का हक़ नहीं है। हाँ अगर शुरू ही में उसकी ख़राबी मालूम हो गई या उसका थोड़ा सा हिस्सा बेचते ही उसके ख़रीदने वाले ने ख़राबी की शिकायत की तो फिर उसे माल वापस कर देने का हक़ है।

7. अगर कोई अंधा हो और वह अपने हाथ से छू कर, चख कर, सूंघ कर या दूसरे से पूछ कर कोई चीज़ ख़रीद ले तो उसे ख़यारे रूयत का हक़ बाक़ी नहीं रहेगा।

उन तमाम सूरतों में जिन में ख़रीदार को ख़यारे रूयत का हक़ होता है अगर ख़यार की मुद्दत में मुशतरी की मृत्यु हो जाये तो उसके वारिसों को वह हक़ नहीं पहुंचता। मुआमला तै किया हुआ ही समझा जायेगा।

ख़यारे ऐबः ऐब ऐसी ख़ामी, कमी या नुक़सान को कहते हैं जिससे चीज़ की क़ीमत गिर जाती है। ऐबदार चीज़ को बग़ैर उसका ऐब ज़ाहिर किये बेचना ऐसा ही हराम है जैसे ख़राब नोट या खोटा रूपया क़ीमत में देना और ऐसा करने वाला बहुत ज़्यादा गुनहगार होगा और ऐसी ख़रीद व फ़रोख़्त सही नहीं होगी। एक दिन नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम एक ग़ल्ला बेचने वाले के पास तशरीफ़ लाये और ग़ल्ले के ढेर में हाथ डाला तो कुछ नमी महसूस हुई। आप

ने पूछा यह क्या बात है? उसने कहा बारिश से यह ग़ल्ला भीग गया था। आपने फ़रमाया भीगे हुए ग़ल्ले को ऊपर कर दो ताकि लोग धोका न खायें। फिर फ़रमाया, जिसने धाके से कोई चीज़ बेची वह मेरी उम्मत से नहीं है।

इस सिलसिले में कुछ ज़रूरी बातें याद रखने की हैं-

1. बायेअ ने कोई चीज़ उसी क़ीमत पर बेची जिस पर वह सही हालत में बिक सकती थी। अब अगर उसमें ऐब निकला तो ख़रीदार को वापस कर देने का हक़ है। हाँ अगर बायेअ अपनी ख़ुशी से क़ीमत कम कर दे और ख़रीदार उस ऐबदार चीज़ को लेने पर राज़ी हो जाये तो उसका इख़्तियार है।

2. अगर बायेअ ने ऐब ख़ुद बता दिया और उसके बावजूद ख़रीदार ने उसे ख़रीद लिया तो अब उसको वापसी का हक़ नहीं रहा।

3. ऐब या कमी जो बायेअ के दुकान या घर पर पैदा हुई हो उसी चीज़ को वापस करने का हक़ ख़रीदार को होगा। लेकिन अगर ख़रीदार के पास आ कर उसमें कोई ऐब हुआ या कमी हो गई तो अब वापसी का हक़ नहीं है। इसी तरह एक चीज़ जिसमें बायेअ के यहाँ ऐब पैदा हो चुका था, ख़रीदार के यहाँ पहुंच कर दूसरा ऐब पैदा हो गया तो इस सूरत में भी उसको वापसी का हक़ नहीं है। जैसे कपड़ा ख़रीदा वह कुछ कटा हुआ था घर में आने के बाद उस पर पान का रंग पड़ गया, रंग गिर गया या चूहे ने काट लिया तो यह दूसरा ऐब पैदा हो जाने की वजह से वापसी का हक़ नहीं रहा। हाँ पहले ऐब के बाद क़ीमत कम कराने का हक़ है। क़ीमत उस पेशे के माहिर या ख़रीद व फ़रोख़्त करने वालों से मुक़र्रर कराना चाहिये। अगर बायेअ दूसरे ऐब के बावजूद वापस ले ले तो उसकी शराफ़त है मगर ख़रीदार को ऐसी शराफ़त और मुरव्वत से ऐसा फ़ायदा नहीं उठाना चाहिये जिसमें नुक़सान पहुंच रहा हो।

4. बायेअ ने कोई चीज़ यह कह कर बेची कि ज़ाहिरी तौर पर इस में कोई ऐब नहीं है और ख़रीदार ने भी उसे देख भाल कर लिया तो अब ख़यारे ऐब का हक़ बाक़ी नहीं। लेकिन अगर ख़रीदार ने देख भाल कर नहीं लिया तो उसे वापसी का हक़ बाक़ी है।

5. ऐब मालूम होने के बाद तुरन्त चीज़ को वापस कर देना चाहिये और इस्तेमाल नहीं करना चाहिये लेकिन अगर उसके बाद भी उसे इस्तेमाल कर लिया तो फिर वापसी का हक़ नहीं रहा। हाँ जिन चीज़ों का ऐब थोड़ा इस्तेमाल करने के बाद ही मालूम हो सकता है, जैसे जूते को पैर में डाल कर, स्वेटर को पहन कर, घड़ी और क़लम को चला कर, साइकल, मोटर कार या सवारी के जानवर पर सवारी लेकर ही उस की अच्छाई और बुराई का पता चल सकता है तो इन चीज़ों को थोड़ा इस्तेमाल करने के बाद अगर ऐब पाया जाये तो वापसी का हक़ है। लेकिन अगर कई दिन इस्तेमाल कर लिया तो यह हक़ जाता रहा और जिन चीज़ों की ख़राबी और अच्छाई बग़ैर इस्तेमाल के ही मालूम हो जाती है अगर उनको इस्तेमाल कर लिया, कपड़े को रंग लिया, ज़मीन में पेड़ लगा दिया तो ये सब बातें ख़यारे ऐब के हक़ को ख़त्म कर देती हैं।

6. कोई चीज़ बड़ी मात्रा या तादाद में ख़रीद ली जैसे ग़ल्ला या फल फिर देखा कि उस में कुछ ख़राब है और कुछ अच्छा है तो ख़रीदार को यह हक़ नहीं है कि अच्छा रख ले और ख़राब वापस कर दे। बल्कि या तो पूरा ले ले या पूरा वापस कर दे। छाँट कर लेने का हक़ उस वक़्त है जब बेचने वाला उस पर राज़ी हो।

7. ग़ल्ले में अगर थोड़ा गर्द व गुबार हो या किसी दूसरे ग़ल्ले की बहुत मामूली सी मिलावट हो या कुछ कंकरी निकल आयें तो

उस का कोई एतेबार नहीं। आम तौर पर जितना गर्द व ग़ुबार ग़ल्लों में रहा करता है या दूसरे अनाज की मिलावट रहती है तो वह ऐब नहीं माना जायेगा। लेकिन अगर एक मन में तीन चार सेर गर्द व ग़ुबार या मिलावट निकले तो यह ऐब है और वापसी का हक़ है।

इसी तरह एक सेर बादाम या चार दर्जन अंडों में दो चार ख़राब निकल जायें तो उसका एतेबार न होगा, हाँ अगर ज़्यादा ख़राब निकलें तो उनकी क़ीमत ख़रीदार को वापस लेने का हक़ है।

8. ऐसी तरकारियां या फल जिनके अच्छे या ख़राब होने का पता काटने के बाद ही चल सकता है अगर सब बेकार और फेंक देने के क़ाबिल निकलें तो ख़रीदार को क़ीमत वापस लेने का हक़ है। अगर खाने के क़ाबिल न हों मगर किसी दूसरे काम में आ जायें तो उन की क़ीमत कम कराने का हक़ है। मिसाल के तौर पर ख़रबूज़ा या लौकी या ककड़ी ख़रीदी जब काट कर देखा तो खाने के क़ाबिल न पाया। ऐसी सूरत में वापस करने और क़ीमत लौटाने का हक़ है। अगर ख़ुद नहीं खाया और किसी जानवर को खिला दिया तो क़ीमत कम कराने का हक़ है। या अगर दूध साफ़ सुथरे बरतन में लिया और फट गया फिर अगर वह इस्तेमाल के क़ाबिल था तो क़ीमत कम कराई जा सकती है और अगर फेंक देने के क़ाबिल था तो पूरी क़ीमत वापस लेने का हक़ है।

ख़यारे तअय्युन: बायेअ ने कई क़िस्म का माल क़ीमत बता कर दे दिया कि जो इसमें से पसन्द हो ले लीजिये तो बैअ सही होगी और मुक़र्रह मुद्दत के अन्दर मुशतरी को पसन्दीदा चीज़ का निर्धारण कर लेना ज़रूरी होगा।

ख़यारे ग़बन: बायेअ और मुशतरी दोनों में से किसी को बहुत ज़्यादा धोका हो गया हो तो ऐसी सूरत में दोनों को माल या क़ीमत वापस

कर देने का हक़ है। जैसे किसी ने सोने के ज़ेवर ख़रीदे लेकिन वे सोने के न थे बल्कि उन पर सोने का पानी चढ़ाया हुआ था या जो रूपये किसी माल के बदले में दिये गये वे खोटे थे या जाली। दोनों सूरतों में बैअ फ़स्ख़ करने का हक़ दोनों लोगों को है।

ख़यारे नक़द: ख़रीद व फ़रोख़्त का मुआमला तै हो जाये लेकिन क़ीमत अदा न की गई हो तो उसकी दो सूरतें हैं (1) अगर क़ीमत तुरन्त देने का वादा था तो जब तक ख़रीदार क़ीमत अदा न कर दे बायेअ को अपनी चीज़ अपने पास रोके रखने का हक़ है (2) अगर मुआमला उधार तै हुआ था और ख़रीदार माल अपने घर ले गया तो बायेअ को अपनी चीज़ वापस लेने का हक़ नहीं है। अगर ख़रीदार खुद वापस कर दे तो और बात है वर्ना उसकी हैसियत मक़रूज़ (क़र्ज़दार) की होगी और बायेअ क़र्ज़ख़्वाह की हैसियत में होगा और जिस तरह क़र्ज़ लेने वाले से रूपया वसूल किया जाता है उसी तरह वसूल किया जायेगा।

बायेअ और मुशतरी के लिये शर्तें: बायेअ और मुशतरी दोनों का आक़िल और बालिग़ होना ज़रूरी है। अगर कोई एक उन दोनों में से बच्चा है तो बैअ सही नहीं होगी। इसी तरह मजनून और जिसकी अक़्ल में ख़राबी आ गई हो उसकी बैअ भी सही न होगी। हाँ अगर बच्चा समझदार है और जिसके अक़्ल में ख़राबी आ गई है वह ख़रीद व फ़रोख़्त को समझता है और दोनों इस क़ाबिल हैं कि बात-चीत समझ सकें और सही जवाब दे सकें तो ख़रीद व फ़रोख़्त तो सही हो जायेगी मगर उस पर अमल वली (संरक्षक) की इजाज़त से होगा।

दूसरी शर्त यह है कि बायेअ या मुशतरी खुदमुखतार हों उन पर कोई ज़बरदस्ती न की गई हो या कोई दबाव न डाला गया हो क्योंकि ज़बरदस्ती की सूरत में तराज़ी बाक़ी नहीं रहती। इस लिये ख़रीद व फ़रोख़्त का मुआमला हो ही नहीं सकता।

ख़रीदार क़ीमत अदा करने से पहले मबीअ पर क़ब्ज़ा करने का हक़ नहीं रखता। क़ीमत देने के बाद ही माल की माँग कर सकता है।

अगर कोई ज़मीन बेची जिसमें फ़सल खड़ी है या बाग़ बेचा जिसमें फल लगा हुआ है तो ज़मीन को ख़ाली कर देना और फलों को तोड़ लेना ज़रूरी है वर्ना बैअ सही न होगी, मगर जबकि मुशतरी फ़सल कट जाने या फल पक जाने तक की इजाज़त दे दे। लेकिन बैअ के वक़्त यह शर्त न होना चाहिये वर्ना बैअ फ़ासिद होगी। बायेअ मुशतरी को मबीअ पर क़ब्ज़ा दिला सकता हो। यानी चीज़ न तो कहीं रहन (गिरवी) हो न उसमें कोई दूसरा शरीक हो। रहन होना या किसी दूसरे की शिर्कत होना दोनों क़ब्ज़ा दिलाने में निरोधक और आड़ हैं। बेची हुई चीज़ ख़रीदार के हवाले इस तरह की जाये कि क़ब्ज़ा करने में कोई रूकावट न हो।

किसी हिन्दुस्तानी ताजिर ने मिस्र या अमरीका में अपना कोई माल बेचा और ख़रीदार के हवाले कर दिया तो बैअ हो गई। अब अगर ख़रीदार हिन्दुस्तान का रहने वाला हो या चीन व जापान का तो बायेअ पर यह ज़िम्मेदारी नहीं है कि वह माल को चीन जापान या हिन्दुस्तान में ला कर उसके पास पहुंचाये। यह ख़रीदार की ज़िम्मेदारी है कि जब उसने रज़ामन्दी से ख़रीद लिया है तो वह जहाँ चाहे ले जाये। लेकिन अगर ख़रीदार ने यह शर्त लगा दी थी कि यह माल हम फ़लाँ जगह लेंगे तो बायेअ को शर्त के मुताबिक़ अमल करना लाज़िम हो जायेगा।

अगर बायेअ ने ऐसा माल बेचा जो सामने न था और यह भी नहीं बताया कि माल कहाँ रखा है। मुआमला तै हो जाने के बाद ख़रीदार को मालूम हुआ कि माल ऐसी जगह है जहाँ से लाना ख़तरे का सबब है या बहुत ख़र्च आयेगा तो वह बैअ को ख़त्म कर सकता है।

अगर मुआमला तै हो गया लेकिन क़ीमत ख़रीदार ने अभी अदा नहीं की तो जब तक बायेअ इजाज़त न दे उसको चीज़ उठाने का हक़ नहीं है। लेकिन अगर उठा लिया और चीज़ में कोई ख़राबी आ गई तो अब उसके क़ब्ज़े को मान लिया जायेगा और उसको क़ीमत देना पड़ेगी। लेकिन अगर ख़रीदार के हाथ में आने से पहले चीज़ में ख़राबी आ गई तो उसका नुक़सान बायेअ को बर्दाश्त करना होगा। जैसे शीशे या चीनी के बरतन ख़रीदने के बाद क़ीमत अदा करने से पहले अगर कोई बरतन टूट जाये तो ख़रीदार पर कोई ज़िम्मेदारी नहीं है। लेकिन अगर उसने पसन्द कर के उठा लिया या अपने सामने रख लिया और फिर वह किसी तरह गिर कर टूट गया तो ख़रीदार पर क़ीमत अदा करना ज़रूरी हो गया।

मुआमला तै हो जाने के बाद अगर क़ीमत अदा करने से पहले मुशतरी को या चीज़ हवाले करने से पहले बायेअ को मौत आ गई तो बायेअ को क़ीमत लेने का और मुशतरी को मबीअ ले लेने का हक़ होगा। मसलन ख़रीदार ने किसी दुकान से 200 रूपये का ग़ल्ला ख़रीद लिया लेकिन क़ीमत अदा करने से पहले मौत आ गई तो बायेअ को क़ीमत लेने का हक़ है, मरने वाले के क़र्ज़ख़्वाह क़ीमत की अदायगी को रोक नहीं सकते। इसी तरह अगर बायेअ ने क़ीमत तो ले ली थी लेकिन ग़ल्ला हवाले नहीं किया था कि उस की मौत हो गई तो ख़रीदार को ग़ल्ला उठा लेने का हक़ है। अगर कोई क़र्ज़ख़्वाह उस ग़ल्ले को अपने क़र्ज़ में लेना चाहता है तो उसे हक़ नहीं कि वह मुशतरी को ग़ल्ला उठाने से रोक दे।

अगर बायेअ ने कोई चीज़ मुशतरी को ख़ुशी के साथ ज़्यादा दे दी या मुशतरी ने क़ीमत कुछ ज़्यादा दे दी तो मुआमला तै हो जाने के बाद किसी को वापसी पर मजबूर नहीं किया जा सकता। मसलन एक दुकानदार चार आने में दो दर्जन बटन बेचता है और उसने

किसी को अपनी ख़ुशी या रिआयत से ढाई दर्जन चार आने में दे दिये तो अब उसको वापस लेने का हक़ नहीं है। इसी तरह अगर ख़रीदार ने ख़ुशी के साथ चार आने से बढ़ा कर साढ़े चार आने क़ीमत दे दी तो उसको भी वापसी का हक़ नहीं है, हाँ अगर ग़लती से दोनों ने ज़्यादा दे दिया तो वापसी का हक़ बाक़ी रहेगा।

क़ीमत की अदायगी और मबीअ के ख़र्च: हाथों हाथ ख़रीद व फ़रोख़्त में आने वाली और बेचने वाली छोटी छोटी चीज़ों में कुछ ख़र्च नहीं होता। लेकिन कोई बड़ी या ज़्यादा चीज़ ख़रीदी जाये या कोई भी चीज़ बाहर से मंगाई जाये या आदान-प्रदान किया जाये तो डाक या उसको उठाने का भी ख़र्च होता है। इनके ख़र्च के बारे में इस्लामी शरीअत ने ये हिदायतें दी हैं -

1. क़ीमत की अदायगी के सिलसिले में जो ख़र्च होंगे वे ख़रीदार के ज़िम्मे होंगे जैसे मनीआर्डर और बीमा वग़ैरा का ख़र्च।
2. बैअनामा लिखने और दस्तावेज़ की रजिस्ट्री वग़ैरा के ख़र्च ख़रीदार को देना पड़ेंगे।
3. मबीअ यानी बेची हुई चीज़ ख़रीदार के हवाले करने में जो ख़र्च तोलने नापने वग़ैरा पर आयेगा वह बायेअ के ज़िम्मे होगा। जायदाद बेचने की सूरत में उसके काग़ज़ की तकमील व तहसील का ख़र्च भी बायेअ की ज़िम्मे होगा।
4. अगर कोई चीज़ अन्दाज़ से बेच दी गई जैसे खड़ी फ़सल या बाग़ की पैदावार तो खेत काटने या बाग़ के फल तुड़वाने की ज़िम्मेदारी बायेअ पर नहीं मुशतरी पर होगी।
5. जो चीज़ डाकख़ाने या रेल या किसी दूसरी सवारी या मज़दूर के ज़रिये भेजी जाये तो उसके तमाम ख़र्च ख़रीदार को बर्दाश्त करना पड़ेंगे। अगर बायेअ ख़ुद ख़ुशी के साथ बर्दाश्त कर ले तो यह उसका एहसान होगा, ख़रीदार को माँगने का हक़ नहीं

है। अगर वह ऐसी शर्त लगायेगा तो बैअ फ़ासिद होगी।

6. एक चीज़ का दूसरी चीज़ से बदलना हो जैसे हिन्दुस्तान की हुकूमत या उसका कोई व्यापारी अमरीका से गल्ला मंगाये और उसके बदले में पटसन, चमड़ा या कोई और जिन्स दे तो दोनों को अपनी अपनी चीज़ें मंगाने और रास्ते के ख़र्च बर्दाश्त करने पड़ेंगे। हाँ अगर दोनों में तै हो जाये कि फ़लाँ जगह तक पहुंचा देंगे तो दोनों को अपनी अपनी चीज़ें पहुंचाने का ख़र्च बर्दाश्त करना पड़ेगा।

बैअ के जाइज़ तरीक़े: आम तौर पर तीन तरीक़ों से चीज़ें बेची जाती हैं और इस्लामी शरीअत ने तीनों तरीक़ों को जाइज़ क़रार दिया है।

1. मबीअ और उसकी क़ीमत का बदलना हाथों हाथ हो, बेचने वाले को क़ीमत मिल जाये और ख़रीदने वाले को माल। यह तरीक़ा सबसे बेहतर है और ज़्यादातर इसी तरीक़े को ऊपर बयान किया गया है।
2. मबीअ यानी बेची जाने वाली चीज़ तुरन्त दे दी जाये और क़ीमत उधार कर ली जाये। इस बैअ को बैअे नसीया कहा जाता है जिसकी इजाज़त ख़रीदार की सुहूलत को सामने रखते हुये दी गई है।
3. क़ीमत पेशगी वसूल कर ली जाये मगर चीज़ बाद में दी जाये। इस बैअ को बैअे सलम या बैअे सलफ़ कहते हैं। इस में बेचने वाले की सुहूलत का और ख़रीदार के फ़ायदे का लिहाज़ रखा गया है।

इन तीनों तरीक़ों से हाथों हाथ लेन देन का ज़िक्र ऊपर के बयान में आ चुका है। बैअे नसीया और बैअे सलम के बारे में भी कुछ का ज़िक्र ऊपर किया जा चुका है कुछ बातें और बयान की जाती हैं --

बैअे नसीया: यानी बेची गई चीज़ ख़रीदार के हवाले कर दी जाये और क़ीमत उसके कुछ दिन बाद ली जाये। क़ीमत के बयान में कुछ बातें कही जा चुकी हैं। कुछ और बातें इससे संबंधित ये हैं -

1. उधार मुआमला करने की सूरत में बायेअ की रज़ामंदी लाज़िमी है, बग़ैर रज़ामंदी के क़ीमत उधार लगाना जाइज़ नहीं है।

2. क़ीमत अदा करने की मुद्दत मुक़र्रर होना चाहिये यानी यह कि फ़लाँ महीने की फ़लाँ तारीख़ या दिन को क़ीमत दी जायेगी। जैसे ईद के दिन या ईदुल-अज़्हा के दिन तो भी जाइज़ है। मगर यह कहना सही नहीं है कि सर्दी के मौसम में या गर्मी के मौसम में या बारिश तक, क्योंकि इन में इख़्तिलाफ़ (मतभेद) पैदा हो सकता है। इसी तरह यह कहना भी सही नहीं कि "फिर देंगे" या जब पैसा आयेगा तो देंगे।

3. उधार बेच देने के बाद बेचने वाले को वह बेची हुई चीज़ वापस लेने का हक़ न होगा।

4. उधार की मुद्दत बढ़ाने का इख़्तियार बायेअ को है।

5. अगर उधार की मुद्दत मुक़र्रर नहीं की तो यह मुद्दत ज़्यादा से ज़्यादा एक महीना समझी जायेगी। एक महीने के बाद ख़रीदार या तुरन्त क़ीमत दे या बेचने वाले से कुछ और मुहलत माँगे। अगर मुहलत न दी तो ख़रीदार को उस मुद्दत के ख़त्म होने तक क़ीमत ज़रूरी देनी होगी।

6. उधार की मुद्दत उस वक़्त से गिनी जायेगी जिस वक़्त बेचने वाले ने चीज़ ख़रीदार के हवाले कर दी। अगर बायेअ ने मुआमला तै करने के एक महीने के बाद या दस दिन बाद चीज़ दी तो यह मुद्दत भी एक महीने या दस दिन बाद से शुरू होगी। और अगर बायेअ ने चीज़ हवाले कर दी मगर मुशतरी उस वक़्त उसके पास से नहीं ले गया तो जिस वक़्त बायेअ ने

हवाले किया उसी वक़्त से उधार की मुद्दत गिनी जायेगी। ख़रीदार के ले जाने का एतेबार नहीं किया जायेगा।

7. अगर बायेअ क़ीमत के अदा करने की क़िस्त मुक़र्रर कर दे तो फिर पूरी क़ीमत इकट्ठा माँगने का हक़ उसको नहीं है।
8. बायेअ को इख़्तियार है कि नक़द बेचने की सूरत में चीज़ की क़ीमत कुछ सस्ती और उधार की सूरत में कुछ मंहगी कर दे। मगर ख़रीदार को यह मालूम होना और उसको मंज़ूर कर लेना भी ज़रूरी है।

उधार ख़रीदने और बेचने के सिलसिले में नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने जो हिदायतों ख़रीदार और बायेअ को दी हैं उनका ज़रूरी ख़याल रखना चाहिये।

ख़रीदार को हिदायत है कि जब क़ीमत उसके पास हो जाये तो टालना और बायेअ को परेशान करना हराम है। इस्लामी हुकूमत ऐसे शख़्स को सज़ा देगी जो ताक़त के बावजूद बक़ाया रक़म अदा न करे। आप (सल्लल्लाहु) ने फ़रमाया है "देने की क़ुदरत रखने वाले का टाल मटोल ज़ुल्म है" आप ने फ़रमाया "सब से अच्छा वह शख़्स है जो किसी का बक़ाया अच्छे तरीक़े पर अदा कर दे।"

बायेअ के बारे में हिदायत है कि मुद्दत पूरी हो जाने के बाद माँगने और सख़्ती के साथ क़ीमत वसूल करने का हक़ रखता है। एक बार खुद नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के ज़िम्मे किसी की कोई रक़म बाक़ी थी उस ने कुछ सख़्ती की। कुछ सहाबा को यह बहुत बुरा लगा, और उन्हों ने उसे सख़्ती से झिड़कने का इरादा किया तो आप (स.अ.व.) ने मना फ़रमाया, और फ़रमाया "हक़दार को कहने सुनने की आज़ादी है" लेकिन इस क़ानूनी हक़ के इस्तेमाल में इस बात का ख़याल भी रहना चाहिये कि हो सकता है कुछ ऐसी मजबूरी हो कि यह शख़्स न दे सकता हो। इसी वजह से आप ने फ़रमाया "जो शख़्स किसी तंगदस्त को अदायगी की मुहलत दे या

उस को माफ़ कर दे तो ख़ुदा तआला क़ियामत की परेशानियों से उसको निजात देगा।

बैअे सलमः यानी बायेअ मुशतरी से क़ीमत पहले ले ले या मुशतरी ख़ुद पहले दे दे और चीज़ बाद में देने का वादा हो तो इस तरह से ख़रीदना बेचना जाइज़ है। यह इजाज़त बायेअ और मुशतरी दोनों की सुहूलत के लिये दी गई है। क्योंकि इस की ज़रूरत कभी बेचने वाले को और कभी ख़रीदने वाले को पड़ती रहती है। हर उस चीज़ की बैअे सलम जाइज़ है जिसका गुण ज़ुबान से बयान किया जा सके या लिखा जा सके और उसकी मात्रा का अंदाज़ा किया जा सके ताकि बेचने वाले और ख़रीदने वाले के बीच कोई झगड़ा न पैदा हो। बैअे सलम के सही होने की कुछ शर्तें हैं, अगर कोई शर्त उनमें से न पाई जाये तो बैअ सही नहीं होगी।

पहली शर्तः चीज़ की पूरी तफ़सील मालूम होना है। जैसे अगर ग़ल्ला लेना है तो उसकी नौईयत और क़िस्म, उसमें गर्द व गुबार न होना, दूसरे ग़ल्लों की मिलावट न होना, सूखा होना वग़ैरा या अगर कपड़ा लेना है तो उसका नाम, सूती या रेशमी, रंग और अर्ज़ वग़ैरा, इसी तरह घड़ी क़लम या साइकल वग़ैरा उद्योग धंधों में कारख़ाना और माडल वग़ैरा की तफ़सील मालूम होना ज़रूरी है। बेहतर यह है कि नमूना दिखा दिया जाये। यह कहना कि चीज़ कैसी भी हो सही नहीं है, इस में झगड़े का डर है जिसकी वजह से बैअ सही न होगी।

दूसरी शर्तः भाव और क़ीमत का तै होना है। जैसे ग़ल्ले की सूरत में पहले से वाज़ेह होना चाहिये कि किस भाव से कितने रूपये का लेना है। यह कहना कि फ़सल के वक़्त जो भाव होगा ले लेना सही नहीं होगा। या किसी कारख़ाने में तैयार होने वाली चीज़ को मंगा देने के लिये उसकी क़ीमत की जानकारी होनी ज़रूरी है तभी रक़म देना जाइज़ होगा। यह कहना सही न होगा कि जितने में पड़ेगी ले लीजियेगा। रेट और क़ीमत दोनों की बात चीत हो जानी चाहिये

ताकि इख़्तिलाफ़ न हो। हाँ मंगाने के ख़र्च के बारे में यह कहा जा सकता है कि जितना ख़र्च हो वह दे दीजियेगा। क्योंकि इसमें इख़्तिलाफ़ की गुंजाइश नहीं और यह ख़रीदार के ज़िम्मे है।

तीसरी शर्त: ख़रीदने और बेचने के लिये मुद्दत का मुक़र्रर होना है यानी यह तै हो जाना चाहिये कि फ़ुलाँ महीने में या फ़ुलाँ तारीख़ को बैअ मुकम्मल हो जायेगी।

चौथी शर्त: जगह का मुक़र्रर होना है। जहाँ ख़रीदार चीज़ को वसूल करेगा। यह शर्त उन चीज़ों में है जो आसानी से इधर उधर न ले जाई जा सकती हों और ज़्यादा हों। अगर ऐसी चीज़ें हैं जो आसानी के साथ एक जगह से दूसरी जगह ले जाई जा सकती हैं जैसे घड़ी, क़लम, दस बीस गज़ कपड़ा या दस सेर ग़ल्ला तो उनमें यह शर्त ज़रूरी नहीं है।

पाँचवीं शर्त: मुआमला करते वक़्त क़ीमत अदा कर देना है। अगर बात चीत आज हुई और रूपया कल दिया तो बायेअ को हक़ है कि वह या तो नए सिरे से मुआमला करे या इंकार कर दे।

छठी शर्त: यह है कि ख़रीदने और बेचने का मुआमला पूरा होने की जो मुद्दत मुक़र्रर की गई हो उस दौरान वह चीज़ बाज़ार में मौजूद हो। अगर वह बाज़ार से ग़ायब हो जाये तो बेचने वाला रूपया वापस कर सकता है। यह क़ैद हनफ़ी फ़ुक़हा ने लगाई है, बाक़ी तीनों इमामों के नज़दीक चीज़ उस वक़्त मौजूद होना चाहिये जब उस को देना है, पूरी मुद्दत में मौजूद रहना ज़रूरी नहीं है। आम हालतों में हनफ़ी फ़ुक़हा की राय पर अमल मुनासिब है। बहुत ज़्यादा ज़रूरत जैसे चीज़ों की कमी हो जाने की वजह से तीनों इमामों की राय पर अमल किया जा सकता है।

बैअे सलम उन चीज़ों में सही नहीं है जिनका निर्धारण किया जा सके जैसे जानवर। मगर इमाम मालिक (रह०) और इमाम शाफ़ई

(रह०) के नज़दीक इन में भी निर्धारण मुम्किन है। अगर सामान्य रूप से निर्धारण हो जाये तो बैअे सलम हो सकती है वरना नहीं।

मुक़र्रह मुद्दत गुज़र जाने पर अगर बायेअ ने चीज़ नहीं दी तो उस रूपये से ख़रीदार को दूसरी चीज़ लेने का हक़ नहीं है। उसे रूपया वापस ले लेना चाहिये या कुछ और मुहलत दे देना चाहिये।

इसी तरह अगर ख़रीदार को वह चीज़ ख़रीदने की ज़रूरत नहीं रही जिस के लिये उसने रूपया दिया था तो वह मुआमला ख़त्म कर सकता है मगर उसके बजाये दूसरी चीज़ नहीं ले सकता। पहले वह अपना रूपया वापस ले फिर दूसरी चीज़ ख़रीदने का दूसरा मुआमला करे।

यह हुक्म अहम वजहों के मातहत है। पहली वजह यह कि अगर बायेअ किसी वजह से माल न दे सका तो जब वह दूसरी चीज़ ख़रीदार को देगा तो उसमें कुछ न कुछ रिआयत ज़रूर करेगा। रिआयत के नतीजे में उसे कुछ मिलेगा नहीं बल्कि नुक़सान होगा और उसी का नाम सूद है। दूसरी वजह यह है कि रूपया क़र्ज़ के तौर पर दिया गया था और कर्ज़ के बदले में नफ़ा उठाना मना है, और यह रिआयत एक तरह का नफ़ा है। तीसरी वजह यह कि इस में झगड़े का डर है।

बैअे इस्तिसनाअ: इस्तिसनाअ का अर्थ बनवाना है यानी वह बैअ जो किसी चीज़ के बनवाने के लिये की जाये। यह बैअे सलम ही की एक क़िस्म है। फ़र्क़ सिर्फ़ इतना है कि बैअे सलम में क़ीमत मुआमला करते ही अदा की जाती है और बैअे इस्तिसनाअ में क़ीमत तुरन्त अदा करना ज़रूरी नहीं बल्कि जब माल मिल जाये तब क़ीमत अदा करना होगी। बाक़ी तमाम बातें बैअे सलम की तरह पहले ही तै हो जाना चाहियें।

जैसे एक जोड़ा जूता बनवाने का आर्डर दिया तो या तो नमूना दिखा कर मुआमला तै करना चाहिये या फिर पूरी तफ़सील तै हो

जा़नी चाहिये कि किस तरह का रहेगा और रंग क्या होगा, फीतेदार होगा या न्यूकट वगै़रा।

या अगर किसी फ़र्म को साइकल या मोटर का आर्डर दिया तो उसके माडल और पुर्ज़ों के बारे में भी बताना होगा कि अमरीकन होंगे या जर्मन या बरतानिया के बने हुए। क़ीमत किस सिक्के में अदा होगी और क्या होगी। सामान कितनी मुद्दत में और किस जगह सप्लाई किया जायेगा वगै़रा वगै़रा। यानी वे तमाम बातें तै हो जानी चाहियें जिनसे कि बाद में इख़्तिलाफ़ पैदा होने का डर न रहे।

बैअ के नाजाइज़ तरीक़े: बैअ के वे तरीक़े जिनसे वह नाजाइज़ क़रार पाती है उनकी तीन क़िस्में हैं, बातिल, फ़ासिद और मकरूह।

बैअे बातिल: यह है कि ख़रीदना और बेचना सूदी तरीक़े पर हो या जुए के ज़रिये से हो, या हराम चीज़ों जैसे, शराब वगै़रा का व्यापार हो तो यह सारा कारोबार हराम और ग़लत होगा।

बैअे फ़ासिद: वह है जिसमें मबीअ बिक तो सकती है लेकिन जिस सूरत में बेची जा रही है, वह सही नहीं है। जैसे घास का बेचना ना नाजाइज़ नहीं, लेकिन अगर वह मैदान की खुद उगने वाली घास जिसका मालिक वह नहीं है बेच रहा है तो बैअ सही नहीं होगी। अगर ग़लती से ऐसा मुआमला हो गया तो इस को ख़त्म कर देना चाहिये। अगर नहीं करेगा तो इस्लामी हुकूमत ख़त्म करा देगी।

बैअे मकरूह: यह है कि माल हलाल तो हो और बेचने वाले का क़ब्ज़ा भी हो मगर ख़रीदने बेचने से नाजाइज़ फ़ायदा उठाना मक़सद हो। जैसे किसी चीज़ की क़ीमत दस रूपये तै हो गई और बेचने वाला उसपर राज़ी भी हो चु ा था कि एक तीसरा शख़्स उसी चीज़ को ग्यारह या बारह रूपये दे कर ले लेता है तो यह बैअ मकरूह होगी। या कभी दाम बढ़ाने का मक़सद सिर्फ़ यह होता है कि बेचने

वाले का फ़ायदा हो जाये, चूँकि ख़रीदार को ज़रूरत है इस लिये वह ज़्यादा पैसे लगायेगा। यह ज़्यादा क़ीमत सिर्फ़ उस दूसरे शख़्स की वजह से देनी पड़ती है इस लिये उसका यह काम मकरूह होगा। इस का हुक्म यह है कि ऐसे ख़रीदने और बेचने का मुआमला ख़त्म कर दिया जाये। मगर इस्लामी हुकूमत ज़बरदस्ती ख़त्म नहीं करायेगी। लेकिन अगर पेशे के तौर पर ऐसा किया जाये या बेचने वाला ख़ुद इस तरह के दलाल मुक़र्रर करे तो यह बैअ सही नहीं मानी जायेगी और उसका हुक्म वही होगा जो बैअे फ़ासिद का बयान हो चुका। नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने किसी के भाव के ऊपर भाव लगाने से मना फ़रमाया है। नीलाम का हुक्म इससे अलग है।

सूदी कारोबारः इस्लामी शरीअत ने सूद को बिल्कुल हराम ठहराया है। सिर्फ़ क़र्ज़ दिये हुए रूपये के बदले में एक महीना या एक साल बाद कुछ ज़्यादा रक़म वसूल करना ही नहीं बल्कि यह भी सूद है कि तिजारत में लगाने के लिये रूपये इस शर्त पर लिया जाये कि उस को बढ़ा कर लौटाया जायेगा। या क़र्ज़ तो बिला सूदी दिया मगर रूपये देने के बदले क़र्ज़दार से रूपये लेने के अलावा कुछ और फ़ायदा उठाया जैसे अपनी ख़िदमत ली या कोई चीज़ क़र्ज़ देने की वजह से सस्ती ख़रीदी तो यह सब सूद में दाख़िल है। इसी तरह जो चीज़ें एक ही जिन्स की हों उनको ख़रीदने बेचने और बदलने में भी कुछ कभी कभी सूद हो जाता है। इसी लिये हर तरह के सूदी कारोबार से इस्लाम में रोका गया है। कुरआन में सूद को नजिस (नापाक) कहा गया है। सूद लेने वालों को शैतान के हाथों का खिलौना कहा गया है। जो लोग मुसलमान हों और सूद लें उनके लिये फ़रमान है कि ख़ुदा से लड़ने के लिये तैयार हो जाओ यानी उसे अल्लाह से बग़ावत क़रार दिया गया है। वह शख़्स ख़ुदा का बाग़ी और नाफ़रमान समझा जायेगा और उसको वही सजा मिलेगी जो बाग़ियों और सरकशों को मिलती है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि

वसल्लम ने सूद लेने वाले, देने वाले, सूदी कारोबार लिखने वाले और उसकी गवाही देने वाले सब पर लानत की है। हज़रत उमर (र.त.अ.) ने उसकी हुर्मत की शिद्दत को सामने रखते हुए फ़रमाया कि रिबा (सूद) और रैबा (शुबहा) दोनों छोड़ दो यानी सूद और जिस में सूद की थोड़ी सी भी झलक या अंदेशा पाया जाए उसके क़रीब भी न जाओ।

इन सख़्त आदेशों को सामने रखते हुए ऐसे तमाम ख़रीदने और बेचने के मुआमले जिनमें सूद की आमेज़िश का शक भी हो जाये ममनूअ (मना करना) क़रार दिये गये हैं।

सूद अख़लाक़ी हैसियत से नापसन्दीदाः हमदर्दी और दूसरों का भला चाहना इन्सानियत का जौहर है और कुरआन व हदीस में इसकी तरफ़ उभारा गया है। सूद इन्सानियत को ख़त्म करता है और उसकी जगह ख़ुदग़र्ज़ी और सिर्फ़ अपने लिये नफ़ा हासिल करना सिखाता है। अपने नफ़े के लिये दूसरों की इज़्ज़त व आबरू बल्कि जान व माल से खेलने का हौसला बढ़ाता है। अगर किसी लावारिस के कफ़न और दफ़न के लिये कुछ रूपये देगा तो वह यह चाहेगा कि उस रूपये का सूद अगर न मिले तो कम से कम असल रूपया ही लोग इकट्ठा कर के उसे वापस कर दें, यानी यह कि इन्सानियत उस से छिन जाती है, हालाँकि इस्लाम उसी को पैदा करने का दाई है, कुरआन में बग़ैर एहसान जताये दूसरों के साथ हमदर्दी करने का सबक़ दिया गया है, दिखावे के लिये या किसी ग़र्ज़ से माली मदद करने की बुराइ की गई है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया है कि दीन ख़ैरख़्वाही का नाम है और फ़रमाया कि बेहतर शख़्स वह है जो लोगों को फ़ायदा पहुंचाये, ज़ाहिर है कि जो अख़लाक़ व किरदार इस्लाम पैदा करना चाहिता है वह सूद खाने वाले ज़हन के साथ मुम्किन नहीं।

बैंक और डाकख़ाने से मिलने वाला सूदः चूँकि डाकख़ाना और

बैंक अपनी जमा की हुई रक़म पर सूद देता है, इस लिये वह भी हराम है और इन दोनों संस्थाओं से सूद पर रूपया ले कर व्यापार करना भी हराम है। यही हुक्म नेशनल सेविंग्ज़ सर्टीफिकेट पर मिलने वाले सूद का भी है, रहा ज़मीनदारी बाँड में सूद के नाम से जो रक़म दर्ज की गई है। कुछ फुक़हा उसको सूद नहीं मानते क्योंकि जिस चीज़ के बदले में यह रक़में दी जा रही हैं उस चीज़ की असल क़ीमत उन रक़मों से कहीं ज़्यादा है। प्रोवीडेन्ट फन्ड, बेकारी फन्ड या किसी और फन्ड में जो रक़म मुलाज़िम की तनख़्वाह से कट कर हर महीने जमा होती रहती है उस पर हुकूमत की तरफ़ से सूद मिलता है वह सूद ही है इस लिये वह भी जाइज़ नहीं, अगरचे कुछ फुक़हा ने उसको हुकूमत की तरफ़ से इनआम समझते हुए उसे जाइज़ क़रार दिया है मगर फिर भी उसमें सूद का शुबहा मौजूद है इस लिये उससे बचना बेहतर है।

सूदी कारोबार की बुराई रोज़गार की हैसियत से: 1956 में जब ग़ल्ले का भाव बढ़ना शुरू हुआ तो व्यैवपारियों ने ज़्यादा से ज़्यादा रूपया ग़ल्ले की तिजारत में लगाने के लिये बैंकों से सूद पर ले कर पेशगी ग़ल्ले की ख़रीदारी के लिये बाँटा और बैंकों ने जी खोल कर रूपया क़र्ज़ दिया, नतीजा यह हुआ कि गेहूँ जो बाज़ार में 12 रूपये मन बिकता था वह 20-22 रूपये मन हो गया और फिर महंगा होते-होते 60-70 रूपये मन हो गया। क्योंकि जिस चीज़ की ज़रूरत ज़्यादा होती है उस की माँग भी ज़्यादा होती है और लोग उसे हर क़ीमत पर ख़रीदने के लिये मजबूर होते हैं, बड़े व्यवपारी ऐसे मौक़ों से फ़ायदा उठा कर ज़्यादा से ज़्यादा ग़ल्ला जमा कर के ग़रीबों और कम आमदनी वाले लोगों से वही दाम वसूल करते हैं जो दौलतमंदों और अमीरों से लेते हैं नतीजा यह होता है कि ग़रीब लोग तकलीफ़ और तंगी में पड़ जाते हैं, गोया कुछ बैंकों के मालिकों और ग़ल्ले के बड़े-बड़े व्यवपारियों को सूदी कारोबार से फ़ायदा पहुंचता है और बाक़ी दुनिया को नुक़सान।

उधार ख़रीदने और बेचने और चीज़ों में कमी बेशी करने की वजह से सूदः जिन चीज़ों को हम इस्तेमाल करते हैं और उनमें कमी बेशी कर के या उधार बेचते हैं वे आम तौर से पाँच तरह की होती हैं- (1) सोना चाँदी या उनसे बनी हुई चीज़ें (2) तोल कर बेची जाने वाली चीज़ें जैसे लोहा, ताँबा, पीतल, ग़ल्ला, तरकारी, मेवे, मसाले, रोटी और घी वग़ैरा। (3) पैमाने से नाप कर बेची जाने वाली चीज़ें (4) मीटर, गज़ या फ़ुट से नाप कर बेची जाने वाली चीज़ें और (5) वे चीज़ें जो गिन कर बिकती हैं, इनमें से हर एक का बयान अलग-अलग किया जाता है।

1. चाँदी और सोने का हुक्मः सोने और चाँदी से बनी हुई चीज़ें अगर सोने या चाँदी के सिक्कों से ख़रीदी या बदली जायें तो दो बातें ज़रूरी हैं। एक यह कि दोनों का वज़न बराबर हो, दूसरी यह कि हाथों हाथ ख़रीदा और बेचा जाये। अगर इनमें से कोई बात न होगी तो सूद का मुआमला हो जायेगा। जैसे किसी के पास चाँदी है और वह चाँदी से बना हुआ ज़ेवर लेना चाहता है, या सोना है और वह सोने से बना हुआ ज़ेवर लेना चाहे तो यह ज़रूरी है कि मुआमला हाथों हाथ करे और दोनों का वज़न बराबर हो। अगर उधार मुआमला किया या वज़न में कमी बेशी की तो सूद हो जायेगा। अगर ज़ेवर की बनवाई देना हो तो अलग से देना चाहिये, जिस चांदी या सोने के बदले में नई चाँदी व सोना या उस से बना हुआ ज़ेवर लिया जा रहा है उस में कमी या बेशी न होना चाहिये।

जिन मुल्कों में चांदी या सोने के सिक्के चलते हैं जैसे हिजाज़ में दीनार और अमरीका में डालर तो उन सिक्कों के बदले में अगर वे सोने के हैं तो सोना और अगर चाँदी हो तो उतनी ही चांदी लेनी चाहिये। सोने और चांदी के सिक्कों का बदलना भी बराबरी की बुनियाद पर होना चाहिये, दो हुकूमतों के बीच यह लेन-देन अगर बट्टा काट कर किया जाये तो यह भी इस्लाम में सूद है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया है कि "एक दीनार को दो दीनार के बदले या एक दिर्हम को दो दिर्हम के बदले न बेचो",

आप (स.अ.व.) के इस हुक्म पर अमल करने के लिये सिक्कों के बदलने के तरीक़ों को समझना ज़रूरी है। सिक्कों की ब्लेक मार्केटिंग भी हराम है।

सोने को चांदी से या चाँदी को सोने से बदलना हो या सोने से चाँदी के सिक्के और चाँदी से सोने के सिक्के ख़रीदना हों तो वज़न की शर्त बाक़ी नहीं रहेगी लेकिन यह शर्त ज़रूर रहेगी कि मुआमला हाथों हाथ हो उधार न हो, यानी जाइज़ तरीक़ा यह रहा कि अगर सोने या चाँदी को या उनसे बनी हुई चीज़ों को एक ही जिन्स से बदलना है तो उसमें दोनों शर्तों का लिहाज़ होगा, वज़न की बराबरी और हाथों हाथ ख़रीदना बेचना, लेकिन अगर जिन्स बदल जाये तो फिर वज़न का बराबर होना ज़रूरी नहीं, हाथों हाथ ख़रीदना और बेचना ज़रूरी है।

अगर किसी ने दस तोले चाँदी इस तरह ख़रीदी कि पाँच तोले चाँदी या चाँदी का ज़ेवर और बाक़ी पाँच तोले की क़ीमत रेज़गारी या नोट की शक्ल में अदा कर दी जाये तो यह जाइज़ है, इसी तरह अगर सोने का नया ज़ेवर जो ज़्यादा वज़न का हो पुराने कम वज़न के सोने के ज़ेवर और उस के साथ नोट या रेज़गारी मिला कर ख़रीदा जाये तो यह सूरत भी जाइज़ है लेकिन मुआमला हाथों हाथ होना भी ज़रूरी है। ख़ुलासा यह कि उस सोने या चाँदी या उन से बनी हुई चीज़ों का वज़न अगर उन चीज़ों के वज़न से कम हो जिन्हें ख़रीदा जा रहा है तो नोट या रेज़गारी मिला कर उस से ज़्यादा वज़न की क़ीमत अदा कर देना जाइज़ है लेकिन यह कमी अगर चाँदी सोने या उन के सिक्कों से पूरी की तो जाइज़ नहीं, क्योंकि एक ही जिन्स की चीज़ों का हमवज़न (बराबर वज़न का) होना ज़रूरी है। सच्चे गोटे, ठप्पे, अंगूठी, बरतन वग़ैरा, चाँदी की चीज़ों का यही हुक्म है। हाँ अगर इन चीज़ों में आधे से ज़्यादा मिलावट हो और फिर उनसे चाँदी या चाँदी के ज़ेवर या सोने को ख़रीदा जाये तो फिर वज़न का बराबर होना ज़रूरी नहीं लेकिन मुआमला हाथों हाथ होना चाहिये, अगर मिलावट कम है तो उस का हुक्म सोने या चाँदी की तरह है

जैसा कि आम तौरपर ज़ेवर में थोड़ा सा ताँबा मिला देते हैं तो उस से हुक्म नहीं बदलता।

2. तोल कर बिकने वाली चीज़ों का बयान: गल्ला, तरकारी, सूखे मेवे, शकर, नमक, गोश्त, लोहा, ताँबा, पीतल, एलमूनियम वग़ैरा रूपये पैसे से भाव और क़ीमत तै कर के ख़रीदी और बेची जा सकती हैं, लेकिन अगर यही चीज़ें या उनकी बनी हुई चीज़ें एक दूसरे से बदली जायें जैसे ताँबे का लोटा दे कर ताँबे की पतीली लें, एलमूनियम दे कर एलमूनियम, शकर दे कर शकर, गेहूँ दे कर गेहूँ बदला जाये तो वज़न की बराबरी और हाथों हाथ का मुआमला होना दोनों शर्तें पूरी होना ज़रूरी हैं। जैसे कोई शख़्स ख़राब गेहूँ दे कर अच्छा गेहूँ लेना चाहता है या आटे से बदलना चाहता है तो दोनों का वज़न बराबर होना चाहिये और हाथों हाथ ख़रीदना और बेचना चाहिये, लेकिन अगर उसने गेहूँ क़ीमत दे कर ख़रीद लिया तो उस क़ीमत से वह जिस भाव भी दूसरा गेहूँ ख़रीदना चाहे ख़रीद सकता है। मक़्सद यह है कि तोल से बिकने वाली चीज़ों में भी अगर एक जिन्स की अदला-बदली उसी जिन्स की दूसरी चीज़ से करना हो तो वज़न में बराबरी और हाथों हाथ होना ज़रूरी है।

अगर चीज़ें अलग अलग जिन्स की हों जैसे गेहूँ दे कर जौ लिये जायें या जौ दे कर धान लिये जायें या गल्ले के बदले में तरकारी ली जाये या ताँबे की चीज़ दे कर लोहे या पीतल की चीज़ ली जाये तो उसमें कमी बेशी हो सकती है मगर मुआमला आमने सामने होना चाहिये, उधार या वादा करना सही नहीं है। इस लिये कि उधार मुआमला करने में चीज़ बदल भी सकती है और वज़न भी घट और बढ़ सकता है जो झगड़े का सबब होगा।

3. पैमाने से बिकने वाली चीज़ें: पैमाने से नाप कर बेची जाने वाली चीज़ों का भी वही हुक्म है जो तोल कर बेची जाने जाने वाली चीज़ों का बयान हो चुका। जैसे एक सिमेन्ट की बोरी के बदले में दूसरी सिमेन्ट की बोरी या सोफ्ट चूना दे कर दूसरा सोफ्ट चूना लेना

है तो दोनों के पैमानों का बराबर होना भी ज़रूरी है और हाथों हाथ होना भी। लेकिन एक बोरी सिमेन्ट दे कर चूना या चूना दे कर सिमेन्ट लेना हो तो पैमाना कम व ज़्यादा हो सकता है मगर मुआमला हाथ के हाथ होना चाहिये।

4. गज़ या फुट से नाप कर और गिनती से बिकने वाली चीज़ें: कपड़ा, फीता, टाट, वग़ैरा फ़ुट, गज़ या मीटर से नाप कर बेची जाती हैं और आम, अंडे वग़ैरा गिन कर बेचे जाते हैं अगर देनों तरफ़ एक ही क़िस्म की चीज़ है तो शर्त यह होगी कि मुआमला हाथ के हाथ हो यानी देने वाली चीज़ तुरन्त दे दी जाये और लेने वाली चीज़ तुरन्त ले ली जाये।

लेकिन अगर दोनों तरफ़ अलग-अलग चीज़ें हों तो इन सूरतों में नाप, तोल और गिनती के बराबर होने की ज़रूरत नहीं और उधार में भी लेन देन हो सकता है, इसी तरह अगर चीज़ तो एक तरह की हो मगर उसकी सूरत या नौईयत बदली हुई हो, जैसे साटन के बदले मलमल, या दूध के बदले में खोया या कापी के बदले में काग़ज़ ख़रीदना हो तो बराबर होना और हाथों हाथ होना ज़रूरी नहीं है।

मक़्सद यह है कि वज़न और पैमाने से बिकने वाली चीज़ें अगर दोनों तरफ़ एक ही जिन्स की हों तो दो शर्तें हैं, वज़न और पैमाने में बराबरी और हाथ के हाथ लेन-देन, मगर नाप कर और गिन कर बेची जाने वाली चीज़ें अगर उन की जिन्स अलग अलग हों जैसे गेहूँ और जौ, धान और चना तो वज़न, पैमाने और संख्या का बराबर होना ज़रूरी नहीं है बल्कि सिर्फ़ हाथों हाथ होना ज़रूरी है। और जो चीज़ें पैमाने या तौल से नहीं बिकतीं या दोनों तरफ़ दो अलग अलग क़िस्म की चीज़ें हैं तो उनमें न तो वज़न और पैमाना और संख्या की बराबरी ज़रूरी है और न हाथों हाथ होना। जैसे ताँबे की पतीली दे कर एक दर्जन पलेटें चीनी या ताम चीनी की ख़रीदी जायें या एक थान कपड़े के बदले एक मन शकर ख़रीदी जाये तो दोनों में से कोई शर्त मौजूद होना ज़रूरी नहीं है।

जुए और शर्त लगाने की हुर्मतः सूदी कारोबार की तरह जुए का कारोबार भी हराम है, जुआ चाहे बाज़ी लगा कर हो या कोई शर्त लगा कर या संयोग व इत्तिफ़ाक़ की बिना पर फ़ायदा उठाने की शक्ल हो। इस्लाम ने इन सब तरीक़ों से कमाई को नाजाइज़ क़रार दिया है। क़ुरआन व हदीस में मैसिर को हराम कहा गया है। मैसिर सिर्फ़ यही नहीं है कि कुछ रूपये पैसों की बाज़ी लगा कर फ़ायदा या नुक़सान उठाया जाये बल्कि जुए और क़िमार ही की एक शक्ल यह भी है जिसमें एक आदमी का पैसा दूसरे आदमी को संयोग व इत्तिफ़ाक़ से मिल जाये। लाटरी, रेस और पहेलियों वग़ैरा के ज़रिये जो फ़ायदा हासिल किया जाता है वह जुए में दाख़िल है क्योंकि फ़ायदा और नुक़सान इत्तिफ़ाक़ पर निर्भर होता है।

मैसिर यानी जुए की परिभाषाः उलमा ने मैसिर की परिभाषा इस तरह से की है "तअलीकुलमिल्कि अलल ख़तरि"(अपनी मिल्कियत को ख़तरे में डालना) यानी जिसका फ़ायदा सिर्फ़ इत्तिफ़ाक़ पर निर्भर हो इसी लिये बैउलग़रर से रोका गया है, ग़रर का अर्थ है धोका यह एक मुकम्मल शब्द है इसमें हर वह कारोबार दाख़िल है जिसमें धोके की सिफ़त पाई जाये। बैअे ग़रर की कुछ क़िस्में बयान की जाती हैं-

बैअे मुनाबज़ाः एक तरफ़ निर्धारित रक़म या जिन्स हो और दूसरी तरफ़ ग़ैर निर्धारित रक़म या जिन्स हो, जैसे किसी ने कहा कि इस बाग़ के फल मैंने इस शर्त पर बेचे कि इसमें पांच हज़ार से ज़्यादा जितने फल होंगे वे सब मेरे होंगे और अगर कम होंगे तो उसकी ज़िम्मेदारी ख़रीदार पर होगी। या कोई कहे कि इस चार मन गेहूँ के बदले इस मटर के खेत की फ़सल मैंने ख़रीद ली या फ़लाँ डिब्बे में जितना सामान है वह सब इतनी क़ीमत में बेचा जाता है, इन तमाम सूरतों में बैअ सही न होगी क्योंकि जो चीज़ बेची या ख़रीदी जा रही है वह निर्धारित नहीं है। अगर मुआमला इस तरह तै हो जाये और बायेअ या मुशतरी को नुक़सान उठाना पड़े तो झगड़े और इख़्तिलाफ़ का पैदा होना मुम्किन है। अगरचे नुक़सान और फ़ायदे की सम्भावना

हर तिजारत में होती है मगर उसकी वजह दूसरी होती है, असल मुआमला इत्तिफ़ाक़ पर आधारित नहीं होता चूँकि ऐसे वाक़िआत सामने आ चुके हैं जिनमें एक आदमी ने किसी जहाज़ पर लदे हुए माल को बग़ैर देखे ख़रीद लिया और फिर वह भारी नुक़सान में पड़ गया, इस लिये बैअे मुनाबज़ा नाजाइज़ है।

बैउल-मुलामसा और बैउल-हसातः मुलामसा का अर्थ है छूना और हसात का अर्थ है कंकरी, इसकी सूरत यह होती है कि बहुत सी रखी हुई चीज़ों में से जिस पर मुशतरी का हाथ पड़ जाये वह उस की हो जाये या वह एक कंकरी फेंके और जिस चीज़ पर वह पहुंच जाये वह उस की हो जाये, यह सब तरीक़े नाजाइज़ हैं। रेस और लाटरी में यही होता है कि लाखों रूपये का माल सिर्फ़ पांसा फेंक कर और बाज़ी बोल कर बिक जाता है।

मुअम्माबाज़ी (पहेली बुझाना) में यह होता है कि दो आदमियों का फ़ायदा तो निश्चित होता है, एक मुअम्मा जारी करने वाले का और दूसरा उस शख़्स का जिसने बाज़ी जीती या इनआम पाया मगर हज़ारों लाखों आदमियों की जेब से पैसा निकाल कर सिर्फ़ दो आदमियों तक पहुंचा दिया जाता है, यह तरीक़ा साफ़ तौर से ज़ुलिमाना है कि हज़ारों आदमी सिर्फ़ एक ख़याली उम्मीद पर अपना पैसा लगायें और नुक़सान उठायें अगर वे जान पाते कि उनके हिस्से में कुछ नहीं आयेगा तो रूपया और मेहनत मुअम्मा (पहेली) हल करने में बरबाद न करते।

मुअम्मे का हल अगर फ़ीस के साथ न भी लिया जाता हो तो रिसाले की कुपन के साथ तो भेजना ही पड़ता है इस लिये हर मुअम्मा भेजने वाले को रिसाला ख़रीदना लाज़िम होता है। ज़ाहिर है कि इस तरह ख़र्च करना एक ख़याली उम्मीद पर ख़र्च करने के सिवा और कुछ नहीं।

बीमाः चाहे माल का बीमा हो या जान का दोनों नाजाइज़ हैं। इसमें

सूद भी है जुआ भी और रिश्वत भी, माल के बीमे में जो बदला बीमा कम्पनी देती है वह माल को बदला नहीं होता बल्कि उस रक़म का होता है जो बीमा कराने वाले उसे सालाना देते रहते हैं, वर्ना बीमा किये हुए माल से तो कम्पनी को कोई फ़ायदा होता ही नहीं। ज़ाहिर है कि बदले की अदायगी क़िस्मत और इत्तिफ़ाक़ पर निर्भर है। इसी का नाम मैसिर (जुआ) है। यह सूद इस तरह है कि नुक़सान का जो बदला कम्पनी देती है वह या तो उस रकम से ज़्यादा होगा जो बीमा कराने वालों से मिली है या कम होगा, दोनों सूरतों में एक शख़्स को नुक़सान होगा और दूसरे को फ़ायदा, इसी का नाम सूद है। जान का बीमा सूद होने के साथ रिश्वत भी है, इस्लाम में जान ऐसा माल नहीं जो ख़रीदने और बेचने के बदले में इस्तेमाल हो सके और मुआमलात में दोनों तरफ़ ऐसी चीज़ें होना ज़रूरी हैं जो एवज़ (बदला) बन सकें और रिश्वत की परिभाषा भी यही है कि वह किसी माल के बदले में न हो।

रिश्वतः सूद और जुए की तरह रिश्वत भी हराम है, कुरआन में इससे मना किया गया है और नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया है कि रिश्वत लेने और देने वाले दोनों जहन्नम में जायेंगे। रिश्वत यह है कि एक आदमी किसी काम पर मुक़र्रर हो, उसका बदला हुकूमत से या किसी संस्था या शख़्स से तनख़्वाह के तौरपर पाता हो और फिर भी उस काम के करने का बदला कुछ और ले ले जैसे एक दफ़्तर का क्लर्क इस लिये मुक़र्रर है कि वह लोगों के पासपोर्ट बना दिया करे, अब अगर पासपोर्ट बनाने में तनख़्वाह के अलावा पासपोर्ट बनवाने वाले से उसने कुछ लिया तो रिश्वत होगी क्योंकि उसको उस काम का बदला मिल रहा है, अब यह बदला वह किस चीज़ के बदले में ले रहा है?, किसी ऊँचे ओहदे वाले को उसके ऊँचे ओहदे की वजह से तोहफ़ा या हदिया मिले तो वह भी रिश्वत है। एक बार एक शख़्स को नबी (स.अ.व.) ने ज़कात वसूल करने के लिये मुक़र्रर फ़रमाया, जब वह वापस हुआ तो उसने कहा इतना माल ज़कात का है और इतना मुझे हदिया मिला है, आप

(स.अ.व.) ने फ़रमाया कि वह अपने घर बैठ कर देखे कि कोई उसको हदिया देता है यानी यह हदिया ओहदे की वजह से मिला है।

भविष्य के सौदे: एक शख़्स जानवर के एक या कई हमल (गर्भ) को बेच दे, जो अभी पैदा न हुआ हो उसको हबलिल हुबला कहते हैं, एक शख़्स अपने खेत की पैदावार या बाग़ के फल दो तीन साल के लिये बेच दे, इस को बैअे मुआवमा कहते हैं हदीस में इन दोनों से रोका गया है। जैसे किसी के खेत में एक साल दस मन ग़ल्ला पैदा हुआ या बाग़ का फल सौ रूपये में बिका तो इसी पर अन्दाज़ा लगा कर आने वाले दो-तीन सालों के लिये मुआमला कर लिया, या जानवर ने अभी बच्चा नहीं दिया है मगर होने वाले बच्चे को बेच दिया, इस क़िस्म के तमाम कारोबार से रोका गया है क्योंकि यह भी मैसिर की एक क़िस्म है।

भविष्य के सौदे का तरीक़ा दो पहलुओं से नाजाइज़ है, एक तो यह कि जो चीज़ बेची जाती है वह सामने और क़ब्ज़े में नहीं होती, दूसरे फ़ायदा सिर्फ़ क़िस्मत (भाग) और इत्तिफ़ाक़ पर निर्भर होता है, ये ख़ुसूसियात जिस कारोबार में पाई जायेंगी वह नाजाइज़ होगा। भविष्य के सौदों में ज़्यादातर छोटे व्यवपारियों को नुक़सान उठाना पड़ता है और बड़े व्यवपारियों को इस बात का मौक़ा मिलता है कि वे चीज़ों का स्टाक कर के मंहगाई पैदा करें और ख़ूब फ़ायदा उठायें।

बैउल-हुबला की कुछ और सूरतें: बैउल हुबला सिर्फ़ गर्भ को बेचने को ही नहीं कहते बल्कि हर उस चीज़ के बेचने को कहते हैं जो सामने न हो और अपने क़ब्ज़े में भी न हो। जैसे किसी ने कहा कि गाय के थन में जो दूध है वह मैं बेचता हूँ या भेड़ के शरीर पर जितने बाल हैं वे सब बेचता हूँ। ये सब बैउल हुबला में दाख़िल और नाजाइज़ हैं। दूध को निकाल कर बेचना और बाल को काट कर बेचना सही है, इसी तरह मकान में लगे हुए बाँस या लकड़ियों को बेचना भी सही नहीं है उनको निकाल कर बेचना चाहिये।

कारोबार में धोका या फ़रेब: ग़रर, नजश, ग़िश्श, और मुसर्रात जैसे धोके के कारोबार इस्लाम में हराम हैं, ग़रर का अर्थ ख़तरा बर्दाश्त करना है, ऐसा मुआमला जिसमें किसी शख़्स का फ़ायादा ख़तरे में पड़ता है या ऐसी चीज़ बेची जाये जो क़ब्ज़े में न हो जैसे दरिया की मछलियाँ जो दरिया में ही हों उनका ठेका देना भी सही नहीं है। नजश यह है कि ख़राब माल की इस लिये तारीफ़ की जाये कि उसके दाम बढ़ें। ग़िश्श का अर्थ खोट है खोटी चीज़ को खरा कहना भी धोका देना है। मुसर्रात थन पर थैली चढ़ाने को कहते हैं ताकि दूध रोक कर यह ज़ाहिर किया जाये कि यह बड़ी दुधारी गाय या बकरी है, यानी वे तमाम कारोबार जो ग़लत तरीक़े, ख़राब और ऐबदार चीज़ को अच्छा दिखा कर नक़ली को असली बना कर लोगों को धोके में डालने के लिये किये जाते हैं इस्लाम में नाजाइज़ हैं।

ग़ैर मौजूद माल या क़ीमत पर उधार कारोबार: माल और क़ीमत दोनों मौजूद न हों और उधार ख़रीद व फ़रोख़्त कर ली जाये, इस को हदीस में अल-काली बिल-काली कहा गया है, इसे नबी सल्लल्लाहु अलैहे वसल्लम ने मना फ़रमाया है, कुछ साहिली शहरों में लाखों रूपये का कारोबार कुछ मिनट बात कर के हो जाता है, बस सिर्फ़ यह मालूम करना पड़ता है कि माल कहाँ है और कहाँ से आ रहा है, अपनी जेब से पैसा ख़र्च किये और माल के मौजूद हुए बग़ैर लाखों रूपये का फ़ायदा या नुक़सान लोग उस कारोबार से उठाते हैं जिसको आम ख़रीदारों की जेब से हासिल किया जाता है।

एक उधार मुआमले पर दूसरा उधार मुआमला करना भी नाजाइज़ है, जैसे किसी ने एक मकान ख़रीदा और क़ीमत उधार कर ली, फिर कुछ दिन बाद उसने मकान बेचने वाले से कहा कि इस मकान की अगर तुम इतनी क़ीमत दे दो तो फिर तुम को वापस कर दूँ, या इतना रूपया दे कर अपना मकान वापस ले लो तो ये दोनों सूरतें नाजाइज़ हैं।

कोई माल अमरीका या रूस से चला है, अभी वह रास्ते ही में

है कि माल के एजेंटों से बम्बई या कलकत्ते का एक व्यापारी मुआमला तैय कर लेता है और फिर वह व्यापारी किसी दूसरे व्यापारी से नफ़ा ले कर उसी माल को बेच देता है यह नाजाइज़ है, क्योंकि इस उलट फेर की वजह से वह चीज़ जो चार आने में बिकती अब पाँच या छह आने में बिकती है।

बीच से फ़ायदा उचक लेना: बेचने वाले और ख़रीदने वाले के बीच वास्ता बन कर कुछ बीच के लोग उस फ़ायदे को उचक लेते हैं जो बेचने वाले और ख़रीदने वाले को होता जैसे दलाल या वह व्यापारी जो माल बाज़ार में आने से पहले जमा कर लेते हैं ताकि जो फ़ायदा इस्तेमाल करने वालों को होता है उसे ख़ुद मार लें, ऐसे तमाम लोग इस्लामी शरीअत में नापसन्दीदा हैं, हज़रत अबू हुरैरह (र.त.अ.) से रिवायत है -

نَهَى النَّبِىُّ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ اَنْ يَّتَلَقَّى الْجَلَبُ فَاِنْ تَلَقَّاهُ اِنْسَانٌ فَابْتَاعَهُ فَصَاحِبُ السَّلْعَةِ فِيْهَا بِالْخِيَارِ.

"नहन्नबिय्यु सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम अय्यंतलक़्क़ल जलबो फ़इन तलक़्क़ाहु इन्सानुन फ़ब्ताअहू फ़साहिबुस सलअति फ़ीहा बिल ख़ियार"।

अनुवादः नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़ायदा उचक लेने से रोका है, अगर कोई ऐसा करे तो बेचने वाले को इख़्तियार होगा कि अपना माल वापस ले ले।

एक रिवायत में है "نَهَى عَنْ تَلَقِّى الْبُيُوْعِ" नहा अन तलक़्क़िल बुयूअ' (ख़रीद व फ़रोख़्त के उचक लेने से मना फ़रमाया) दूसरी रिवायत में और साफ़ शब्दों में "نَهَى عَنْ تَلَقِّى السَّلْعِ حَتّٰى تَهْبِطَ الْاَسْوَاق 'नहा अन तलक़्क़ीससलइ हत्ता तहबतल असवाक़' (माल बाज़ार में आने से पहले बीच से उचक लेने को आप (स.अ.व.) ने मना फ़रमाया है।

इसी तरह शहरी दलालों को देहातियों का माल ख़रीदने से मना फ़रमाया है।

किसी चीज़ के बाज़ार में आने से पहले जितने ज़्यादा वास्ते होंगे वह चीज़ उतनी ही ज़्यादा महंगी होगी, क्योंकि सब कुछ न कुछ लाभ कमाने की फ़िक्र में रहेंगे। इस तरह वह चीज़ बाज़ार में आते-आते मंहगी हो जायेगी आम ख़रीदारों पर बोझ पड़ेगा, इस्लामी शरीअत ने उन तमाम लोगों पर पाबन्दी लागू की है जिनके बीच में आने की वजह से आम ख़रीदारों को माल महंगा पड़ता है क्योंकि दो चार आदमियों को लाभ और आम लोगों को उससे नुक़सान पहुंचता है।

फ़िक़ह व हदीस के आम उलमा इसको बिल्कुल नाजाइज़ क़रार देते हैं, इमाम अबू हनीफ़ा (रह०) के नज़दीक बैअ का यह तरीक़ा नाजाइज़ नहीं अगर इसकी वजह से अवाम को परेशानी न हो। लेकिन अगर वे परेशानी में पड़ जायें और सामान महंगी हो जाये तो फिर यह नाजाइज़ है। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के हकीमाना शब्द ये हैं - शहरी देहाती की ख़रीद व फ़रोख़्त का वास्ता न बने, लोगों को छोड़ दो, वे ख़ुद अपना मुआमला करें, अल्लाह तआला किसी के ज़रिये किसी को रोज़ी देता है" यानी एक ही वास्ता होना ज़्यादा अच्छा है कई वास्तों के मुक़ाबिले में।

बैअ में नाजाइज़ शर्तें: (1) अगर किसी ने ख़रीद व फ़रोख़्त का मुआमला करते वक़्त यह शर्त लगाई कि तुम अपना मकान मेरे हाथ बेच दो तो मैं अपना फ़लाँ खेत तुम्हारे हाथ बेच दूँ तो मुआमला नाजाइज़ हो जायेगा, इसको हदीस में एक बैअ के अन्दर दो बैअ कहा गया है।

(2) इसी तरह अगर किसी ने अपना खेत या मकान या जानवर बेचा मगर शर्त लगाई कि खेत में एक फ़सल पैदा कर लूँगा तब उस को तुम्हारे हवाले करूँगा। या मकान में एक महीना रह कर छोडूँगा या जानवर को चार महीने इस्तेमाल करने के बाद दूँगा तो इन तमाम सूरतों में बैअ सही नहीं होगी।

(3) इसी तरह कपड़ा ख़रीदते वक़्त यह शर्त कि उसे काट कर और सी कर दिया जाये और ग़ल्ला या फल ख़रीदा इस शर्त के साथ कि उसे घर तक पहुंचाया जाये तो इन शर्तों की वजह से बैअ नाजाइज़ होगी।

(4) भैंस या गाय की ख़रीदारी इस शर्त के साथ करना कि अगर चार सेर दूध रोज़ाना देगी तो लूँगा, या बेचने वाले का यह कहना कि यह चार सेर दूध देगी, दोनों शर्तें सही नहीं हैं क्योंकि जानवरों का दूध घटता बढ़ता रहता है, हाँ यह कहने में कोई हर्ज नहीं कि यह गाय दुधारी है।

(5) बैअ करते वक़्त यह शर्त लगाना कि उसे किसी के हाथ बेचा न जाये या मकान में फ़लाँ तसर्रूफ़ न किया जाये सही नहीं है इस शर्त पर ध्यान नहीं दिया जायेगा।

शर्त लगाने का क़ायदा-ए-कुल्लिया: ऐसी शर्त जो मूल मुआमले से संबंधित हो और उससे कोई माली नफ़ा हासिल किया जा रहा हो तो वह नाजाइज़ है और बैअ सही नहीं है। जो शर्त मूल मुआमले से संबंधित न हो बल्कि ज़ायद हो तो अगर वह यकतरफा माली मुनाफ़ के लिये हो तो बैअ फ़ासिद होगी और अगर उससे कोई फ़ायदा मक़सद नहीं तो ग़लत होगी, असल मुआमले पर कोई असर न होगा।

मुआमला चाहे ख़रीद व फ़रोख़्त का हो या निकाह का या मुज़ारबत का (यानी एक पैसा दे और दूसरा मेहनत करे) या शिर्कत का, इन सबमें अगर कोई शख़्स शर्त लगाता है तो अगर वह शरीअते इस्लामी के ख़िलाफ़ नहीं है तो शरअन कुबूल के लायक़ होगी, हदीस में है "अल मुस्लिमूना अला शुरूतिहिमह" (मुसलमान अपनी शर्त के पाबन्द हैं) लेकिन अगर वह शर्त किसी शरई हुक्म से टकराती है या उससे कोई ज़ायद माली फ़ायदा किसी एक शख़्स को होता है तो फुक़हा के नज़दीक नाजाइज़ है। माली मुआमलात में ऐसी कोई शर्त जिसका संबंध माल से न हो असल मुआमले पर असर नहीं करेगी। हनफ़ी फुक़हा तीन तरह की शर्तों को अगर वे मूल

मुआमले से संबंधित भी हों, इस उसूल से अलग करते हैं -

1. वह शर्त जिसकी इजाज़त शरीअत ने दी है जैसे क़ीमत देर से अदा करना, किसी को ख़यारे शर्त देना, या ख़यारे नक़द व तअय्युन देना, यह शर्त मूल मुआमले में है।

2. वह शर्त जो असल मुआमले के मुनासिब हो, जैसे उधार मुआमले में ये शर्त कि मुशतरी क़ीमत अदा करने तक कोई चीज़ गिरवी रख दे या कोई ज़मानत दे, क्योंकि बायेअ ने यह शर्त हिफ़ाज़त के लिये मुनासिब समझते हुए लगाई है।

3. वह शर्त जो आम तौर से राइज हो जैसे कुछ चीज़ें एक साल की गारन्टी पर बिकती हैं, ज़ाहिर में ये तीनों शर्तें असल मुआमले में अलग से नफ़े के तौरपर हैं जिससे बैअ फ़ासिद हो जाना चाहिये मगर आम तौरपर ऐसा होने की वजह से या दोनों के राज़ी होने की वजह से किसी एक का फ़ायदा और किसी एक का नुक़सान उसमें नहीं है इसलिये इन्हें सही माना गया है।

बैअ में मना की गई चीज़ों का बयान: ख़रीदार को इस बात से मना किया गया है कि रूपया क़र्ज़ लेने या कोई चीज़ आरियतन हासिल करने की बुनियाद पर ख़रीद व फ़रोख़्त करे या क़र्ज़ इस शर्त पर दे कि अगर तुम मेरी फ़लां चीज़ ख़रीद लो या अपनी फ़लाँ चीज़ मेरे हाथ बेच दो तो मैं क़र्ज़ दे सकता हूँ, मना करने की वजह यह है कि क़र्ज़ दे कर उससे कोई फ़ायदा हासिल करना हराम है।

अगर कोई शख़्स अपना मकान बेचते वक़्त कहे कि इसका एक कमरा नहीं दूँगा या बाग़ के फल बेचते वक़्त कहे कि पाँच सौ फल मेरे होंगे तो यह भी मना है, मना करने की वजह कमरे और फलों की क़िस्म का मजहूल (अज्ञात) होना है यानी अगर नियुक्त कर दिया जाये तो जाइज़ है।

तसवीर की बैअ: जानदार की तसवीर बना कर बेचना हराम है चाहे वे बच्चों के लिये खिलौने ही क्यों न हों। उनको कोई तोड़ दे

या ख़राब कर दे तो उससे कोई जुर्माना नहीं लिया जायेगा क्योंकि इस्लामी शरीअत में यह माल ही नहीं है।

यह भी हराम है कि अपने माल को बेचने के लिये औरत की तसवीर बना कर लोगों को उसके ख़रीदने की तरफ़ उभारा जाये बल्कि उसमें दोहरा-तेहरा गुनाह है, एक तसवीर बनवाने का, दूसरे औरत को उभारने का ज़रिया बनाने का, तीसरे ग़लत तरग़ीब (प्रलोभन) दे कर माल बेचने का।

ऐसे सामानों का बेचना जिनसे जराइम को बढ़ावा मिले: गंदे नाविल, नंगी तसवीरें, अख़लाक़ को ख़राब करने वाले गानों के रिकार्ड, टेप, ऐसी फ़िल्में जिनसे चोरी डाके या किसी और जुर्म करने को बढ़ावा मिलता हो, ऐसी किताबें या इश्तिहार जो ज़िना, शराब और सूद लेने की तरफ़ उभारते हों, इन सब का बेचना और ख़रीदना हराम है।

बैअे ऐना: एक शख़्स ने कोई चीज़ ख़रीदी मगर क़ीमत अभी अदा नहीं की है कि बायेअ ने कहा कि कुछ क़ीमत कम ले कर उसे फिर मेरे हाथ बेच दो इसे शरीअत में बैअे ऐना कहते हैं, नबी (स.अ.व.) ने इससे सख़्ती के साथ रोका है। इमाम अबू हनीफ़ा के नज़दीक दूसरा मुआमला बैअे ऐना का है लेकिन पहला बैअे नसिया है जो सही है और अपनी जगह बाक़ी रहेगा। इमाम मालिक और इमाम हम्बल (रह०) फ़रमाते हैं कि दोनों बातिल हो जायेंगे।

बैअे नजश (दाम पर दाम लगाना): किसी ख़रीदार ने एक चीज़ की क़ीमत लगाई और बायेअ उसे देने पर तैयार हो गया, इस बीच में एक और शख़्स उसी चीज़ की क़ीमत बढ़ा देता है ताकि वह न ख़रीद सके या ज़्यादा क़ीमत दे कर ख़रीदे या दाम बढ़ाने वाला ख़ुद उस को ख़रीद ले।

इसी तरह एक दुकानदार किसी चीज़ की क़ीमत बताये और ख़रीदार लेने के लिये तैयार हो कि एक दूसरा दुकानदार उसी चीज़

का नमूना दिखा कर कहे कि मैं इसे कम दाम पर दे सकता हूँ, ये तमाम सूरतें नापसन्दीदा यानी मकरूह हैं। इमाम मालिक (रह०) कहते हैं कि यह बैअ सही नहीं है, दूसरे इमाम इसे बिल्कुल ग़लत नहीं मानते बल्कि मकरूह कहते हैं।

बैआना या एडवान्सः ख़रीदार ने किसी चीज़ का सौदा किया और कुछ रक़म पेशगी दुकानदार को उसके इतमीनान के लिये दे दी, अब अगर दुकानदार यह शर्त लगाता है कि अगर आप चीज़ न ले जायेंगे तो मैं यह पेशगी रक़म वापस नहीं करूँगा, तो यह सही नहीं है, या किसी ने मोची से कहा एक जोड़ा जूता तैयार कर दो, मोची ने कहा कुछ बैआना दे दीजिये अगर आप ने जूता न लिया तो बैआना वापस न होगा तो उसे यह शर्त लगाने का हक़ नहीं है मगर सौदा न लेने की सूरत में वह बैआना ज़ब्त नहीं कर सकता इसको बैअे अरबून कहते हैं। इमाम शाफ़ई (रह०) और इमाम मालिक (रह०) का मसलक यही है, इमाम अहमद बिन हम्बल के नज़दीक पेशगी रक़म अदा करने वाले ने अगर दिल से यह शर्त मंजूर कर ली हो तो जाइज़ है।

दाम के दाम या नफ़ा ले कर बेचनाः दाम के दाम चीज़ बेच देने को बैअे तौलिया कहते हैं और नफ़ा ले कर बेचने को बैअे मुराबहा कहते हैं। नफ़ा लेने पर इस्लामी शरीअत ने कोई पाबन्दी नहीं लगाई है। मगर बाज़ार भाव से ज़्यादा पर बेचना बुरा है। कुछ इमामों के नज़दीक ऐसे शख़्स को बाज़ार में बेचने की इजाज़त नहीं दी जायेगी। हज़रत उमर (र.त.अ.) ऐसे शख़्स को बाज़ार से उठा दिया करते थे, इस बारे में कुछ मसले ज़हन में रहने चाहियें -

(1) ताजिर पर ज़रूरी नहीं कि अपनी ख़रीदारी के दाम बताये लेकिन अगर कोई ताजिर यह कहदे कि मैंने यह माल इतने में ख़रीदा है और 1 रूपये में एक आना नफ़ा ले कर बेचता हूँ तो फिर इससे ज़्यादा लेने का हक़ नहीं है, अगर ख़रीदार को मालूम हो जाये कि उसने धोका दिया है तो उसे वापस कर देने का हक़ है। इमाम अबू

हनीफ़ा (रह०) के नज़दीक दाम कम करा के फिर लेना जाइज़ नहीं, मगर उनके शागिर्दों में से इमाम अबू यूसुफ़ (रह०) इसकी इजाज़त देते हैं जबकि इमाम मुहम्मद (रह०) ख़रीदार के ऊपर छोड़ते हैं कि चाहे तो वापस करदे या चाहे तो दाम कम कराके ख़रीद ले, यह तो वह सूरत थी जब उसने कहा था कि नफ़ा लेकर बेचता हूँ लेकिन

(2) अगर उसने कहा कि मैं दाम के दाम यह चीज़ देता हूँ और फिर धोका साबित हो जाये तो सब के नज़दीक ख़रीदार को क़ीमत कम कराने का हक़ है।

माल मंगाने के ख़र्च को या माल ख़रीदने के बाद दुकानदार ने जो कुछ ख़र्च किया उसको असल क़ीमत में शामिल करने का हक़ है जैसे रेल का और चुंगी का ख़र्च, पैक कराने, ख़रीदे हुए कागज़ की कापियाँ बनवाने, ख़रीदी हुई किताबों की जिल्दें बनवाने पर जो ख़र्च हो उसे असल क़ीमत के साथ लिया जा सकता है, मगर वह यह न कहे कि मैंने इतने में ख़रीदा है बल्कि यह कहे कि इतने में पड़ा है, ताकि झूठ न हो क्योंकि झूठ बोल कर बेचना हराम है।

कमीशन पर या उज्रत पर एजेन्ट मुक़र्रर करना: 1.एजेन्टों से ज़मानत ली जा सकती है मगर यह शर्त लगाना कि अगर इतना माल न बेचा या इतने दिन काम न किया तो ज़मानत का रूपया ज़ब्त कर लिया जायेगा, जाइज़ नहीं, हाँ अगर हिदायत के ख़िलाफ़ काम करे और नुक़सान हो जाये, या वह कोई चीज़ लेकर ग़ायब हो जाये तो इस नुक़सान को पूरा करने के लिये ज़मानत का रूपया लिया जा सकता है।

2. एजेन्ट को माल दिया और हिदायत की कि एक रूपये की 1 दर्जन या 20 रूपये का 1 मन के हिसाब से बेचो, उसने वह चीज़ सवा रूपये 1 दर्जन या 22 रूपये का 1 मन के हिसाब से बेची तो ये 4 आने या 2 रूपये एजेन्ट के नहीं मालिक के होंगे, ऐजेन्ट उन्हें नहीं ले सकता, मालिक अगर अपनी ख़ुशी से दे दे तो जाइज़ है।

3. बाग़ का फल बेचा तो ख़रीदार को उसी वक़्त तोड़ लेना चाहिये, मगर आम तौर पर फल पकने तक पेड़ ही पर रहता है जिसकी इजाज़त बेचने वाले की तरफ़ से होती है लेकिन अगर बेचने वाला उस पर राज़ी न हो तो वह फल तोड़ लेने पर मजबूर कर सकता है।

4. किसी चीज़ को नीलाम कर के बेचना जाइज़ है, यह काम रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से साबित है।

5. हुन्डी में बट्टा काटना जाइज़ नहीं है।

6. रेलवे स्टेशन से माल उठा लेने की एक मुद्दत मुक़र्रर होती है जिसके बाद डेमर्ज लगना शुरू हो जाता है, लेकिन माल को बेच कर उस की क़ीमत रेलवे को ले लेने का हक़ नहीं है क़ीमत माल वाले ही को मिलनी चाहिये।

7. यह एलान कर के बेचना जाइज़ है कि जो साहब फ़लाँ वक़्त तक क़ीमत या चनदा भेज देंगे, उनको यह किताब या रिसाला या माल इतने रूपये में मिलेगा और उसके बाद क़ीमत बढ़ जायेगी।

8. लेकिन बैअ का यह तरीक़ा कि जो शख़्स इतना रूपया या इतनी फ़ीस मिम्बरी अदा कर दे उसे ज़िन्दगी भर इदारा (संस्था) का रिसाला (मैग्ज़ीन) या उसके यहाँ छपने वाली किताबें दी जायेंगी कई वजह से नाजाइज़ है क्योंकि यह बैअे मुआवमा (भविष्य का सौदा) है जिसका ज़िक्र किया जा चुका है या यह बैउल हुब्ला है यानी चीज़ वजूद में नहीं आयी है इसका ज़िक्र भी किया जा चुका है या यह एक तरह का जुआ है क्योंकि मुम्किन है कि संस्था आने वाले दिनों में न चल सके, ज़िन्दगी भर किसी रिआयत का लालच दे कर रूपया वसूल करना एक धोका है।

9. बैअ का हर वह मुआमला जिसमें सूद का शक हो सही नहीं है, बैअे बातिल और फ़ासिद दोनों हराम है।

10. ख़रीदार को माल वाले से यह पूछना ज़रूरी नहीं है कि तुमने यह चीज़ हलाल ज़रिये से कमाई है या हराम ज़रिये से लेकिन अगर यह मालूम हो जाये कि वह चोरी या धोके फ़रेब से चीज़ें हासिल करता है तो एहतियात के तौर पर पूछ लेना चाहिये और उन्हें ख़रीदने से बचना चाहिये।

11. जो माल विरासत या हदिये के तौरपर मिले और यह मालूम हो कि उसे हराम तरीक़े से हासिल किया गया था या किसी का हक़ मार कर लिया गया था तो माल जिस का है उसे वापस कर देना चाहिये और अगर वह न मिले तो सदक़ा (दान) कर देना चाहिये, अगर इस्तेमाल कर लिया तो अगरचे हुकूमत उसको इस लिये सज़ा नहीं देगी कि उस ने हराम तरीक़े से कमाने का जुर्म खुद नहीं किया मगर गुनहगार ज़रूर होगा कि उस ने हराम तरीक़े से कमाये हुए माल को रग़बत से खाया, बहुत ज़्यादा ग़रीबी और मजबूरी की हालत में अगर उसमें से इतना खाये कि काम चल जाये तो गुनाह नहीं होगा।

12. अगर नापाक चीज़ बेच दी गई और ख़रीदने वाले को उस की जानकारी हो गई तो वह उसे वापस कर सकता है।

13. तेल या घी वग़ैरा नापाक हो जाये तो उसे ख़रीदार को बता कर बेच देना जाइज़ है ताकि वह उसे खाने में इस्तेमाल न करे और दूसरे काम में लाये।

14. औरत का दूध बेचना नाजाइज़ है।

15. जानवर इस शर्त के साथ देना कि उसे खिलाने पिलाने और चराने के बाद जब बच्चे होंगे तो दोनों बाँट लेंगे इसे देहात में अधिया कहते हैं, यह नाजाइज़ है, बच्चे मालिक के ही रहेंगे और चरवाहा चराने और खिलाने की मज़दूरी का हक़दार होगा।

इसी तरह अगर किसी ने अपनी ज़मीन पेड़ लगाने के लिये इस लिये दी कि फलों और पेड़ों में आधा-आधा हिस्सा दोनों का होगा यह भी नाजाइज़ है, लगाने वाला सिर्फ़ पेड़ों और अपनी मेहनत का

मेहनताना ले सकता है, पेड़ों और फलों में उसका कोई हिस्सा नहीं होगा। लेकिन अगर लगे हुए बाग़ में फलों की देख भाल करने की मज़दूरी में कुछ फल दिये जायें तो यह जाइज़ है।

16. ग़ैर जानदार चीज़ों के बने हुए खिलौनों का बेचना और ख़रीदना जाइज़ है।

17. कुत्ता पालना शौक़ और दिल बहलाने के लिये हराम है, हाँ अगर खेती मकान और जानवरों की हिफ़ाज़त या शिकार के लिये पाला जाये तो इसकी इज़ाज़त दी गई है, मगर जहाँ तक हो सके घर के अन्दर न जाने देना चाहिये। कुत्ते की ख़रीद व फ़रोख़्त की इजाज़त इमाम अबू हनीफ़ा (रह०) ने इस लिये दी कि ज़रूरत के लिये उसका पालना जाइज़ है। दूसरे इमाम जो उसकी ख़रीद व फ़रोख़्त को सही नहीं मानते वे उस हदीस से दलील पकड़ते हैं जिस में कुत्ते की क़ीमत खाने से मना किया गया है।

18. ख़रीदार ख़रीदा हुआ माल अगर वापस करे तो उसको लाने लेजाने और उठाने की मज़दूरी भी उसी को देना होगी।

19. अगर किसी ने ऐसा मुर्ग़ ख़रीद लिया जो बग़ैर वक़्त के बोलता हो या ऐसा जानवर ख़रीद लिया जो गंदगी खाता है तो यह ऐब है जिसकी वजह से वापसी की जा सकती है।

20. अगर जानवर दो तीन बार भाग जाये तो ऐब नहीं है लेकिन अगर बराबर भाग जाता हो तो ऐब है, ख़रीदार उसे वापस कर सकता है।

21. अगर ऐसा मकान ख़रीदा जिसे लोग मनहूस कहा करते थे अगरचे इस्लाम में नहूसत का कोई एतेबार नहीं है लेकिन चूँकि यह मशहूर होने की वजह से कोई किरायादार नहीं आयेगा और बेचते वक़्त क़ीमत घट जायेगी इस लिये ख़रीदने वाला उसको वापस कर सकता है।

22. कुछ तिजारती संस्थाएं और कम्पनियाँ ये एलान करती हैं कि जो इतने टिकट बेच देगा उसको फ़लाँ चीज़ कम्पनी की तरफ़ से इनाम दी जायेगी, इस तरीक़े से हासिल की हुई चीज़ जाइज़ नहीं, क्योंकि उसमें यह शर्त छुपी होती है कि इतने टिकट न बिके तो रूपया ज़ब्त हो जायेगा गोया यह क़िस्मत और इत्तिफ़ाक़ पर निर्भर है, इसी का नाम जआ है फिर यह शर्त भी सही नहीं है कि इतने टिकट बेच कर ख़रीदार पैदा किये जायें, फ़ासिद शर्त का हुक्म सूद की तरह है।

23. माल जब तक ख़रीदने वाले को न मिल जाये, रेल या रास्ते या जहाज़ में अगर कोई नुक़सान पहुंचता है तो उसकी ज़िम्मेदारी बेचने वाले पर होगी मगर जब माल वहाँ पहुंचा दिया गया जहाँ ख़रीदने वाले ने मंगाया है और ख़रीदने वाले ने देख लिया कि माल पूरा है तो बेचने वाले की ज़िम्मेदारी ख़त्म हो गई, अब अगर माल को कोई नुक़सान होता है तो ख़रीदने वाले को बर्दाश्त करना होगा, अगर रेलवे स्टेशन पर नुक़सान पहुंचा तो रेवले से जुर्माना वसूल किया जायेगा।

एहतिकार (माल जमा करना): ज़रूरत की चीज़ें कुछ ख़ुदग़र्ज़ लोग इस लिये जमा कर लेते हैं कि जब बाज़ार में उनकी कमी होगी और उनकी माँग ज़्यादा हो तो वे ज़रूरतमंदों के हाथ मनमाने दामों पर बेच कर दौलत कमायें, इस काम को शरीअत में एहतिकार कहते हैं जो इस्लाम में बहुत नापसन्दीदा है, नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने माल जमा करने वाले पर लानत भेजी है और दोज़ख़ के अज़ाब से डराया है क्योंकि यह आम इन्सानों के लिये तकलीफ़ और ज़हमत का सबब होता है। जिस ज़माने में सामान को लाने लेजाने और उठाने की सुविधायें कम थीं तो तकलीफ़ उठाने वाले लोग भी कम थे लेकिन जब से ये सुविधायें बढ़ीं तो माल जमा करने के असर से पूरे मुल्क को तकलीफ़ पहुंचती है और जहाँ बाढ़ और सूखे से ग़ल्ले की पैदावार घटती है उसका पता इन ख़ुदग़र्ज़ ताजिरों को हो

जाता है और वे ग़ल्ले का स्टाक करना शुरू कर देते हैं ताकि महंगाई ख़ूब बढ़े, अगरचे मुल्की क़ानून भी माल का स्टाक करने की इजाज़त नहीं देता लेकिन इस पर पाबन्दी भी नहीं लगाई गई है जबकि इस्लामी शरीअत इस पर पाबन्दी लगाती है और चारों इमाम एहतिकार के मकरूह होने पर एक राय हैं क्योंकि इससे स्टाक करने वालों के अलावा सब को नुक़सान पहुंचता है।

हाँ अगर स्टाक करने से किसी का कोई नुक़सान न हो तो किया जा सकता है इमाम इब्ने क़य्यिम (रह०) ने इस बारे में लिखा है-

> "जो माल जमा करने वाला ज़रूरत की चीज़े ख़रीद कर उनका स्टाक करता है और मक़सद यह होता है कि उन को महंगा बेच कर फ़ायदा उठाये तो लोगों के लिये वह ज़ालिम है, इस लिये हुकूमत को चाहिये कि उसको ज़बरदस्ती मजबूर करे कि उस माल की जो मुनासिब क़ीमत हो उतने में बेच कर लोगों की ज़रूरत पूरी करे।"

हज़रत उमर (र.अ.त.) अपने ख़िलाफ़त के ज़माने में बाज़ार की देख भाल खुद करते थे और अजमी (ग़ैरे अरब) व्यवपारियों को बाज़ार में ग़ल्ला बेचने की इजाज़त नहीं देते थे, ज़ाहिर में इस की वजह तो यह थी कि वे व्यवपार के इस्लामी तरीक़ों का लिहाज़ न रखेंगे और दूसरी वजह यह कि उनकी ज़हनियत का असर मुसलमान व्यवपारी कुबूल न कर लें।

अपनी पैदावार को अपनी ज़रूरत के लिये रोकना एहतिकार नहीं है, बल्कि दूसरों के हाथ बेचने के लिये मंहगाई के इन्तिज़ार में रोकना एहतिकार है और हुकूमत उसको अपने मुक़र्रर किये हुये भाव पर बेचने के लिये मजबूर कर सकती है। (रद्दुल मुख़्तार)

तसईर (भाव मुक़र्रर करना): इस्लामी शरीअत ने किसी शख़्स या हुकूमत को किसी चीज़ का भाव मुकर्रर करने की इजाज़त आम हालात में नहीं दी है, तमाम इमाम इसको मकरूह क़रार देते हैं जो

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैह वसल्लम के तरीके के मुताबिक़ है, एक बार मदीने के बाज़ार में ग़ल्ला बहुत महंगा हो गया तो सहाबा (र.त.अ.) ने आपसे ग़ल्ले का भाव मुक़र्रर कर देने के लिये कहा जिस पर आपने फ़रमाया कि यह हक़ सिर्फ़ ख़ुदा को है, वही रोज़ी देने वाला है और तंगी व कुशादगी लाने वाला है मैं ख़ुदा के सामने इस हाल में जाना नहीं चाहता कि मेरा दामन किसी की जान व माल पर ज़ुल्म से दाग़दार हो। मक़सद यह है कि मंहगाई को रोकने का यह ग़ैर फ़ितरी तरीक़ा है कि कोई शख़्स किसी चीज़ का भाव अपने हिसाब से बनाये, बेहतर और फ़ितरी तरीक़ा यह है कि लोगों की ज़हनियत ऐसी बन जाये कि लोग अपने फ़ायदे के लिये दूसरों पर ज़ुल्म न करें, लेकिन अगर फिर भी महंगाई बढ़ जाये, लोग फ़ाक़े करने लगें और उस मंहगाई की वजह व्यवपारियों की ख़ुदग़र्ज़ी हो तो हुकूमत भाव मुक़र्रर कर के तमाम व्यवपारियों को पाबन्द कर सकती है कि वे इसी क़ीमत पर अपना माल बेचें मगर यह इज़्तिरारी (प्रतिकूल) हालत दूर होते ही क़ीमत की तअईन ख़त्म हो जायेगी।

क़ीमत मुक़र्रर करने की यह इजाज़त फुक़हा ने सिर्फ़ हंगामी (इमरजेंसी हालत में) सुधार के लिये दी है यानी उस वक़्त जब अवाम को ज़्यादा तकलीफ़ हो रही हो और लोगों को भूखे रहना पड़ रहा हो। इस ज़माने में कुछ मुल्कों में जो कंट्रोल रेट क़ायम कर दिये जाते हैं और हुकूमत ख़ुद व्यवपारी बन कर बेचने लगती है, इस्लामी शरीअत में इसकी इजाज़त नहीं है तजर्बा गवाह है कि इससे ब्लेक मार्केटिंग को ही बढोतरी मिलती है जो बहुत बड़ी लानत है।

....❀....

मुज़ारबत

(यानी एक शख़्स का रूपया और दूसरे की मेहनत)

इस्लामी शरीअत ने अकेले कारोबार करने के अलावा जिनका ज़िक्र किया जा चुका है दूसरे तरीक़े भी कारोबार के बनाये हैं, कुछ लोगों के पास पैसा होता है मगर मेहनत कर के रोज़ी कमाने की योग्यता कम होती है, या एक ग़रीब आदमी जिसके पास पैसा तो नहीं होता लेकिन मेहनत कर के रोज़ी का सामान हासिल कर सकता है, इस्लाम ने इस बात की इजाज़त और तर्ग़ीब दी है कि लोग अपना पैसा ग़रीबों को दे कर उनसे मेहनत करायें और दोनों मिल कर फ़ायदा उठायें, इसी से मुज़ारबत और शिर्कत के उसूले तिजारत इस्लामी शरीअत ने स्पष्ट किये हैं।

साहूकार से सूद पर कर्ज़ ले कर कारोबार करने का तरीक़ा जो जाहिलियत के ज़माने में राइज था, इस्लाम ने उसे बिल्कुल हराम ठहराया, मौजूदा ज़माने में बैंकिंग सिस्टम उसी नमूने पर चल रहा है यानी बैंक सूद पर क़र्ज़ देते हैं, क़र्ज़ लेने वाले पर सूद का बोझ इतना पड़ता है कि अगर वह सही तौर पर कारोबार करे तो न सूद अदा कर सके और न अपना घर चला सके, मजबूरन वह ऐसे तरीक़े इख़्तियार करता है जिनसे ये दोनों बातें पूरी हों, नतीजे में अवाम पर पूरा बोझ पड़ता है और वही मुसीबत उठाते हैं अगर मुज़ारबत की बुनियाद पर बैंक रूपया देने लगें तो ये तमाम मुसीबतें दूर हो सकती हैं।

मुज़ारबत की लुग़वी और इस्तिलाही तशरीह: लुग़त/डिक्शनरी में ज़र्ब का अर्थ मारने या चलने फिरने का है, इस्तिलाह (शब्दावली) में रोज़ी की तलाश में दौड़ धूप और चलने फिरने का है, चूंकि इस में एक आदमी पैसा लगाता है और दूसरा अपनी मेहनत और दौड़ धूप से उससे कमाने और फ़ायदा हासिल करने की कोशिश करता है

इस लिये इस मुआमले को मुज़ारबत कहते हैं, कुरआन में अल्लाह का फ़रमान है -

يَضْرِبُوْنَ فِي الْاَرْضِ يَبْتَغُوْنَ مِنْ فَضْلِ اللّٰهِ.

"यज़रिबूना फ़िल-अर्ज़ि यबतग़ूना मिन फ़ज़लिल्लाहि"

अनुवादः ज़मीन में दौड़ धूप कर के अपनी रोज़ी हासिल करते हैं।

नबी करीम अलैहिस्सलाम ने हज़रत ख़दीजा का रूपया ले कर इसी तरीक़े से तिजारत की थी। आम सहाबा भी लोगों से रूपया ले कर या दूसरों को रूपया दे कर ख़ुद भी फ़ायदा उठाते और दूसरों को भी फ़ायदा पहुंचाते थे। (हिदाया)

रूपये देने वाला माल का मालिक है, मेहनत करने वाला मुज़ारिब और जो रूपया कारोबार के लिये दिया जाता है वह रासुल माल कहलाता है।

मुज़ारबत का मुआहदाः माल का मालिक और मुज़ारिब दोनों मुआहदा करते हैं कि एक के रूपये और दूसरे की मेहनत से जो कुछ फ़ायदा होगा उसमें आधा (1/2) या चौथाई (1/4) रूपया लगाने वाला पायेगा और आधा (1/2) या तीन चौथाई (3/4) मेहनत करने वाले को मिलेगा। या एक तिहाई 1/3 रूपया लगाने वाले को और दो तिहाई 2/3 मेहनत करने वाले को मिलेगा।

मुज़ारबत की क़िस्में: दो क़िस्मों की मुज़ारबत होती है (1) मुक़य्यद और (2) मुतलक़

मुक़य्यद वह मुज़ारबत कहलाती है जिसमें माल का मालिक किसी ख़ास जगह, ख़ास मुद्दत, या ख़ास कारोबार की क़ैद लगा दे जैसे इस रूपये से तुम सिर्फ़ लखनऊ या कानपुर ही में काम कर सकते हो दूसरी जगह नहीं, या यह कि सिर्फ़ एक साल के लिये रूपये तुमको दिया जा रहा है या यह कि यह रूपया सिर्फ़ कपड़े के कारोबार ही में लगाया जाये दूसरा काम न किया जाये। मुतलक़ वह

मुज़ारबत कहलाती है जिस में कोई कै़द न लगाई गई हो बल्कि मुज़ारिब (काम करने वाले) पसंद पर छोड़ दिया गया हो।

मुआहदा तोड़ने का इख़्तियार: मुआहदा तै हो गया लेकिन मुज़ारिब ने अभी काम करना नहीं शुरू किया तो दोनों में हर एक को मुआहदा तोड़ देने का इख़्तियार है, इसमें तमाम इमामों की एक राय है, काम शुरू कर देने के बाद मुआहदा तोड़ने का हक़ रहता है या नहीं इसमें इमामों की रायें ये हैं –

इमाम मालिक (रह०) फ़रमाते हैं कि अब किसी को मुआहदा तोड़ने का हक़ नहीं, अगर मुज़ारिब की मौत हो जाये तो उसके वारिसों को हक़ होगा कि वे उस माल से काम करें और फ़ायदा उठायें क्योंकि काम शुरू करने के बाद मुआहदा तोड़ना मुज़ारिब के लिये तकलीफ़ का सबब हो सकता है और उसकी मेहनत और वक़्त भी बरबाद जायेंगे।

इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम शाफ़ई रहमतुल्लाह अलैहिमा के नज़दीक दोनों इमामों को हर वक़्त यह इख़्तियार है कि जब चाहें मुआमला तोड़ दें, ऐसी सूरत में मुज़ारिब ने जितना काम किया है उसकी मज़दूरी दस्तूर के मुताबिक़ उसे दी जायेगी। "दस्तूर के मुताबिक़ से वह मज़दूरी मुराद है जितना आम तौर से काम करने पर मिला करती है, इन दोनों के नज़दीक किसी एक फ़रीक़ (पक्ष) की मौत से भी यह मुआहदा टूट जायेगा मगर टूटने की ख़बर देना दोनों आदमियों या उनके वरिसों को ज़रूरी है, इसी तरह वक़्त की कै़द की सूरत में, मुक़र्ररह मुद्दत ख़त्म होते ही दोनों में से हर एक को मुआमला ख़त्म करने का इख़्तियार है।

मुज़ारबत की शर्तें: 1. माल के मालिक और काम करने वाले दोनों का अक़्लमंद होना ज़रूरी है, बालिग़ होना लाज़िम नहीं है, अक़्लमंद होने का मतलब यह है कि दोनों मुआमलात और नफ़ा व नुक़सान को समझते हों।

2. जो रक़म मुज़ारबत के लिये तै हुई हो वह तुरन्त मुज़ारिब (काम करने वाले) के हवाले कर दी जाये सिर्फ़ वादा कर लेने से मुज़ारबत पूरी नहीं होती।

3. जितनी रक़म से काम शुरू करना है वह उसी वक़्त बता दी जाये, अगर बताया नहीं गया तो मुज़ारबत सही न होगी, यानी यह बता दिया जाये कि काम सौ, दो सौ या पाँच सौ या दस हज़ार से शुरू होगा।

4. यह तै होना चाहिये कि मुनाफ़े में कितना हिस्सा माल के मालिक का होगा और कितना काम करने वाले का, अगर माल के मालिक ने सिर्फ़ यह कहा कि हम दोनों फ़ायदे में शरीक रहेंगे तो इस से यह समझा जायेगा कि आधा मुनाफ़ा माल के मालिक का और आधा काम करने वाले का होगा, लेकिन अगर यह कहा कि जो मुनाफ़ा होगा मुनासिब तौर पर बाँट लिया जायेगा तो मुज़ारबत सही नहीं होगी क्योंकि इस में इख़्तिलाफ़ का डर है।

5. दोनों तहरीरी तौर पर मुआमले की शर्तें लिख कर अपने अपने पास रख लें तो बेहतर है ताकि बाद में इख़्तिलाफ़ न हो अगर लिखे बग़ैर कोई सूरत इतमीनान की हो जाये तो कोई हर्ज नहीं है।

6. मुतलक़ मुज़ारबत में माल का मालिक और काम करने वाला यह भी तै कर लें कि कितने दिन बाद हिसाब कर के मुनाफ़ा बाँटा जायेगा।

मुज़ारबत ख़त्म हो जाने की सूरतें: 1. अगर माल के मालिक या काम करने वाले में से कोई यह शर्त लगाये कि नफ़े में एक मुक़र्रर रक़म मेरी होगी और जो बाक़ी बचे वह तुम्हारी होगी, या यह तै करे कि सौ या दो सौ रूपये पहले मैं ले लूँगा और बाक़ी मुनाफ़े में दोनों बराबर के शरीक होंगे तो दो सूरतों में मुज़ारबत सही नहीं होगी।

इस तरह ऐसे कारख़ानेदारों का कारोबार नाजाइज़ होगा जो दूसरों के रूपये से मुज़ारबत के तौर पर कोई कारख़ाना लगायें और हक़

मेहनत के तौर पर इन्तिज़ामी देख भाल के नाम से अपने लिये कुछ मुनाफ़ा ख़ास कर लें फिर बाक़ी मुनाफ़ा अपने और हिस्सेदारों के बीच बाँट कर दें। अगर मुज़ारिब कारख़ानेदार ने कोई तनख़्वाह वाला मैनेजर या क्लर्क रखा तो उस की तनख़्वाह वह मुनाफ़े की रक़म से दे सकता है, यह हुक्म इस सूरत में है जब कारख़ानेदार ने अपना रूपया कारोबार में न लगाया हो, लेकिन अगर अपना रूपया भी लगाया हो तो यह मुज़ारबत नहीं बल्कि शिराकत होगी जिसका बयान आगे आयेगा।

2. इमाम अबू हनीफ़ा (रह॰) सिर्फ़ रूपये पैसे में मुज़ारबत सही समझते हैं, मगर इमाम मालिक (रह॰) के नज़्दीक सामान में भी मुज़ारबत सही है, यानी किसी ने सामान दिया और कहा कि इसे बेचो, जो फ़ायदा होगा हम लोग आधा-आधा बाँट लेंगे, इमाम मालिक (रह॰) के नज़्दीक यह सही है। इमाम अबू हनीफ़ा इस लिये सही नहीं समझते कि इस सूरत में इख़्तिलाफ़ की गुंजाइश निकल सकती है, लेकिन अगर यह कहा कि इस सामान को बेच कर जो रूपया मिले उससे मुज़ारबत करो तो इमाम अबू हनीफ़ा (रह॰) के नज़्दीक भी मुज़ारबत जाइज़ हो जायेगी।

3. माल के मालिक ने रूपया नक़द नहीं दिया बल्कि यह कहा कि हमारा इतना रूपया फ़लां के पास में है उससे वसूल करके कारोबार करो, नफ़े में दोनों शरीक होंगे तो यह मुज़ारबत सही होगी, लेकिन अगर यह कहा कि तुम्हारे ज़िम्मे जो रूपया है उससे व्यापार करो तो यह जाइज़ नहीं होगा, क्योंकि यह क़र्ज़ से फ़ायदा उठाना हुआ जो नाजाइज़ है, इसी तरह अगर काम करने वाले ने पूरा रूपया वसूल करने से पहले ही काम शुरू कर दिया तो यह भी नाजाइज़ है।

4. मुज़ारबत में रूपया लगाने वाला (माल का मालिक) सिर्फ़ रूपया देगा, काम में शरीक होने की शर्त सही नहीं है, अगर उसने मुज़ारिब से यह शर्त लगाई कि मैं ख़ुद या मेरा कोई आदमी तुम्हारे साथ काम में शरीक रहेगा, तो यह शर्त मुज़ारबत को फ़ासिद (ख़त्म)

कर देगी क्योंकि यह मुज़ारिब के मेहनत के हक़ में मुदाख़लत होगी, अगर मुज़ारिब चाहे तो ख़ुद किसी को रख सकता है।

माल के मालिक और मुज़ारिब के हुकूक़ व इख़्तियारात:

1. माल के मालिक यानी रूपया लगाने वाले को यह हक़ है कि वह किसी ख़ास कारोबार में रूपया लगाने की शर्त रखे, अगर मुज़ारिब इसके ख़िलाफ़ करे और उसमें नुक़सान हो जाये तो उसकी ज़िम्मेदारी मुज़ारिब पर होगी।

2. माल का मालिक यह शर्त भी लगा सकता है कि कारोबार फ़लाँ जगह पर किया जाये, जैसे देहली, बम्बई, लखनऊ वग़ैरा।

3. माल का मालिक यह शर्त भी लगा सकता है कि रूपया इतने दिनों के लिये देता हूं जैसे छह महीने या एक साल।

4. माल के मालिक ने एक हज़ार रूपया दिया, मुज़ारिब ने उसमें से सौ रूपये कारोबार के इन्तिज़ाम में ख़र्च कर दिये फिर एक साल या छह महीने में दो सौ रूपये कमाये तो एक सौ रूपया असल पूंजी में से निकल जायेगा और बाक़ी एक सौ असल नफ़ा माना जायेगा और वह दोनों के बीच मुआहदे के मुताबिक़ बांटे जायेंगे।

5. माल के मालिक और मुज़ारिब की मौजूदगी बांटने के वक़्त ज़रूरी है।

6. माल का मालिक अगर यह शर्त लगाये कि नुक़सान दोनों में शामिल रहेगा तो मुज़ारबत सही नहीं होगी।

उसको इसका हक़ नहीं है

1. मुज़ारिब ने जो रूपया कारोबार करने के लिये लिया उसका वह अमीन (संरक्षक) भी है और वकील भी, जिस तरह एक ईमानदार अमानत की हिफ़ाज़त करता है उसी तरह उसको इस पूँजी की हिफ़ाज़त करनी चाहिये, अगर इत्तिफ़ाक़ से पूंजी में कोई नुक़सान आ जाये या वह बरबाद हो जाये तो उस पर इसकी ज़िम्मेदारी न होगी यानी उसका जुर्माना नहीं लिया जायेगा लेकिन अगर यह सुबूत

मिल जाये कि उसने जान बूझ कर माल बरबाद किया है तो उस पर ज़िम्मेदारी होगी, अगर उसने पूँजी लगाने वाले की शर्तों के ख़िलाफ़ काम किया और घाटा हुआ तब भी उस पर ज़िम्मेदारी होगी।

2. मुज़ारिब को वकील होने की हैसियत से पूरा इख़्तियार है कि तै की हुई शर्तों के तहत जिस तरह कारोबार करना चाहे करे, अगर कोई ख़ास कारोबार करने या किसी ख़ास जगह पर कारोबार करने का इख़्तियार दिया गया है तो उससे आगे बढ़ना सही नहीं है जैसे अगर यह शर्त लगा दी है कि लखनऊ में रह कर कपड़े ख़रीदो और बेचो तो मुज़ारिब पर उसकी पाबन्दी ज़रूरी होगी।

3. मुज़ारिब को हक़ है कि नक़द या उधार माल ख़रीदे या बेचे, या अपनी मदद के लिये किसी को तनख़्वाह पर या रोज़ाना की मज़दूरी पर रख ले माल का मालिक कोई रोक नहीं लगा सकता, अगर उसने कोई ख़ास काम और महदूद कारोबार की शर्त न लगाई हो और मुज़ारिब को कारोबार करने का इख़्तियार दिया हो तो वह जो कारोबार चाहे और जहाँ चाहे कर सकता है। लेकिन अगर उसने ख़रीदने और बेचने में ज़्यादा धोका खाया तो उसकी ज़िम्मेदारी उस पर होगी। मुज़ारिब को यह हक़ न होगा कि मुज़ारबत के माल में से किसी को क़र्ज़ दे या दान दे, इसके लिये मालिक की इजाज़त ज़रूरी है अगर इजाज़त के बग़ैर मुज़ारबत का रूपया क़र्ज़ दे दिया और वह मारा गया या नुक़सान हो गया तो उसकी ज़िम्मेदारी उस पर होगी।

4. मुज़ारिब को जो पूँजी मालिक ने सौंपी है उस में से मुज़ारिब को ज़रूरत के वक़्त रहन (गिरवी) या अमानत रखने और हवाला करने का इख़्तियार होगा इन तीनों सूरतों में अगर कोई नुक़सान हो जाये तो उसका जुर्माना मुज़ारिब पर नहीं लागू किया जायेगा। (अमानत और हवाले का बयान आगे आता है)

5. मुज़ारिब "कारोबार" ‿गर अपने वतन ही में करे तो अपने खाने पीने का ख़र्च मुज़ारबत के माल से नहीं ले सकता, सवारी ख़र्च सिर्फ़ उस सूरत में ले सकता है जब बड़ा शहर हो, जहाँ एक जगह

से दूसरी जगह जाने के लिये सवारी की ज़रूरत पड़ती हो या स्टेशन दूर हो और माल सवारी पर ही लाया जा सकता हो, अलबत्ता अगर माल ख़रीदने और बेचने के लिये वतन से बाहर जाने की ज़रूरत पड़ जाये तो वह खाने पीने, सवारी और कपड़ों की धुलाई का ख़र्च मुज़ारबत के माल से ले सकता है। इमाम अबू हनीफ़ा (रह०) के नज़दीक दवा का भी ख़र्च ले सकता है अगर सेहत क़ायम रहने के लिये दवा लाज़िम हो। अकेले काम न कर सकता हो तो कोई दूसरा आदमी मज़दूरी पर रख सकता है, लेकिन इन ख़र्च को लेते वक़्त इस बात का ध्यान रखना होगा कि जिस हैसियत का वह खुद है उससे ज़्यादा ख़र्च न करे जैसे वह दूसरे दर्जे में सफ़र करने और दाल रोटी खाने का अपने घर में आदी है तो मुज़ारिब की हैसियत से भी उसे ऊँचे दर्जे में सफ़र करना और ज़्यादा क़ीमती खाना खाना जाइज़ नहीं।

6. मुज़ारबत के माल में कोई नुक़सान हो जाये जबकि उस में मुज़ारिब की ग़फ़लत न हो तो उसे नफ़े की रक़म से पूरा किया जायेगा, मुज़ारिब से उस का जुर्माना नहीं लिया जायेगा अगर नुक़सान फ़ायदे से ज़्यादा का हो तो मालिक बार्दश्त करेगा, मुज़ारिब सिर्फ़ उस सूरत में नुक़सान का ज़िम्मेदार होगा जब उस की ग़फ़लत से या माल ख़रीदने में कोई बड़ा धोका खा जाने की वजह से नुक़सान हुआ हो, मिसाल के तौर पर कोई माल दस रूपये में एक मन के हिसाब से ख़रीदा और बाज़ार में उसका भाव वही था लेकिन दूसरे दिन एकदम भाव गिर गया तो जो नुक़सान इस सूरत में होगा उसकी ज़िम्मेदारी मुज़ारिब पर नहीं होगी, लेकिन अगर उस चीज़ का आम भाव आठ रूपये एक मन के हिसाब से था और उसने बग़ैर जाने बूझे 9 या 10 रूपये के भाव से ख़रीद लिया तो उस नुक़सान का ज़िम्मेदार वह होगा; इसी तरह अगर उसने माल की हिफ़ाज़त नहीं की और वह ख़राब हो गया या उसने मालिक की हिदायत के ख़िलाफ़ काम किया और नुक़सान हो गया तो ऐसे नुक़सान की ज़िम्मेदारी मुज़ारिब पर होगी और जुर्माना देना होगा जिस का अन्दाज़ा वे लोग लगायेंगे जो उस कारोबार के करने वाले हैं।

7. मुनाफ़े को ख़र्च निकालने के बाद बाँटा जायेगा, जैसे असल माल एक हज़ार रूपये है सफ़र और दूसरी कारोबारी ज़रूरतों में 200 रूपये ख़र्च किये, मुनाफ़ा चार सौ रूपया हो तो दो सौ जो असल पूंजी से ख़र्च हुए निकाल कर बाक़ी दो सौ मुआहदे के मुताबिक़ दोनों में बांटे जायेंगे।

मक़सद यह है कि फ़ायदे की सूरत में असल पूंजी महफ़ूज़ (सुरक्षित) रखी जाये और नुक़सान की सूरत में मुज़ारिब पर कोई ज़िम्मेदारी नहीं अगर उसने ग़फ़लत न की हो न मुआहदे की ख़िलाफ़वर्ज़ी की हो।

8. मुज़ारबत का मुआमला किसी वजह से ख़त्म हो जाये तो मुज़ारिब ने जितना काम किया हो उसकी मज़दूरी उसे मिलेगी लेकिन, वह उस मुनाफ़े की मात्रा से ज़्यादा न होगी जो उसने अब तक कमाया है। यह उस सूरत में है जब कुछ फ़ायदा हुआ हो लेकिन अगर फ़ायदा होने से पहले मुआमला ख़त्म हो जाये तो उसे कुछ न मिलेगा, जैसे एक हज़ार रूपये से कारोबार शुरू किया गया, 200 रूपये का फ़ायादा हुआ कि मुज़ारबत ख़त्म हो गई तो जितने दिन उसने काम किया जोड़ कर मज़दूरी का हिसाब होगा लेकिन अगर कोई फ़ायदा नहीं हुआ और मुआमला ख़त्म हो गया तो मुज़ारिब को कुछ भी न मिलेगा और अगर फ़ायदा हुआ है मगर वह इतना कम है कि मज़दूरी फ़ायदे से ज़्यादा होती है तो मुनाफ़े की रक़म से ज़्यादा मज़दूरी नहीं दी जायेगी।

मुज़ारबत से बैंक क़ायम करना: मुज़ारबत की शर्तों पर रूपया इकट्ठा कर के बैंक क़ायम किया जा सकता है इसका विवरण (तफ़्सील) अमानत के बयान में आयेगा।

शिर्कत

मुज़ारबत की तरह इस्लामी शरीअत ने कारोबार की कुछ और सूरतें भी जाइज़ क़रार दी हैं ताकि वे लोग जो पूंजी कम रखते हैं या बिलकुल नहीं रखते वे भी अपनी रोज़ी का सामान कर सकें और सनअती (औद्योगिक) व तिजारती कारोबार में तरक़्क़ी का सबब बनें, उनमें से एक शिर्कत से कारोबार करना है चाहे वह तिजारत में हो या सनअत में या ज़िराअत (कृषि) में या किसी दूसरे पेशे और इल्मी काम में, इन कामों में कम से कम दो और ज़्यादा से ज़्यादा जितने आदमी चाहें शिर्कत कर सकते हैं, आज कल इस तरह से बड़े-बड़े तिजारती और सनअती कारोबार चल रहे हैं जिन लोगों ने ज़्यादा पैसा लगाया है उन्हें ज़्यादा फ़ायदा हो रहा है जबकि कम पैसा लगाने वालों को फ़ायदा बहुत कम होता है आम तौरपर शिर्कती कारोबार करने वाले लाखों आदमियों को हिस्सेदार बनाते हैं और उनसे रूपया हासिल कर के पूंजी जमा करते हैं फिर उसमें से कुछ पूंजी चीज़ों का इन्तिज़ाम करने, कारख़ाने की इमारत और मशीनों की ख़रीदारी पर ख़र्च करते हैं, काम करने वालों की तनख़्वाहें देते हैं और जब कारोबार चलने लगता है तो सालाना आमदनी में से ख़र्च निकालने के बाद जो रक़म बचती है वह हिस्सेदारों को हिस्से के अनुसार बांटते हैं अब अगर कोई हिस्सेदार फ़ायदा न देख कर अलग होना चाहे तो उसे वही कुछ रूपये मिल पाते हैं जो उसने हिस्सेदार होने की हैसियत से दिये थे यानी उसका हिस्सा असल क़ीमत वापस करके ख़रीद लिया जाता है, इस तरह सारे कारोबार पर आहिस्ता आहिस्ता वही लोग क़ब्ज़ा कर लेते हैं जिन्हों ने उसे शुरू किया था।

इस्लामी शरीअत ने शिर्कत में काम करने वालों के लिये जो उसूल और क़ानून बनाये हैं अगर उनका लिहाज़ रखा जाये तो बड़े से

बड़ा करोबार शिर्कत में चलाया जा सकता है, सारे हिस्सेदार फ़ायदा उठा सकते हैं, मुल्क की सनअत व तिजारत को बढ़ोतरी हासिल हो सकती है और हज़ारों बेकार लोग रोज़ी कमा सकते हैं, वह सारी बेइन्साफ़ी, ज़्यादती और बेईमानी ख़त्म की जा सकती है जो इस तरह के कारोबार में हो रही है, इस्लाम बेइन्साफ़ों और ज़्यादती और बेईमानी करने वालों को मुजरिम क़रार देता है हदीसे कुदसी में है कि अल्लाह तआला ने फ़रमाया "जब दो शख़्स मिल कर कोई काम करते हैं तो जब तक वे आपस में बेईमानी नहीं करते मैं उनके साथ होता हूं (मदद करता और बरकत देता हूं) लेकिन जब वे बेईमानी शुरू कर देते हैं तो मैं उनकी मदद करना छोड़ देता हूं"। (मिशकात)

शरीकों की हैसियतः अपनी ग़र्ज़ और अपने फ़ायदे सामने रख कर ही मौजूदा ज़माने में लोग इशतिराक (साझेदारी) करते हैं उनमें कोई अख़लाक़ी क़द्र शामिल नहीं होती लेकिन इस्लामी शरीअत ने माद्दी (भौतिक) फ़ायदे के साथ शरीकों की असल हैसियत यह क़रार दी है कि हर शरीक माल का और उससे किये जाने वाले कामों का अमीन भी है और वकील भी, यानी जिस तरह अमानत की हिफ़ाज़त की जाती है उसी तरह शिर्कत के माल की हिफ़ाज़त हर शरीक करे इसी लिये ग़लती से अगर कोई नुक़सान हो जाये तो शरीअत जुर्माना लागू नहीं क़रती। वकील की हैसियत से कोई शरीक माल को या मुशतरक कारोबार को अपने फ़ायदे के लिये इस्तेमाल न करे बल्कि मुनाफ़े में हर शरीक के हुकूक़ का ख़याल रखे, किसी को यह शिकायत न हो कि फ़लाँ ने सारा फ़ायदा समेट लिया और बाक़ी शुरका (साझीदार) नुक़सान में रहे। सहाबा किराम (र.अ.त.) ने नबी (स.अ.व.) के तरीक़े की रोशनी में जब शिर्कत का कोई कारोबार किया तो मुसलमान तो मुसलमान ग़ैर-मुस्लिमों तक से ऐसा इन्साफ़ किया है जो इतिहास में यादगार रह गया है। ख़ैबर के यहूदियों से तै था कि वे मुसलमानों की ज़मीन में खेती करें जो कुछ पैदा होगा उसे दोनों शरीक आधा-आधा बाँट लेंगे। चुनांचे हज़रत अब्दुल्लाह बिन

रवाहा को आँहज़रत सल्लल्लाहु अलहि वसल्लम ने ग़ल्ला वसूल करने के लिये भेजा तो उन्हों ने यहूदी किसानों से कहा कि या तो तुम लोग खुद बाँट दो या कहो तो मैं बाँटूँ, उन लोगों ने उन्हीं से बाँट देने को कहा, हज़रत अब्दुल्लाह बिन रवाहा ने दो बराबर के हिस्से अलग-अलग लगा दिये और कहा इनमें से जो चाहो ले लो, यह इन्साफ़ देख कर यहूदी पुकार उठे "वबिही क़ामतिस्समाओ वल अरज़ु" यानी इसी इन्साफ़ की वजह से ज़मीन व आसमान क़ायम हैं।

शिर्कत की क़िस्में: शिर्कत दो तरह की होती है एक शिर्कते इमलाक, दूसरी शर्कते उक़ूद, (1) शिर्कते इमलाक - यानी मिलकियत में शिर्कत, जैसे कुछ आदमियों को विरासत में या हिबा (उपहार) के तौर पर एक जायदाद या एक पूंजी मिली, दो या दो से ज़्यादा लोगों ने मिल कर कोई चीज़ ख़रीदी तो यह सब सूरतें शिर्कते इमलाक की हैं यानी एक चीज़ की मिलकियत में दो या कई आदमी शरीक हैं।

2. शिर्कते उक़ूद - यानी दो या कुछ आदमियों का आपस में मुआहदा कर के किसी कारोबार में शरीक होना, अक़्द का अर्थ बंधने या बाँधने का है, इसमें शुरका (साझीदार) मुआहदा कर के उसकी शर्तों के पाबन्द हो जाते हैं।

शिर्कते इमलाक का हुक्म: जितने लोग शरीक हों उनमें से किसी शरीक को तमाम शरीकों की इजाज़त के बग़ैर मुशतरक जायदाद या रूपये में कोई अधिकार नहीं है। जैसे किसी ने एक हज़ार रूपया या कुछ मकानात तरके में छोड़े तो उसमें जितने हिस्सेदार हैं चाहे किसी का हिस्सा कम हो या ज़्यादा उनमें से किसी एक को बग़ैर सब की मर्ज़ी के रूपया काम में लाने, मकानों को बेचने या किराये पर देने का हक़ नहीं है और न बाँटने का, इसी तरह दो या कई आदमियों ने मिल कर ग़ल्ला, कपड़ा, बाग़ या उसके फल ख़रीदे तो (1) अगर वे चीज़ें ऐसी हैं जिनमें कोई फ़र्क़ नहीं होता जैसे जौ गेहूँ वग़ैरा या

एक ही क़िस्म के कपड़े के बहुत से थान तो दूसरे शुरका की मौजूदगी के बग़ैर भी उस को बाँटा जा सकता है, एक शरीक अपना हिस्सा ले ले और बाक़ी शरीकों के हिस्से अलग कर के रख दे तो कोई हर्ज नहीं, लेकिन दूसरे शरीकों के पहुंचने से पहले अगर उसका हिस्सा ग़ायब हो गया तो दूसरे शुरका के हिस्सों में से उतना हिस्सा लेने का हक़ है कि उसका हिस्सा सब हिस्सों के बराबर हो जाये (अगर दो शरीक हों तो 1/2 और तीन हों तो 1/3 और चार हों तो 1/4) (2) अगर वे चीज़ें ऐसी हैं जिनमें कुछ फ़र्क़ होता है जैसे कई कपड़ों के दस बीस थान या फल या जानवर ख़रीदे तो चूँकि कोई थान अच्छा और कोई ख़राब, कोई फल बड़ा और कोई छोटा, कोई जानवर सुस्त और कोई तेज़ हो सकता है इस लिये सब शरीकों की मौजूदगी के बग़ैर उनको नहीं बाँटना चाहिये और न काम में लाना चाहिये क्योंकि इसमें इख़्तिलाफ़ की गुंजाइश है।

शिर्कते उक़ूद की कैफ़ियत: आपसी मुआहदे और इक़रार से शिर्कत क़ायम होती है जिसकी सूरत यह है कि दो या कई आदमी थोड़ी-थोड़ी पूंजी जामा कर के आपस में तै करते हैं कि हम सब मिल कर इस रूपये से फ़लां काम करेंगे और जो नफ़ा होगा वह आपस में इतने फ़ीसदी बांट लेंगे या किसी काम के बारे में यह तै कर लें कि सब मिल कर उसको करेंगे और जो फ़ायदा होगा बाँट लेंगे, यह इक़रार ज़बानी भी हो सकता है और तहरीरी भी। इमाम सरख़सी (रह०) ने तहरीरी मुआहदे पर ज़ोर दिया है (मबसूत)। मुआहदे के शुरका में से हर एक को इख़्तियार होगा कि जब चाहे अपने मुआहदे को तोड़ दे और अलग हो जाये उसका असर दूसरे शुरका पर नहीं पड़ेगा। शुरका में से अगर किसी की मौत हो जाये तो उसका मुआहदा ख़ुद बख़ुद ख़त्म हो जायेगा लेकिन अगर वुरसा चाहें तो उसको नये सिरे से शुरू कर सकते हैं।

शिर्कते उक़ूद की क़िस्में: शिर्कते उक़ूद की कई क़िस्में हैं और

उनके अलग-अलग आदेश हैं मगर कुछ बातें सब में पाई जाती हैं-

1. शिर्कत का क़ौल व क़रार बाक़ायदा होना, चाहे ज़ुबानी हो या लिख कर।
2. मुनाफ़े की तक़सीम का तनासुब (अनुपात) साफ़-साफ़ बयान होना कि कितना-कितना किस-किस को मिलेगा।
3. हर शरीक मुशतरका (साझे कखे) माल का अमीन भी होगा और वकील भी। अमीन की हैसियत से माल की हिफ़ाज़त का और वकील की हैसियत से कारोबार के प्रबन्ध में बराबर का ज़िम्मेदार होगा।
4. अगर तमाम शरीकों का हिस्सा पूंजी और काम में बराबर का हो तब भी आपस की रज़ामंदी से एक को ज़्यादा और एक को कम मुनाफ़ा देना तै किया जा सकता है, इसमें कोई हर्ज नहीं है।
5. हर शरीक को खुद या अपने किसी आदमी के ज़रिये काम में हिस्सा लेना ज़रूरी है लेकिन अगर किसी वजह से शरीक न हो सकता हो तब भी नफ़े में शरीक रहेगा क्योंकि घाटा हो जाने की सूरत में उसको भी नुक़सान बर्दाश्त करना पड़ेगा।
6. लेकिन अगर मुआमला करते वक़्त किसी शरीक ने यह कह दिया कि मैं इस काम में शरीक नहीं रहूँगा तो उसके लिये शरीक होना ज़रूरी नहीं होगा।

मजलिसे इन्तिज़ामिया: शिर्कत का कारोबार बड़े पैमाने पर चलाने या उसके प्रबन्ध को बाक़ी रखने के लिये शरीकों में से किसी एक या कई आदमियों को ज़िम्मेदारी सौंपी जा सकती है या उनके अलावा किसी आदमी को यह काम सौंपा जा सकता है, ऐसे शरीक के मुनाफ़े का हिस्सा उसका वक़्त ज़्यादा ख़र्च होने या इन्तिज़ामी योग्यता होने की वजह से कुछ बढ़ा कर मुक़र्रर किया जा सकता है बाहर का आदमी अगर काम करने के लिये शरीक की हैसियत से

कारोबार में शामिल हो तो मुनाफ़े का कुछ मुनासिब हिस्सा उसका मुक़र्रर कर के उसे मुज़ारिब माना जायेगा, और अगर वह मज़दूरी लेना पसन्द करे तो तनख़्वाह मुक़र्रर कर दी जायेगी और इस सूरत में वह मुनाफ़े में शरीक नहीं हो सकता किसी के लिये यह जाइज़ नहीं कि मुक़र्ररह तनख़्वाह भी ले और मुनाफ़े में भी शरीक हो।

शिर्कत की किस्में और उसके एहकाम व शर्तें

1.शिर्कते मुफ़ावज़ाः मुफ़ावज़ा का अर्थ एक दूसरे के सुपुर्द करने का है, इसको शर्कते मुफ़ावज़ा इस लिये कहते हैं कि एक शरीक दूसरे को अपना माल सुपुर्द कर देता है, इसमें शर्त यह है कि तिजारत के मुनाफ़े में हर एक का हिस्सा पूंजी के मुताबिक़ बग़ैर किसी फ़र्क़ के होगा और शुरका में से हर एक को दूसरे के माल में अधिकार (यानी ख़रीदने और बेचने, किराये पर लेने और देने) का हक़ होगा। इस शिर्कत के लिये निम्नलिखित बातें ज़रूरी हैं –

1. शुरका (साझीदारों) की पूंजी तिजारत में बराबर हो।
2. शुरका मुनाफ़े में बराबर के हिस्सेदार हों।
3. हर शरीक को माल ख़रीदने, बेचने, इस्तेमाल करने और क़र्ज़ देने का इख़्तियार हो।
4. अगर कोई शरीक अपनी ज़ाती ज़रूरत के लिये कोई चीज़ ख़रीदे तो दूसरे शरीक को कुछ कहने का हक़ नहीं है, लेकिन अगर उधार ली है तो जिससे उधार ली है उसको दूसरे शुरका से भी तक़ाजे (माँगने) का हक़ है।
5. यह शिर्कत सिर्फ़ मुसलमान बालिग़ों के बीच हो सकती है क्योंकि ग़ैर मुस्लिम या नाबालिग़ उन आदेशों की पाबन्दी नहीं कर सकता जो ज़रूरी हैं।

2. शिर्कते इनानः यह शिर्कते उकूद की सब से मशहूर क़िस्म है आम तौर पर यही तरीक़ा शिर्कत का राइज है।

1. इसमें न तो पूंजी का बराबर होना ज़रूरी है और न नफ़े में बराबरी शर्त है, इसमें हर शख़्स शरीक हो सकता है चाहे मुसलमान हो या ग़ैर मुस्लिम, इस में शिर्कते मुफ़ावज़ा की तरह पूंजी और नफ़े का बराबर होना ज़रूरी नहीं है, बल्कि शुरका की पूंजी कम और ज़्यादा भी हो सकती है और उसके मुताबिक़ नफ़े में भी हिस्सा कम व ज़्यादा हो सकता है।

2. कारोबार में एक शरीक ने एक हज़ार रूपये लगाये और दूसरे शरीक ने पाँच सौ रूपये और दोनों ने ख़ुशी के साथ तै किया कि मुनाफ़े दोनों का बराबर होगा तो यह जाइज़ है क्योंकि मुनाफ़े का संबंध सिर्फ़ पूंजी से नहीं होता, इस में ज़ेहनी योग्यता और सूझ बूझ, अमली मेहनत और दौड़ धूप की भी ज़रूरत होती है, हो सकता है कि एक शख़्स की पूंजी ज़्यादा हो लेकिन अमली और ज़ेहनी सलाहियत कम हो, दूसरा शख़्स कम पूंजी रखता हो लेकिन अमली और ज़ेहनी योग्यताओं में उस से बढ़ा हुआ हो, तो यह शख़्स पूंजी की कमी की पूर्ति अपनी ज़ेहनी और अमली योग्यताओं से कर सकता है, बहरहाल इस का संबंध आपस की रिज़ामंदी से है, ज़बरदस्ती दबाव से नहीं।

3. तमाम शुरका की पूंजी बराबर हो लेकिन नफ़े में कमी और ज़्यादती तै हुई हो, आम शुरका अमली मेहनत करने को तैयार न हों बल्कि पूरे कारोबार की ज़िम्मेदारी एक या दो के हवाले कर दें तो जिसके हवाले काम किया गया हो अगर यह वह शख़्स है जिसका नफ़ा ज़्यादा मुक़र्रर हुआ है तो यह जाइज़ है लेकिन अगर काम करने की ज़िम्मेदारी उस शख़्स को सौंपी गई है जिस का नफ़ा कम रखा गया है तो यह जाइज़ नहीं है क्योंकि उस ने पूंजी बराबर की लगाई और मेहनत भी की और फिर भी मुनाफ़ा कम मिला तो वह नुक़सान में रहेगा जिसको शरीअत जाइज़ नहीं क़रार देती।

4. नफ़ा बांटने की मात्रा मुक़र्रर हो जानी चाहिये यानी 1/2 या 1/4 या दस फ़ीसद फ़लां को और बीस फ़ीसद फ़लां को या सब को बराबर, अगर इस तरह तै किया गया कि एक हज़ार रूपये फ़लाँ आदमी के मुक़र्रर हैं बाक़ी जो बचे उस में बाक़ी शुरका का हिस्सा हो जाये यह सही नहीं। (हिदाया)

5. नुक़सान अगर हो जाये तो उसको असल पूंजी से पूरा किया जायेगा, नफ़े पर कोई असर नहीं पड़ेगा, मगर जबकि नुक़सान जान बूझ कर न किया गया हो बल्कि अचानक हो गया हो, अगर किसी शरीक ने जान बूझ कर नुक़सान पहुंचाया तो उसके नफ़े या असल से पूरा किया जायेगा, जैसा कि मुज़ारबत के बयान में गुज़रा।

6. तमाम शुरका नफ़े और नुक़सान दोनों में शरीक रहेंगे अगर किसी ने यह शर्त लगाई कि नुक़सान उस के ज़िम्मे और नफ़े में सब शरीक रहेंगे तो यह शिर्कत नाजाइज़ होगी।

7. शिर्कत अगर ख़त्म हो जाये या मुआहदा तोड़ दिया जाये तो मुनाफ़ा पूंजी के मुताबिक़ बांटना होगा, जैसे किसी ने एक हज़ार रूपये और किसी ने दो हज़ार रूपये लगाये थे तो एक हज़ार रूपये वाले को 1/3 और दो हज़ार वाले को 2/3 मिलेगा चाहे शिर्कत करते वक़्त ज़्यादा और कम मुनाफ़ा लेने की शर्त ही क्यों न की गई हो वह शर्त शिर्कत फ़ासिद या मंसूख़ होने की सूरत में न होनी मानी जायेगी।

8. जिस ग़र्ज़ के लिये शिर्कत की गई हो उसमें हर शरीक को माल ख़र्च करने और दूसरे इस्तेमाल का बराबर हक़ है। माल मंगाने, छुड़ाने, उधार बेचने या उधार लगाने का हर शरीक को हक़ है। अगर किसी से नुक़सान होगा तो सब की ज़िम्मेदारी समझी जायेगी। हाँ अगर एक शरीक ने दूसरे को किसी चीज़ के ख़रीदेने से मना किया और उस ने उसे फिर भी ख़रीद लिया और उसमें नुक़सान हुआ तो उस की ज़िम्मेदारी अकेले

उस पर होगी, इसी तरह अगर उस ने ख़रीदने या बेचने में बहुत ज़्यादा धोका खाया तो भी उसी पर उसकी ज़िम्मेदारी होगी दूसरे शरीकों की पूंजी सुरक्षित समझी जायेगी।

9. शिर्कत के माल में ज़ाती माल मिलाना या दोनों का कारोबार एक साथ करना जाइज़ नहीं जब तक कि दूसरे शरीक उस की इजाज़त न दें। इसी तरह तमाम शुरका की इजाज़त के बग़ैर किसी नये आदमी को शरीक बनाना भी जाइज़ नहीं है।

10. मुशतरक कारोबार जिसमें कई आदमियों की पूंजी लगी हो और कोई शरीक इसी तरह का कारोबार अपने ज़ाती रूपये से अलग शुरू कर दे तो उसे भी मुशतरक समझा जायेगा अगरचे वह यह सुबूत ही क्यों न दे कि यह उसका ज़ाती कारोबार है, हाँ अगर वह इस मुशतरक करोबार से अलग कोई दूसरा काम अपने ज़ाती रूपये से करे जैसे मुशतरक कारोबार कपड़े का है और वह अपनी ज़ाती दुकान जूते की खोले तो इस की इजाज़त है, यह क़ैद इस लिये लगाई गई है कि मुशतरक कारोबार को उसके ज़ाती कारोबार से नुक़सान न पहुंचे या मुशतरक पूंजी को ज़ाती फ़ायदे के लिये इस्तेमाल न किया जाये।

11. तमाम शुरका की इजाज़त के बग़ैर कोई एक शरीक किसी को मुशतरक पूंजी से कर्ज़ नहीं दे सकता।

12. अगर पूंजी क़र्ज़ ले कर कुछ लोग मुशतरक कारोबार करें तो जाइज़ है मगर इस शर्त पर कि क़र्ज़ सूदी न हो।

13. मुशतरक कारोबार के बारे में अगर सफ़र करना पड़े, मज़दूरी या दुकान का किराया देना पड़े या कारख़ाने और मशीन लगाने में ख़र्च करना पड़ जाये तो इस सबका बोझ मुशतरक पूंजी पर होगा।

14. अगर किसी एक शरीक ने दूसरे शरीक को या कुछ शुराक ने एक शरीक को मुशतरक पूंजी सुपुर्द कर के कहा कि तिजारत

या सनअत (उद्योग) में से जो काम चाहो करो तो उसको इख़्तियार होगा कि जो काम चाहे और जिस तरह चाहे करे, लेकिन अगर जान बूझ कर पूंजी बरबाद करेगा (जैसे फ़ुज़ूल कामों में या अपने ऐश व आराम पर ख़र्च करना वग़ैरा) तो नुक़सान उसकी पूंजी से पूरा किया जायेगा।

15. अगर किसी शरीक या कुछ शुरका ने किसी ख़ास शहर या जगह पर काम करने के लिये राय दी लेकिन दूसरे शुरका ने पूंजी उनकी राय के ख़िलाफ़ दूसरी जगह लगाया और उस में नुक़सान हो गया तो इस की ज़िम्मेदारी उन ही शरीकों पर होगी जिन्होंने ऐसा किया है। वे शुरका जिन्हों ने पहले राय दी थी उस मुआहदे के मुताबिक़ मुनाफ़ा पायेंगे जैसा कि तै हुआ था।

3. शिर्कते आमाल या शिर्कते सनाएअः यह शिर्कते उक़ूद की तीसरी क़िस्म है, इससे मुराद वह शिर्कत है जिसमें पूंजी के बग़ैर एक ही पेशे वाले वाले दो लोग मिल कर यह तै करें कि हमारे काम से जो फ़ायदा होगा उसे आपस में मुआहदे के मुताबिक़ बाँट लेंगे जैसे स्टेशन पर सामान ढोने या एक दीवार बनाने का मुआहदा या दो सुनारों के बीच ज़ेवर बनाने का मुआहदा या दो मोचियों के बीच यह मुआहदा कि जो काम मिलेगा उसे मिल कर या अलग-अलग करेंगे और फ़ायदे में बराबर के शरीक रहेंगे तो यह सब शिर्कतें जाइज़ हैं, इनमें पूंजी मुशतरक नहीं होती लेकिन मेहनत या कारीगरी मुशतरक होती है, इसे शिर्कते तक़ब्बुल भी कहते हैं यानी दो आदमियों का एक काम को क़ुबूल कर लेना। नबी (स.अ.व.) के ज़माने में सहाबा इस क़िस्म की शिर्कत करते थे, हदीस में है कि हज़रत अबू उबैदा हज़रत सअद और हज़रत अम्मार (र.त.अ) ने ग़ज़वए बद्र में मुआहदा किया कि जो कुछ माले ग़नीमत मिलेगा वह सब का मुशतरक हिस्सा होगा चाहे एक ही क्यों न पाये। इस शिर्कत के सही या ग़ैर सही होने की शर्तों का लिहाज़ रखना ज़रूरी है जो ये हैं -

1. इसमें यह ज़रूरी नहीं कि हर शख़्स काम बराबर करे और काम का बदला सब को बराबर मिले, एक जवान बूढ़े से ज़्यादा काम करेगा और अपनी मेहनत के मुताबिक़ मुआवज़े का हक़दार होगा या एक दर्ज़ी सिलाई में ज़्यादा मेहनत कर सकता है और दूसरा दर्ज़ी कटिंग में माहिर है या एक बारीक काम कर सकता है और दूसरा सिर्फ़ मोटा काम कर सकता है तो दोनों की मज़दूरी में कमी और ज़्यादती हो सकती है लेकिन यह रज़ामंदी से होना चाहिये।

2. काम देने वाले को हर शरीक से तक़ाज़े का हक़ है चाहे किसी की मज़दूरी कम हो या ज़्यादा।

3. एक शरीक आर्डर कुबूल कर लेता है तो यह कुबूलियत सभी शुरका की कुबूलियत मानी जायेगी।

4. काम पूरा हो जाने के बाद हर शरीक उसका पूरा मुआवज़ा ले सकता है, आर्डर देने वाला किसी एक शरीक को पूरा मुआवज़ा अदा कर दे तो दूसरे किसी शरीक को कुछ कहने का हक़ नहीं है। अगर आर्डर देने वाले से यह कह दिया गया हो कि अदायगी फ़लाँ को की जाये तो फिर किसी और शरीक को मज़दूरी नहीं देनी चाहिये।

5. अगर किसी शरीक ने काम किया और किसी ने नहीं किया तो काम देने वाले को एतेराज़ का हक़ नहीं है हाँ अगर यह शर्त लगा दी गई हो कि फ़लां शख़्स के हाथों से यह काम हो तो उसकी पाबन्दी ज़रूरी होगी या जैसे दो कारीगरों को मकान बनाने का ठेका इस शर्त पर दिया गया कि दोनों काम करने में शरीक भी रहेंगे तो इसकी पाबन्दी करना होगी।

6. अगर शुरका में से एक किसी मजबूरी की वजह से (बीमारी या किसी दूसरी मशग़ूलियत की वजह से) काम न कर सका तो भी वह फ़ायदे या मज़दूरी में शरीक समझा जायेगा।

7. अगर नुक़सान होगा तो तमाम शुरका उस का जुर्माना अदा करेंगे जैसे कुछ आदमियों ने मिल कर एक पुल बनाने का ठेका लिया और उसमें नुक़सान हो गया तो तमाम शुरका अपने हिस्से के मुताबिक़ उस को बर्दाश्त करेंगे जैसे जिस का हिस्सा फ़ायदे में 1/3 था वह घाटे का 1/3 और जिस का हिस्सा 2/3 था वह घाटे का 2/3 बर्दाश्त करेगा।

8. अगर दो पेशावर इस तरह शिर्कत करें कि दुकान एक की हो और औज़ार या मेहनत दूसरे की तो यह भी जाइज़ है।

9. अगर दो ट्रक वाले यह मुआहदा कर लें कि सामान को लाने लेजाने का जो कम मिलेगा उसे दोनों में से कोई अपने ट्रक से पहुंचा दिया करेगा और इस तरह किराये की आमदनी दोनों बाँट लिया करेंगे तो यह जाइज़ है, लेकिन अगर शिर्कत इस तरह हो कि दोनों जो कुछ अपने-अपने तौर पर कमाएँगे उसे बाँट लिया करेंगे तो जाइज़ नहीं है, मतलब यह कि काम और मज़दूरी दोनों में शिर्कत होना शर्त है, सिर्फ़ मज़दूरी में नहीं।

10. अगर एक घर के मालिक (प्रमुख) ने किसी काम के करने का मुआहदा किया और फिर वह काम घर में बैठ कर कर लिया अगर काम में उसके घर के लोग भी शरीक हो गये तो वे क़ानूनी शरीक नहीं होंगे बल्कि मददगार शरीक होंगे, उन्हें अलग से मज़दूरी नहीं दी जायेगी।

4. शिर्कतुल वजूहः यह शिर्कते उक़ूद की चौथी क़िस्म है, दो या दो से ज़्यादा न तो पूंजी में शरीक हों और न काम व कारीगरी में बल्कि अपनी इज़्ज़त और वक़ार की बिना पर यह मुआहदा कर लें कि ताजिरों से माल उधार ले कर बेचेंगे और माल की असल क़ीमत अदा करने के बाद जो फ़ायदा [illegible]गा उसे आपस में बाँट लेंगे।

1. इस शिर्कत के लिये वही शर्तें हैं जो शिर्कतुस्सनाएअ के हैं यानी मुनाफ़ा तै किये हुए मुआमले के हिसाब से हर शरीक को

मिलेगा और घाटा हर शरीक उसी हिसाब से बर्दाश्त करेगा, हाँ एक शर्त ज़्यादा है वह यह कि जो अपनी इज़्ज़त और वक़ार की बिना पर जितना ज़्यादा हासिल करेगा और जितने ज़्यादा माल की ज़िम्मेदारी (ज़मानत) लेगा उतना ही ज़्यादा नफ़े का हक़दार होगा। अगर शर्त लगाई गई कि माल चाहे बराबर हासिल करें या कम या ज़्यादा मगर फ़ायदे में बराबर की शिर्कत रहेगी तो यह शर्त सही नहीं मानी जायेगी, जिसने जितना ज़्यादा माल लिया है उसी हिसाब से नफ़े में हिस्सा मिलेगा, अगर कोई शरीक यह शर्त करे कि आधे माल का वह ज़िम्मेदार है मगर फ़ायदा ज़्यादा लेगा तो भी शर्त सही नहीं है दोनों पर आधा-आधा मुनाफ़ा बंटेगा।

2. नुक़सान की सूरत में भी उसी हिसाब (अनुपात) से नुक़सान बर्दाश्त करना होगा जितना माल लिया है और जिसकी ज़िम्मेदारी ली है जैसे किसी ने दो हिस्से माल हासिल किया और उसकी ज़िम्मेदारी ली और दूसरे ने एक हिस्सा माल हासिल किया और उसकी ज़िम्मेदारी ली तो नुक़सान की सूरत में उसी हिसाब से नुक़सान भी बर्दाश्त करना पड़ेगा। (अल-मुजल्ला)

ज़िम्मादार होने का मतलब यह है कि वह उतने माल का ज़मानतदार है, अगर वह गायब (नष्ट) हो गया या उसमें नुक़सान आ गया तो जुर्माना (हर्जाना) उसी एतेबार से लागू होगा, मुनाफ़ा भी उसी ज़मानत और ज़िम्मेदारी के एतेबार से बाँटा जायेगा।

क़र्ज़

रूपया उधार लेने की ज़रूरत आमतौर पर लोगों को हो जाया करती है, बेसहारा या ग़रीब लोग ही नहीं बल्कि दौलतमंद लोग और बड़ी हुकूमतें भी कभी कभी क़र्ज़ लेने पर मजबूर हो जाती हैं, मिसाल के तौर पर एक शख़्स जो लाखों रूपये का मालिक है सफ़र में कभी वह थोड़े पैसे क़र्ज़ लेने का ज़रूरतमंद हो जाता है, या कमाने वाला आदमी जो हज़ारों रूपये महीने कमाता होता है अचानक मर जाता है और उसके घर वाले अपनी ज़रूरतें पूरी करने से मजबूर हो जाते हैं। हुकूमतें जंग के ज़माने में आम लोगों से क़र्ज़ लेने की अपील करती हैं, मक़सद यह है कि इनफ़िरादी, इजतिमाई, मआशी ज़रूरतों के अलावा सियासी ज़रूरतें भी क़र्ज़ के सहारे पूरी करना पड़ जाती हैं, यह सहारा बहुत ज़्यादा ज़रूरत के वक़्त इज़्ज़त व आबरू या जान बचाने के लिये तलाश करना चाहिये वर्ना आम हालत में यह एक नापसंदीदा बल्कि तबाह कर देने वाली आफ़त है जो लोगों और हुकूमतों को भी पनपने नहीं देती, इसका नुक़सान और बढ़ जाता है अगर सूद और सिर्फ़ अपने फ़ायदे का दख़ल हो जाये, क़र्ज़ देना इन्सानी हमदर्दी और ख़ैर व बरकत की नियत से हो तो कामयाबी का सबब है लेकिन अगर माद्दी नफ़ा हासिल करने और ख़ुदग़र्ज़ी के लिये हो तो तबाही का सबब है। "ख़ुदग़र्ज़ी" सूद लेने पर उभारती है, ख़ुदग़र्ज़ यह नहीं सोचता कि जो असल रक़म वापस करने की ताक़त नहीं रखता वह सूद कहाँ से देगा, वह चाहता है कि क़र्ज़ लेने वाला उसका एहसान माने और सूद में कमी या उसके मारे जाने का ख़तरा हो तो असल की तरह उसे बचाने की फ़िक्र करता है और कभी-कभी क़र्ज़दार की इज़्ज़त और आबरू से भी खेलने पर तैयार हो जाता है, उसे यह ख़याल कभी नहीं आता कि ख़ुद उस पर भी

ऐसा वक़्त आ सकता है कि दूसरों से क़र्ज़ लेने पर मजबूर हो जाये, यही मुजरिमाना ज़ेहनियत क़र्ज़ देने वाली हुकूमतों की होती है, दस-बीस साल तक असल रक़म के साथ उसका सूद भी वसूल करती रहती हैं इस तरह क़र्ज़ लेने वाले असल रक़म से डेढ़ गुना या कम से कम सवाई रक़म यानी एक के मुक़ाबिले में $1^1/_4$ देना पड़ जाती है, क़र्ज़दार हुकूमतें सूद के साथ साथ कुछ सियासी और तिजारती हुक़ूक़ भी क़र्ज़ख़्वाह हुकूमतों को देने पर मजबूर हो जाती हैं, अमरीका और उस जैसी बड़ी हुकूमतें क़र्ज़ दे कर दूसरे मुल्कों को अपने क़ब्ज़े में किये हुए हैं यही वजह है कि जिनके दिलों में इन्सानी हमदर्दी और एहसासे मुरव्वत हो वे सूद लेने से बचते हैं और क़र्ज़ देने से भी घबराते हैं कि कहीं उन का रूपया मारा न जाये।

इस्लामी शरीअत की हिदायतें: चूँकि क़र्ज़ लेने की इजाज़त सख़्त इन्सानी ज़रूरत को पूरा करने या मुश्किल हालात से निकलने के लिये दी गई है साथ ही ऐसी अख़लाक़ी पाबन्दियाँ क़र्ज़ लेने वाले और क़र्ज़ देने वाले पर लागू कर दी गई हैं जिन पर अमल करने से ज़रूरत आसानी के साथ पूरी हो जाये और सूद की लअनत और क़र्ज़ देने वाले के एहसान से भी बचें और उन नुक़सानात से भी महफ़ूज़ रहें जो माद्दी व ग़ैर माद्दी दोनों तरह के हो सकते हैं।

क़र्ज़ के बयान में क़ुरआन में कहा गया है "ला तज़्लिमूना वला तुज़्लमूना" यानी न तुम किसी पर ज़ुल्म करोगे न तुम पर ज़ुल्म किया जायेगा। और हदीस में है "ला ज़रर वला ज़िरार" यानी न ख़ुद नुक़सान उठाओ, न दूसरों को नुक़सान पहुंचाओ। धनवानों को ज़रूरतमंदों ग़रीबों मिस्कीनों (बेसहारा लोगों) की ज़रूरत का ख़याल रखने की तरग़ीब दी गई है, यहाँ तक कि अगर वे माँगें तो इनकार न किया जाये और बग़ैर कुछ बदला लिये मदद की जाये और अगर वे शर्म व हया से मांग न सकें तो ख़ुद उनकी ज़रूरत मालूम कर के उसे पूरा करें; अगर इस तरह की मदद नहीं कर सकते तो क़र्ज़ के तौर पर तो दे ही दें, नबी करीम (स.अ.व.) ने फ़रमाया -

مَا مِنْ مُسْلِمٍ يُقْرِضُ مُسْلِمًا قَرْضًا مَرَّتَيْنِ اِلَّا كَانَ كَصَدَقَتِهَا مَرَّةً.

"मा मिन मुस्लिमिन युक़रिज़ु मुस्लिमन क़रज़न मर्रतैनि इल्ला काना कसदक़तिहा मर्रतन"।

अनुवादः कोई मुसलमान किसी मुसलमान को दो बार क़र्ज़ देता है तो उसका सवाब वही होता है जो एक बार दान (सदक़ा) करने का होता है।"

दान (सदक़ा) उसी को कहते हैं कि एक मालदार मुसलमान दूसरे ज़रूरतमंद मुसलमान की ज़रूरत इस तरह पूरी करे कि उसे अपना माल वापस लेने या बदला वसूल करने का कोई इरादा न हो, लेकिन अगर वह इतना दिलदार (फराख़दिल) नहीं है तो क़र्ज़ के तौर पर ही दे दे और सूद या नफ़ा कमाने का ख़याल भी दिल में न लाये इस तरह से वह सवाब का हक़दार होगा और दो बार ऐसा कर के वह उस सवाब का हक़दार हो जायेगा जो एक बार दान कर के उसे मिलता है। क़र्ज़ दे कर उसकी अदायगी में मुहलत देना और ग़रीब हो तो माफ़ कर देना ऐसा नेक काम है जो आख़िरत में मग़फिरत (मुक्ति)का सबब होगा कुरआन में है-

وَاِنْ كَانَ ذُوْ عُسْرَةٍ فَنَظِرَةٌ اِلٰى مَيْسَرَةٍ وَاَنْ تَصَدَّقُوْا خَيْرٌ لَّكُمْ.

(بقره ٢٨)

"वइन काना ज़ू उसरतिन फ़नज़िरतुन इला मैसरतिन व अन तसद्दक़ू ख़ैरूल्लकुम" (बक़रह, 28)

अनुवादः यानी अगर क़र्ज़दार निर्धन है तो धनी होने तक मुहलत दो और अगर बिल्कुल माफ़ कर दो तो तुम्हारे लिये यह (दान कर देना) भलाई का काम है।

नबी करीम सल्लल्लाहु अलहि वसल्लम ने सहाबा किराम को एक नेक आदमी का क़िस्सा नक़ल करते हुए फ़रमाया -

"तुमसे पहले जो लोग गुज़रे उनमें एक आदमी था, जब मौत

के फ़रिश्ते ने उस की रूह निकाली तो उससे पूछा क्या तुमने कोई नेक काम किया है उसने कहा मुझे ऐसा कोई काम नज़र नहीं आता, फिर कहा गया ध्यान करो, उसने कहा मुझे इस के अलावा अपना कोई नेक काम नज़र नहीं आता कि मैं लोगों से उधार लेन देन करता था और उन्हें माल उठा लेजाने की इजाज़त देता था फिर अगर वह खुशहाल है तो उसको क़ीमत अदा करने के लिये मुहलत देता था और अगर ग़रीब है तो उसे माफ़ कर देता था, आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि अल्लाह तआला ने उस नेकी के बदले में उसको जन्नत में दाख़िल कर दिया।

एक दूसरी रिवायत है कि आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया -

"जिस शख़्स को यह पसन्द हो कि उसे क़यामत की कठिनाइयों से अल्लाह निजात (मुक्ति) दे दे तो उसे चाहिये कि ग़रीब क़र्ज़ लेने वाले को मुहलत दे या उसे माफ़ कर दे। (मुस्लिम)

बेज़रूरत क़र्ज़ लेना इस्लामी शरीअत में बुरा है, सिर्फ़ इज़्ज़त व आबरू की हिफ़ाज़त और बहुत ज़्यादा मआशी ज़रूरत के लिये इजाज़त है बिल्कुल इस तरह जैसे मरते हुए को मुरदार खाने की (वह भी अगर काम चलने से ज़्यादा खायेगा तो हराम काम होगा और क़ानून सज़ा का मुसतहिक़ होगा) यही हाल क़र्ज़ लेने का है कि बहुत मजबूरी की हालत में इजाज़त है। अगर कोई शख़्स ऐश व आराम या लोगों में अपनी पहचान बनाने या अपनी शान व शौकत को क़ायम रखने के लिये क़र्ज़ ले या हक़ीक़ी ज़रूरत होने पर क़र्ज़ लेकर उसकी अदायगी से बेख़बर हो जाये या ताक़त रखने के बावजूद अदा न करे तो वह अख़लाक़न भी मुजरिम है और क़ानूनन भी, दुनिया में भी सज़ा का हक़दार है और आख़िरत में भी।

क़र्ज़ अदा न करना कितना नापसंदीदा है, इसका अन्दाज़ा

आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के तरीक़े से किया जो सकता है कि आप उस शख़्स की जनाज़े की नमाज़ नहीं पढ़ते थे जो क़र्ज़ छोड़ कर मर जाता और क़र्ज़ को अदा करने के लिये कोई तरका भी न छोड़ गया होता, एक बार एक सहाबी का जनाज़ा लाया गया, आप (स.अ.व.) ने पूछा "इन पर कोई क़र्ज़ तो नहीं" मालूम हुआ दो दीनार के क़र्ज़दार थे, आपने फ़रमाया इन की जनाज़े की नमाज़ तुम लोग पढ़ लो। एक सहाबी हज़रत अबू क़तादा ने कहा कि दोनों दीनार की अदायगी का मैं ज़िम्मेदार हूं तब आपने उनकी जनाज़े की नमाज़ पढ़ाई।

सोते वक़्त और पाँचों नमाज़ों के बाद जो दुआएँ माँगते उनमें गुनाहों के साथ क़र्ज़ से भी पनाह माँगते हुए फ़रमाते "मैं गुनाह और क़र्ज़ के बोझ से पनाह मांगता हूं"।

एक बार आप (स.अ.व.) कुफ़्र और क़र्ज़ दोनों से पनाह माँग रहे थे, एक सहाबी ने पूछा या रसूलल्लाह! क्या आप क़र्ज़ को कुफ़् के बराबर क़रार देते हैं? फ़रमाया, हां! (नसाई, हाकिम)

इस्लाम किसी मोमिन को ज़िल्लत में डालना पसंद नहीं करता नबी (स.अ.व.) का फ़रमान है जब ख़ुदा किसी बन्दे को ज़लील (बेइज़्ज़त) करना चाहता है तो उसकी गर्दन पर क़र्ज़ का बोझ रख देता है। (हाकिम)

बुलंदी, इज़्ज़त और आज़ादी के बजाये कमतरी, ज़िल्लत और गुलामी का एहसास पैदा होना मोमिन की शान के ख़िलाफ़ है, एक बार नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम एक शख़्स को कुछ नसीहत फ़रमा रहे थे उस में यह भी फ़रमाया कि क़र्ज़ कम लिया करो, आज़ाद हो कर ज़िन्दा रहोगे। (बैहक़ी)

आप (स.अ.व.) सहाबा को क़र्ज़ से बचने (मुक्त होने) की दुआ सिखाया करते थे हज़रत अली (र.त.अ.) को एक बार यह दुआ सिखाई -

اَللّٰهُمَّ اكْفِنِىْ بِحَلَالِكَ عَنْ حَرَامِكَ وَاَغْنِنِىْ بِفَضْلِكَ عَمَّنْ سِوَاكَ.

"अल्लाहुम्मकफ़िनी बिहलालिका अन हरामिका व अग़ननी फ़िज़्लिका अम्मन सिवाका"

अनुवादः ऐ अल्लाह! अपनी हलाल रोज़ी के ज़रिये हराम से बचा और अपने फ़ज़्ल से मुझे उनसे बेनियाज़ कर दे जो तेरे सिवा हैं।

क़र्ज़ से पनाह माँगने और उसकी अदायगी की तालीम (शिक्षा) देने का मक़सद यह है कि क़र्ज़ लेने वाले के ज़हन में हर वक़्त यह बात ताज़ा रहे कि उसे क़र्ज़ अदा करना है, दूसरे यह कि वह ख़ुदा से उसकी तौफ़ीक़ भी माँता रहे वर्ना मुम्किन है कि वह अदा करने की कोशिश करे और कामयाब न हो।

क़र्ज़ के सिलसिले में इस्लामी हुकूमत की ज़िम्मेदारीः इस्लामी हुकूमत पर भी यह ज़िम्मेदारी है कि ज़रूरतमंदों को बैतुलमाल से ग़ैर सूदी क़र्ज़े दे और अगर वह अदा न करें तो क़र्ज़ा माफ़ भी कर दे, इस्लाम के शुरू में जब तक मुहाजिरीन और अनसार ग़रीब थे और बैतुलमाल इस्लामी हुकूत का क़ायम नहीं हुआ था उस वक़्त क़र्ज़दार मय्यत का जनाज़ा पढ़ाने में आप (स.अ.व.) इस लिये रूकते थे कि उसके दोस्त व रिश्तेदार या समाज के ख़ुशहाल लोग उसका क़र्ज़ अदा करने को आगे बढ़ें लेकिन जब बैतुलमाल क़ायम हो गया और उसमें रक़म जमा होने लगी तो ग़रीब क़र्ज़दार का कर्ज़ आप (स.अ.व.) नबी होने की हैसियत से और हुकूमत का सरबराह होने की वजह से ख़ुद अदा फ़रमाने लगे और जनाज़े की नमाज़ में रूकने का सबब भी यही था कि कोई क़र्ज़ अदा कर दे, हज़रत जाबिर (र.त.अ.) रिवायत करते हैं –

"जब अल्लाह ने अपने रसूल को कुशादगी अता की तो उन्हों ने फ़रमाया कि मैं (हुकूमत का संचालक) होने की वजह से हर मोमिन का उसकी अपनी जान से ज़्यादा हमदर्द व सरपरस्त हूँ तो जो

शख़्स क़र्ज़ छोड़ गया उसकी ज़िम्मेदारी मुझ पर (यानी इस्लामी हुकूमत पर) है और जो माल छोड़ कर मर गया तो वह उस के वारिसों का हक़ है।

इस्लामी हुकूमत उन लोगों से ज़बरदस्ती क़र्ज़ वसूल करने की हक़दार है जो क़र्ज़ अदा करने की ताक़त रखते हुए भी अदा नहीं करते, हुकूमत किसी का हक़ न ख़ुद मारेगी और न किसी को ऐसा करने देगी। नबी (स.अ.व.) के अहद के बाद ख़िलाफ़ते राशिदा के ज़माने में और फिर जहाँ-जहाँ इस्लामी हुकूमत रही इसी पर अमल किया गया, चुनाचे आज भी मुस्लिम समाज में बिला सूदी क़र्ज़ का जितना रिवाज है किसी दूसरे समाज में नहीं है।

क़र्ज़ का अर्थ और परिभाषा: उधार लेने के लिये अरबी में दो शब्द हैं "क़र्ज़ और दैन" दैन का अर्थ है बदल। इस शब्द में यह बात छुपी हुई है कि उधार देने वाला सिर्फ़ उसका पूरा पूरा बदल ही ले सकता है न कम और न ज़्यादा। क़र्ज़ का अर्थ है काट देना, चुनाचे क़ैंची को मिक़राज़ कहते हैं, जो शख़्स किसी को उधार देता है वह गोया अपने माल का एक हिस्सा काट कर देता है। दूसरा मतलब यह भी इस में छुपा हुआ है कि अगर इस मुआमले में शरई हुदूद (सीमा) की पाबन्दी लोग न करें तो क़र्ज़ दोनों के संबंधों को काट देने का सबब बन जाता है, इसी से यह मिसाल मशहूर है "अल क़र्ज़ु मिक़राज़ुल मुहब्बति" (क़र्ज़ मुहब्बत के लिये क़ैंची है) दैन और क़र्ज़ में आम व ख़ास का फ़र्क़ है, हर क़र्ज़ को दैन कह सकते हैं मगर हर दैन को क़र्ज़ नहीं कह सकते, क़र्ज़ वह नक़द जिन्स कहलाता है जो किसी को वापसी के शर्त के साथ दिया जाये और अगर कोई चीज़ ख़रीद ली मगर क़ीमत बाक़ी है तो उसे क़र्ज़ नहीं कहा जायेगा बल्कि दैन कहा जायेगा, इसी तरह अगर क़ीमत पेशगी वसूल कर ली लेकिन माल अभी नहीं दिया तो यह माल बेचने वाले के ज़िम्मे दैन कहलायेगा क़र्ज़ न होगा, क़र्ज़ देने वाले और क़र्ज़ लेने वाले को उन अख़लाक़ी ज़िम्मेदारियों और हिदायतों पर

अमल करना चाहिये जो इस सिलसिले में इस्लामी शरीअत ने मुक़र्रर की हैं, कुरआन और हदीस में ताकीद आई है कि

क़र्ज़ और उधार का मुआमला लिख लेना चाहिये: यह क़ानूनन मुनासिब है, न लिखने में भी कोई गुनाह नहीं, अगर दोनों शरीक एक दूसरे पर भरोसा रखते हों।

क़र्ज़ देने वाले को हिदायतें: 1. क़र्ज़ देना किसी शख़्स की तरफ़ से एक इनआम है अगर ताक़त के बावजूद किसी ज़रूरतमंद की ज़रूरत पूरी नहीं करता तो अख़लाक़ व दयानत के एतेबार से वह मुजरिम क़रार पायेगा मगर उस पर ज़बरदस्ती नहीं की जा सकती कि वह क़र्ज़ ज़रूर दे, हाँ हुकूमत पर यह फ़र्ज़ है कि वह बेसहारा लोगों की मदद करे चाहे दान दे कर या क़र्ज़ दे कर।

2. क़र्ज़ देने वालों को, चाहे हुकूमत हो या कोई आम आदमी, यह हिदायत है कि वह क़र्ज़ पर सूद न लें यानी किसी माल या चीज़ के बदले में बग़ैर किसी बदले के कोई मुक़र्ररह रक़म लेना या देना दोनो नाजाइज़ हैं। क़र्ज़ देने के बदले में महाजनी सूद, या क़र्ज़ दिये हुए रूपये से नफ़ा उठाने की वजह से बैंक व डाकख़ाने का सूद सब नाजाइज़ है, इस्लामी शरीअत का उसूल यह है –

"जो क़र्ज़ नफ़ा खींच लाये वह सूद है"

3. ऊपर बयान की गई सूरत के अलावा नफ़ा उठाने की और भी बहुत सी शक्लें हैं माद्दी भी और ग़ैर माद्दी भी जैसे अपनी नियाज़मंदी (उपासना) कराना, तोहफ़े चाहना, तिजारत या किसी दूसरे मुआमले में रिआयत माँगना, ये सब बातें नाजाइज़ हैं या हराम हैं, ऐसी तिजारत या ख़रीद व फ़रोख़्त भी मकरूह है जिसमें क़र्ज़दार से फ़ायदा उठाया जाये, कुरआन में क़र्ज़े हसना (बेहतरीन क़र्ज़) का ज़िक्र आया है जिस से मुराद वह क़र्ज़ है जिस में सूद न हो, मुद्दत मुक़र्रर न हो और एहसान धरने की बात न हो, एहसान जताने वालों

के माल को उस मिट्टी से तुलना की गई है जो किसी चट्टान पर हो और एक हल्की सी बारिश से बह जाये, नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया –

"जब कोई किसी को क़र्ज़ दे तो क़र्ज़ लेने वाला अगर उस के पास कोई हदिया भेजे या उसे अपनी सवारी पर सवार करे तो उसे न तो सवारी इस्तेमाल करनी चाहिये न हदिया कुबूल करना चाहिये, हाँ अगर क़र्ज़ देने से पहले उसके संबंध हों और तोहफ़े तहाइफ़ देने का तरीक़ा रहा हो तो कोई हर्ज नहीं है"।

मुहद्दिसीन ने इस हदीस को क़र्ज़ के बयान में नहीं बल्कि सूद के बयान में ज़िक्र किया है, गोया क़र्ज़ लेने वाले का हदिया भी एक तरह का सूद है।

4. क़र्ज़ देने वाला अगर क़र्ज़ अदा करने के लिये कोई मुद्दत मुक़र्रर कर दे और मुद्दत गुज़रने से पहले उसको सख़्स ज़रूरत पेश आ जाये तो वह क़र्ज़ को वापस करने की माँग कर सकता है अगरचे अख़्लाक़न ऐसा नहीं करना चाहिये मगर क़ानूनन उसको इस का हक़ है। अख़्लाक़ का तक़ाज़ा तो यही है कि जो शख़्स को क़र्ज़ को वापस करने के क़ाबिल न हो उसको और ज़्यादा मुहलत देना चाहिये, मगर क़ानून उसे मजबूर नहीं करता कि वह मुहलत दे ही दे, एक बार खुद नबी करीम सल्लल्लाहु अलहि वसल्लम ने किसी से कोई जानवर क़र्ज़ लिया था, मुद्दत गुज़रने पर उसने सख़्ती से माँगा सहाबा को उसका यह अमल बुरा लगा मगर आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया –

"इसे कुछ न कहो हक़ वाले को कहने का हक़ है"

इसके बाद आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया एक जानवर उससे अच्छा ख़रीद कर उसको दे दो चुनाचे ऐसा किया गया। (बुख़ारी व मुस्लिम)

5. अगर क़र्ज़दार क़र्ज़ अदा करने की ताक़त रखते हुए भी अदा नहीं करता तो उसके बारे में नबी (स.अ.व.) का फ़रमान है -

"ताक़त रखने वाले का अदा करने में बहाना करना ज़ुल्म है, हाथ में पैसा होते हुए भी देर लगाना उसकी आबरू को ग़ैर-महफ़ूज़ (असुरक्षित) और सज़ा का हक़दार कर देता है।"

यानी जिस से क़र्ज़ लिया है वह उसको बुरा कह के बदनाम कर सकता है और उसके ख़िलाफ़ दावा कर के सज़ा दिलवा सकता है। फ़ुक़हा के नज़दीक ऐसे शख़्स को क़ैद की सज़ा दी जा सकती है। इमाम अबू हनीफ़ा (रह०) की राय में ख़ुशहाल और बदहाल दोनों के साथ यही व्यवहार किया जायेगा। दूसरे इमाम सिर्फ़ ताक़त रखने वाले को ही सज़ा के लायक़ क़रार देते हैं लेकिन अगर ग़रीब शख़्स क़र्ज़ ले कर खा जाना अपना पेशा बना ले तो वह सज़ा से बरी (मुक्त) नहीं होगा।

क़र्ज़ लेने वाले को हिदायतें:

1. किसी हंगामी ज़रूरत या बहुत ज़्यादा मआशी ज़रूरत के वक़्त ही क़र्ज़ लेना चाहिये, ऐश व आरम के लिये क़र्ज़ लेना मना है, इस तरह से क़र्ज़ लेने वाला उसे मुश्किल ही से अदा कर सकता है, लोगों का हक़ और रूपया मारा जाता है।
2. क़र्ज़दार को अदा करने के क़ाबिल होते ही तुरन्त अदा कर देना चाहिये वर्ना वह ज़ुल्म करने वाला माना जायेगा और बेआबरू भी होगा।
3. अगर क़र्ज़ देने वाला ख़ुद ज़रूरतमंद हो जाये तो क़र्ज़दार को अपनी जायदाद और घर का सामान बेच कर भी क़र्ज़ अदा करना चाहिये, एक बार हज़रत मआज़ के साथ यही मुआमला पेश आया और आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने हज़रत मआज़ की पूरी जायदाद बेच कर क़र्ज़ अदा करवाया। (मुन्तक़ा)
4. ज़रूरत हो तो समाज के लोगों से चन्दा ले कर क़र्ज़ख़्वाह की

रक़्म वापस की जा सकती है नबी अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक सहाबी का क़र्ज़ दूसरे सहाबी की मदद से अदा कराया था ऐसा उन हालात में हुआ जब इस्लामी बैतुलमाल न था और क़र्ज़ख़्वाह को बहुत ही ज़रूरत थी।

5. समाज के धनी लोग किसी ग़रीब शख़्स के ज़ामिन व ज़िम्मेदार बन कर उस को क़र्ज़ दिलाने में मदद करें।

क़र्ज़ दी जाने वाली चीज़ें: हर वह चीज़ जिस के बराबर दूसरी चीज़ तोल कर, नाप कर, या गिन कर वापस हो सकती हो क़र्ज़ में दी जा सकती है, जैसे वह सिक्का जो उस वक़्त राइज हो जो आसानी के साथ दिया जा सकता है, घी तेल आटा तोल कर या नाप कर वापस किया जा सकता है, ख़र्च हो जाने के बाद बाज़ार से मंगा कर दिया जा सकता है और उसकी क़ीमत भी अदा की जा सकती है, लेकिन अगर कोई चीज़ ऐसी है जिस के जैसी और चीज़ बाज़ार में नहीं मिलती या बहुत मुश्किल से मिलती है तो ऐसी चीज़ क़र्ज़ में नहीं ली जा सकती।

हिदायात:

1. चीज़ जो क़र्ज़ ली गई, अगर उसकी क़ीमत बाज़र में घटती बढ़ती रहती है तो उसका असर क़र्ज़ पर नहीं पड़ेगा, चीज़ जितनी तोल या नाप कर ली गई थी उतनी ही अदा करना होगी। हाँ अगर वह क़ीमत लेने पर राज़ी हो जाये तो क़ीमत भी ले सकता है।
2. अगर किसी ने एक-एक रूपये के सौ नोट या रेज़गारी क़र्ज़ ली तो यह ज़रूरी नहीं कि वापसी भी एक-एक के नोट या रेज़गारी में हो बल्कि पूरी रक़म नोटों या सिक्कों में अदा होना चाहिये।
3. जो चीज़ें जिस तरह बिकती या ली और दी जा सकती हैं उसी तरह लेना और देना होंगी, गिनती करके या तोल कर या नाप कर।

4. कोई चीज़ अगर दो तरह से बिकती है तो जिस तरह क़र्ज़ ली है उसी तरह वापस करना चाहिये।

5. रूपया पैसा क़र्ज़ लेने की सूरत में वापसी के लिये जगह की पाबन्दी नहीं है कि वहीं अदा हो जहाँ क़र्ज़ लिया था बल्कि दूसरी जगह भी अदा किया जा सकता है लेकिन अगर क़र्ज़ जिन्स की शक्ल में लिया है तो यह ज़रूरी नहीं कि वही जिन्स दूसरी जगह भी दी जाये बल्कि वहां उस की क़ीमत दी जा सकती है और अगर कर्ज़ख़्वाह लेना चाहे तो क़ीमत ले ले क्योंकि ग़ैर जगह जिन्स का अदा करना मुश्किल होता है लेकिन अगर वही जिन्स देना चाहता है लेकिन उसी जगह जहाँ उस ने चीज़ क़र्ज़ ली थी तो उस को ज़ंमानत देना पड़ेगी कि वहाँ जा कर ज़रूर दे देगा, क़ीमत देने की सूरत में उसी जगह की क़ीमत का एतेबार किया जायेगा जहाँ चीज़ को क़र्ज़ लिया था। दूसरी जगह जो भी उस ज़िन्स की क़ीमत या भाव हो उसका लिहाज़ नहीं किया जायेगा।

6. अगर वह चीज़ या जिन्स बाज़ार में उस वक़्त नहीं है तो फिर क़र्ज़ख़्वाह वक़्त का इन्तिज़ार करे या क़ीमत लेने और देने पर दोनों राज़ी हो जायें।

7. क़र्ज़ लेने वाला क़र्ज़ ली गई चीज़ का मालिक होता है और उसमें उसका अधिकार होता है यहाँ तक कि उसे बेच भी सकता है लेकिन अगर क़र्ज़ देने वाला उसी चीज़ को (जो वह क़र्ज़ दे चुका है) बेचना चाहे तो नहीं बेच सकता क्योंकि वह उसका मालिक नहीं है हां वह उस चीज़ को क़र्ज़दार से ख़रीद सकता है।

8. किसी शर्त की पाबन्दी क़र्ज़ में लगाना क़र्ज़ के अर्थ के ख़िलाफ़ है और क़र्ज़दार उस का पाबन्द नहीं।

9. क़र्ज़ ली हुई चीज़ से बेहतर की वापसी सही है लेकिन अगर

कमतर है तो क़र्ज़ख़्वाह को इख़्तियार है ले या न ले।

10. अगर अदा करने की ताक़त के बावजूद क़र्ज़ अदा न करे तो क़र्ज़ देने वाला उसी तरह की उसकी कोई चीज़ अगर चाहे तो बग़ैर इजाज़त के ले सकता है जैसे गेहूँ या रूपया क़र्ज़ लिया था और ये चीज़ें उसके पास हों फिर भी अदा न करे तो क़र्ज़ख़्वाह को उसका गेहूँ या रूपया अगर हाथ लग जाये और अपने क़र्ज़ के बदले में ले ले तो यह जाइज़ है, लेकिन अगर वह दूसरी जिन्स की हो या उससे बेहतर हो तो जाइज़ नहीं है।

कफ़ालत

क़र्ज़ लेने की या उधार ख़रीदने की ज़रूरत कभी-कभी पड़ती है लेकिन क़र्ज़ देने वाला या उधार बेचने वाला यह इतमीनान चाहता है कि उसकी चीज़ वापस मिल जायेगी या क़ीमत अदा कर दी जायेगी। कभी ऐसा भी होता है कि कर्ज़ देने वाला या उधार देने वाला उससे अपना क़र्ज़ या अपनी क़ीमत माँगने लगता है और अभी उसके पास ताक़त नहीं होती है कि वह क़र्ज़ को अदा कर सके या उसकी क़ीमत दे सके, ऐसी तमाम सूरतों में किसी दूसरे शख़्स को ज़मानत के तौर पर पेश किया जा सकता है जो यह ज़िम्मेदारी ले सके कि अगर उसने न दिया तो मैं दूँगा, बिल्कुल इसी तरह एक मुजरिम जिसको अदालत जुर्म की तहक़ीक़ हो जाने तक क़ैद में रखना चाहती हो वह एक आदमी को ज़मानत के तौर पर पेश कर दे कि जब ज़रूरत होगी ज़मानत लेने वाला उसे अदालत में हाज़िर कर देगा तो अदालत ज़मानत मान कर उसे छोड़ देती है, इस तरह की ज़मानत को शरीअत में कफ़ालत कहा जाता है इस लिये कफ़ालत की परिभाषा यह हुई -

"किसी माल की अदायगी या किसी शख़्स को वक़्त पर हाज़िर कर देने की ज़िम्मेदारी लेना।"

इस्तिलाहातः

1. ज़मानत लेने वाले और ज़िम्मेदारी कुबूल करने वाले शख़्स को कफ़ील कहते हैं।
2. असल ज़िम्मेदार शख़्स जो किसी को अपना ज़ामिन (जमानतदार) बनाये असील या मकफूल अनहु कहलाता है।

3. जिसका मुतालबा असील पर हो उसे मकफूल लहू कहा जाता है।
4. वह माल या वह शख़्स जिसको अदा करने या पेश करने की ज़मानत दी जाये मकफूल बिही कहा जाता है।

कफ़ालत का तरीक़ा: कफ़ील मकफूल लहू से कहे कि आपकी जो रक़म या माल फ़ुलां (मकफूल अनहु) पर बाक़ी और अदा करना वाजिब है उसे अदा करने का मैं ज़िम्मा लेता हूं, अब अगर असील उसको अदा न करे तो ज़िम्मेदारी कफ़ील पर होगी यह तीन तरीक़ों से होती है -

1. कफ़ील मुतलक़ (पूरे) तौर पर ज़िम्मेदरी ले कि मैं उसको अदा करूंगा तो मकफूल लहू को असील व कफ़ील दोनों से मांगने का हक़ है।

2. कफ़ील यह ज़िम्मेदारी ले कि अगर असील ने अदा न किया तो मैं अदा करूंगा तो मकफूल लहू पहले असील से माँगे अगर वह न दे तो फिर कफ़ील से माँगे।

3. अगर मकफूल लहू ने कोई मुहलत दे दी है तो उस मुद्दत के गुज़रने के बाद वह कफ़ील से माँग सकता है।

कफ़ालत सही होने की शर्तें:

1. कफ़ालत उसी वक़्त सही होगी जब असील और कफ़ील दोनों आक़िल व बालिग़ हों।
2. मकफूल बिही यानी जिस चीज़ या शख़्स की कफ़ालत की जा रही है उसका नाम और पता कफ़ील को अच्छी तरह मालूम होना चाहिये माल की मात्रा बताना ज़रूरी नहीं बल्कि यह कह देना काफ़ी है कि फ़लाँ के क़र्ज़ का या फ़लाँ माल का मैं ज़िम्मेदार हूँ।
3. गिरवी रखी हुई चीज़ या कुछ दिन के लिये माँगी हुई चीज़ में कफ़ालत सही नहीं है क्योंकि गिरवी रखने वाले और लेने वाले

पर उसके नष्ट हो जाने की कोई ज़िम्मेदारी नहीं है, इसी तरह अमानत और सुपुर्दगी में भी कफ़ालत सही नहीं है। हुदूद (बदले व सज़ा) में कफ़ालत नहीं, सज़ा दूसरा आदमी नहीं पा सकता।

कफ़ील की ज़िम्मेदारियां:

1. अगर कफ़ील ने किसी शख़्स को हाज़िर करने की ज़िम्मेदारी ली है और वक़्त पर वह हाज़िर न किया गया तो कफ़ील को क़ैद कर लिया जायेगा उस वक़्त तक के लिये कि वह उसको हाज़िर करा दे, यह राय इमाम शाफ़ई और इमाम अबू हनीफ़ा रहिमहुमल्लाह की है, इमाम मालिक (रह०) के नज़दीक हाज़िर न करने की सूरत में जुर्माने के तौर पर माल लिया जायेगा, सज़ा नहीं दी जायेगी।
2. कफ़ील या असील दोनों में से कोई मर जाये तो कफ़ालत की ज़िम्मेदारी ख़त्म हो जायेगी।
3. अगर मकफ़ूल लहू मर जाये तो कफ़ालत ख़त्म नहीं होगी।
4. असील अगर मकफ़ूल बिही को अदा नहीं करे तो कफ़ील को देना पड़ेगा।
5. मकफ़ूल लहू, असील और कफ़ील दोनों से माँगने का हक़ रखता है।
6. कुछ आदमियों ने मिल कर क़र्ज़ लिया और उनमें से एक को सब की तरफ़ से ज़िम्मेदार ठहराया लिया तो पूरी माँग हर एक से की जा सकती है।
7. अगर किसी आदमी के कई आदमी कफ़ील हों तो या तो हर एक ने अलग-अलग ज़िम्मेदारी कुबूल की होगी या इकट्ठा। पहली सूरत में हर कफ़ील से पूरी रक़म या माल मांगा जा सकता है, दूसरी सूरत में कुल रक़म कफ़ीलों में बांट कर के जिसके हिस्से में जितना आयेगा उतना ही वसूल किया जायेगा।

8. अगर कफ़ील के पास असील का रूपया या माल अमानत रखा हुआ है और कफ़ील यह कह कर ज़िम्मेदारी लेता है कि अगर असील अदा न करेगा तो मैं उसकी अमानत से दे दूंगा, तो वह अमानत से मकफ़ूल लहू को अदा करने पर मजबूर है। अब अगर यह अमानत चोरी हो गई या किसी और तरह बरबाद (नष्ट) हो गई तो ज़िम्मेदारी बाक़ी नहीं रहेगी, लेकिन अगर कफ़ालत करने के बाद वह अमानत लौटा दी तो फिर कफ़ील को अपने पास से अदायगी करनी होगी।

9. अगर किसी शख़्स ने ज़ैद को अदालत में हाज़िर करने की ज़मानत ली और ज़ैद के ज़िम्मे अदालत का कोई मुतालबा है तो हाज़िर न करने की सूरत में कफ़ील को मुतालबा अदा करना होगा, और माँगने पर तुरन्त अदा करने की शर्त है तो तुरनत, और अगर कोई मुद्दत मुक़र्रर है तो उस वक़्त पर कफ़ील अदा करने का ज़िम्मेदार होगा, यानी जिन पाबन्दियों के साथ क़र्ज़ या बक़ाया है उन्ही पाबन्दियों के साथ कफ़ील की ज़िम्मेदारी है।

10. मकफूल लहू की तरफ़ से अदायगी की मुद्दत मुक़र्रर कर दी गई और असील कहीं बाहर जाना चाहता हो जिसकी वापसी का वक़्त मुक़र्रर न हो तो उसका कफ़ील उसे क़ानूनी तौर पर मजबूर कर सकता है कि वह अदायगी कर के बाहर जाये, यह उसी वक़्त ज़रूरी है जब मकफ़ूल लहू हुकूमत से अपील करे कि उसका क़र्ज़ वापस दिलाया जाये।

11. कफ़ील ने मकफूल लहू की माँग पर चीज़ उसको दे दी तो अब वह असील से उसी तरह की चीज़ वापस ले सकता है जिस की कफ़ालत उसने की थी जैसे एक मन लाल गेहूँ की ज़मानत की थी लेकिन उसने एक मन सफ़ेद गेहूँ मकफ़ूल लहू को दे दिये तो अब कफ़ील असील से लाल गेहूँ ही लेगा जिसकी कफ़ालत उसने की थी। मतलब यह कि अगर कफ़ील अपनी मर्ज़ी से बेहतर चीज़ मकफूल लहू को पहुंचा दे तो उसकी ज़िम्मेदारी असील पर नहीं।

12. माल की कफ़ालत बहरहाल कफ़ील को निभाना पड़ेगी, अगर वह या असील मर भी जाये तो जो ज़िम्मेदारी ली है वह ख़त्म न होगी, उसके तरके से वसूल कर ली जायेगी।

किन चीज़ों में कफ़ालत हो सकती है:

1. उठाने और लाने ले जाने की कफ़ालत भी सही है जिस तरह किसी को हाज़िर करने की ज़मानत।

2. रेल से सफ़र करने वाले ने जहां तक का टिकट लिया है या अपना माल जहां तक ले जाने के लिये बुक कराया है रेलवे विभाग उसी जगह तक पहुंचाने का ज़िम्मेदार यानी कफ़ील है, अगर गाड़ी किसी वजह से रूक जाये या गिर जाये और मुसाफ़िरों की जान व माल का नुक़सान हो जाये या रेल की दुर्घटना में टिकट खो जाये तो नुक़सान की पूर्ती और जहां के लिये माल बुक कराया था उस जगह तक पहुंचाने की ज़िम्मेदारी सामान को लाने ले जाने वाले विभाग की है, अगर वह पूर्ती न करे तो क़ानूनी कार्रवाई की जा सकती है। हां अगर वह शख़्स बग़ैर टिकट के था तो फिर पहुंचाने की ज़िम्मेदारी नहीं है।

3. जो माल ताजिर लोग रेल के रास्ते मंगाते या भेजते हैं अगर वह गुम हो जाये या टूट फूट जाये तो नुक़सान रेलवे विभाग को देना होगा और भेजने वाला क़ानून के ज़रिये ले सकता है क्योंकि शरीअत में उसको "अल किफ़ालतु बित्तस्लीम" कहते हैं।

इसी तरह डाकख़ाना तमाम ख़ुतूत, रजिस्ट्री, मनी आर्डर, बीमा और पार्सल को जहाँ भेजा गया है वहाँ पहुंचाने का ज़िम्मेदार और कफ़ील है, अगर उनके खो जाने का सुबूत मिल जाये तो डाकख़ाने को उन पर हर्जाना अदा करना होगा, इसको "अल कफ़ालतु बिद्दर्क" कहते हैं।

चीज़ को पहुंचाने का बीमा: जहाज़ चलाने वाली कम्पनियां कुछ सूरतों में अजीरे मुश्तरक (सामूहिक बीमा प्रदानकर्ता) और कुछ सूरतों में अमीन बिल उजरत (मुआवज़े पर रक्षक) होती हैं, अगर ऐसी कम्पनी ज़िम्मेदारी लेती हो कि यह माल फ़लाँ जगह पहुंचा देगी और इतनी फ़ीस लेगी और अगर माल खो गया तो उसका जुर्माना उसके ज़िम्मे होगा, इस्तिलाह में इसे बीमा करना कहते हैं तो यह बीमा जाइज़ है इस सिलसिले में दो बातों का ख़याल रखना चाहिये -

1. जितना माल हो सही सही उतना ही लिखाया जाये, अगर ग़लत तौर पर कोई शख़्स ज़्यादा माल लिखायेगा तो गुनहगार होगा।
2. उस पर जान व माल के उस बीमे का क़यास न किया जाये जो आज कल आम तौर पर राइज है जिसका ज़िक्र सूद के बयान में आ चुका है।

मुर्दे की तरफ़ से कफ़ालत: अगर कोई शख़्स क़र्ज़दार हो और उस की मौत हो जाये और उसके क़र्ज़ की ज़िम्मेदारी दूसरा शख़्स ले तो इमाम अबू हनीफ़ा (रह०) के राय में यह कफ़ालत उसी वक़्त सही होगी जब वह तरके में कुछ छोड़ गया हो वर्ना सही नहीं है, यानी कफ़ील पर अदायगी लाज़िम नहीं होगी, मगर दूसरे इमाम मरने वाले की तरफ़ से कफ़ालत को जाइज़ मानते हैं, हदीस में है कि कुछ सहाबा ने ऐसे क़र्ज़दार की ज़िम्मेदारी ली और आपने उनसे अदा कराया, हालाँकि मरने वाले ने कोई तरका नहीं छोड़ा था, हदीस में आया है कि जब तक मरने वाले का क़र्ज़ नहीं उतर जाता वह एक क़ैदी की तरह रहता है, अगर कफ़ील उसको क़ैद से नजात (मुक्ति) दिलाता है तो उसके हक़ में अच्छा करता है और ख़ुद भी सवाब कमाता है।

हवाला

जिस तरह क़र्ज़ और कफ़ालत को किसी ग़रीब और ज़रूरतमंद आदमी की ज़रूरत को पूरा करने के लिये शरीअत ने जाइज़ कर दिया है, उसी तरह क़र्ज़ में फंसे हुये आदमी को एक और सुहूलत अता की है जिसे हवाला कहते हैं।

'हवाला' का अर्थ और शरई परिभाषा: हवाला का अर्थ है "अपनी ज़िम्मेदारी दूसरे पर डालना" शरीअत में इसकी परिभाषा यह है "नक़्लुद्दैनि मिन ज़िम्मतिन इला ज़िम्मतिन" (क़र्ज़ की ज़िम्मेदारी दूसरे की तरफ़ कर देना)। जनाबे नबी-ए-करीम (स.अ.व.) ने अपनी उम्मत के अमीर लोगों को यह हुक्म फ़रमाया है कि अगर कोई ग़रीब मुसलमान अपने क़र्ज़ की ज़िम्मेदारी उनपर डाले तो उन्हें यह ज़िम्मेदारी क़बूल कर लेना चाहिये, आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया-

> "मालदार का टाल मटोल करना ज़ुल्म है, जब कोई ग़रीब किसी अमीर के ज़िम्मे अपना क़र्ज़ डालना चाहे तो अमीर को ज़िम्मेदारी ले लेनी चाहिये"।

हवाला एक अख़लाक़ी ज़िम्मेदारी: कोई क़ानूनी कार्रवाई हवाला क़ुबूल न करने वाले के ख़िलाफ़ नहीं हो सकती क्योंकि यह एक अख़लाक़ी फ़र्ज़ है और यही समझ कर उसे क़ुबूल करना चाहिये चाहे इसमें माली नुक़सान ही क्यों न उठाना पड़े, क़ुबूल कर लेने के बाद उसको अदा करना ज़रूरी है।

हवाले से संबंधित कुछ इस्तिलाहें:

1. मुहील या मदयून वह शख़्स जिस पर असल बोझ है और वह किसी दूसरे को अपनी ज़िम्मेदारी हवाले करना चाहता है।

2. मुहताल या महाल लहू, या दाइन वह शख़्स जिसकी बक़ाया मुहील पर है।

3. मुहताल अलैह या महाल अलैह वह शख़्स जिसने बक़ाया अदा करने की ज़िम्मेदारी क़ुबूल की है।

4. मुहताल बिही या महाल बिही वह बक़ाया जिसका हवाला किया गया हो।

मिसाल के तौर पर ख़ालिद के ज़िम्मे अहमद के एक हज़ार रूपये बाक़ी हैं, ख़ालिद ने तारिक़ से कहा कि आप अहमद के रूपयों की ज़िम्मेदारी ले लीजिये और तारिक़ ने क़ुबूल कर लिया तो ख़ालिद को मुहील, अहमद को मुहताल या महाल लहू, तारिक़ को मुहताल अलैह या महाल अलैह और एक हज़ार रूपयों को मुहताल बिही या महाल बिही कहेंगे और पूरे मुआमले को हवाला कहेंगे।

कफ़ाला और हवाला में फ़र्क़: कफ़ालत में असील और कफ़ील दोनों से माँग की जा सकती है और हवाला में सिर्फ़ मुहताल अलैह से। अगर किफ़ालत में यह शर्त लगा दी कि असील से कोई माँग नहीं होगी तो किफ़ालत नहीं रहेगी, हवाला हो जायेगी, इसी तरह अगर हवाला में यह शर्त लगा दी कि महाल अलैह के साथ मुहील से भी माँग की जा सकती है तो यह "हवाला" नहीं रहा बल्कि इसे कफ़ालत कहा जायेगा।

हवाले की क़िस्में: इसकी दो क़िस्में हैं – (1) हवाला मुक़य्यदा और (2)हवाला मुतल्लक़ा।

हवाला मुक़य्यदा यह है कि मुहय्यिल का रूपया जो एक शख़्स के ज़िम्मे है वह अपने क़र्ज़ में मुहताल को दिलवा दे जैसे ख़ालिद पर अहमद के एक हज़ार रूपये हैं और अहमद तारिक़ का एक हज़ार रूपये का क़र्ज़दार है, अहमद ने ख़ालिद से माँगा, ख़ालिद ने उससे कहा कि मेरे इतने रूपये तारिक़ के ज़िम्मे हैं तुम उनसे ले लो,

अगर अहमद और तारिक़ दोनों ने मंज़ूर कर लिया तो यह हवाला हो गया, अब अहमद ख़ालिद से नहीं बल्कि तारिक़ से माँगेगा। इसी तरह अगर ख़ालिद ने अहमद को तारिक़ से जो रूपया दिलवाया अगर वह उतना ही है जितना अहमद का उस के ज़िम्मे है तो अब अहमद ख़ालिद से कुछ नहीं माँग सकता, लेकिन अगर कम है तो उतना निकालने के बाद बाक़ी रक़म की माँग अहमद ख़ालिद से करेगा। अगर ख़ालिद का रूपया अहमद के मुतालबे से ज़्यादा है तो बाक़ी रूपया ख़ालिद तारिक़ से मांगेगा।

हवाला मुतल्लक़ा यानी मुहय्यिल का किसी के ज़िम्मे कुछ बाक़ी न हो, बल्कि वह अपने क़र्ज़ के अदा करने का बोझ किसी दूसरे के हवाले कर दे जैसे ख़ालिद अहमद का क़र्ज़दार है उसने तारिक़ से कहा कि "तुम मेरी तरफ़ से अहमद का रूपया अदा करवा दो मेरे पास जब होगा दे दूँगा" अगर तारिक़ ने उसे क़ुबूल कर लिया तो अदायगी उस पर ज़रूरी होगी।

'हवाले' के अरकानः

1. दोनों को अच्छी तरह ख़बर होना यानी मुहताल (जिसको रक़म दिलवाना है) और मुहताल अलैह (जिससे दिलाना है) दोनों को ख़बर हो कि लेना किसे है और देना किसे, और वे राज़ी हों। अगर उनमें से कोई शख़्स भी बेख़बर रहा तो हवाला सही न होगा।
2. मुहील और मुहताल की मौजूदगी, अगर मुहताल अलैह मौजूद न हो तो हर्ज नहीं है मगर जबकि उसकी आज्ञा पहले से प्राप्त हो वर्ना वह जब तक आज्ञा न देदे हवाला पूरा न होगा।(क़ाज़ी ख़ान)

हवाला सही होने की शर्तेंः

पहली शर्त - तीनों (मुहील, मुहताल और मुहताल अलैह) का

आक़िल और बालिग़ होना है, अगर उनमें से कोई पागल हो या बच्चा जैसे महजूर (अपनी मिलकियत में अधिकार के नाक़ाबिल) क़रार दिया गया हो तो उन सबका हवाला सही नहीं है।

दूसरी शर्त - हवाले वाली चीज़ का कफ़ालत के लायक़ होना है जैसे अपनी रखी हुई चीज़ की न तो किफ़ालत सही है न हवाला।

तीसरी शर्त- हवाले में रक़म मालूम होना ज़रूरी है जबकि कफ़ालत में यह ज़रूरी नहीं, जैसे अगर किसी ने कहा कि यह जो कुछ ख़रीदेंगे अगर उसकी क़ीमत यह अदा न करेंगे तो मैं अदा करूँगा, इस सूरत में कफ़ालत हो जायेगी लेकिन अगर मुहील मुहताल से कहे कि जो मैं ख़रीदूँ या क़र्ज़ लूँ उसकी ज़िम्मेदारी आप ले लीजिये तो हवाला सही नहीं है, उसे बताना ज़रूरी है कि किस चीज़ की कितनी रक़म का हवाला कर रहा है।

चौथी शर्त- अपनी ज़ात के लिये क़र्ज़ ली हुई चीज़ का हवाला जाइज़ है इसी तरह अगर वह किसी का कफ़ील या मुहताल अलैह है और वह उसे अदा नहीं कर पाता, तो वह भी उसको किसी के हवाले कर सकता है।

हवाले के एहकाम:

1. हवाला हो जाने के बाद सिर्फ़ मुहताल अलैह से माँग की जा सकती है, मुहील से न होगा और अगर मुहील का कोई कफ़ील है तो हवाले के बाद वह भी बरी (मुक्त) हो जायेगा।
2. मुहताल अलैह मुहील की रक़म अदा करने के बाद अपनी रक़म मुहील से वसूल कर सकता है और अदायगी से पहले मुहील की मौत हो जाये तो उसके तरके से वसूल होगी, अगर उसके कुछ और क़र्ज़ख़्वाह या हक़दार निकलें तो मुहताल अलैह को देने के बाद उन्हें भी दिया जायेगा।
3. अगर मुहील का रूपया किसी के यहाँ अमानत रखा है और

उसी को मुहताल अलैह बनाया तो वह मुहील का रूपया अदा कर के अमानत के रूपये से अपना रूपया वसूल कर सकता है, इस बीच में अगर अमानत का रूपया मुहताल अलैह से खो गया तो हवाला सही न होगा, मुहताल अलैह से माँगेगा लेकिन अमानत या ज़मानत होने की सूरत में हवाला बातिल न होगा।

4. ज़ैद अहमद का मक़रूज़ है, ज़ैद का कुछ माल ख़ालिद के पास रखा है, ज़ैद अपने क़र्ज़ को ख़ालिद के हवाले करता है कि वह उसका माल बेच कर अहमद का क़र्ज़ अदा कर दे, ख़ालिद ने मंज़ूर कर लिया तो अब वह मुहताल अलैह हो गया, अब उसे मुहताल (अहमद) का रूपया अदा करना ज़रूरी होगा और क़ानूनन उसे अदा करने पर मजबूर किया जायेगा।
5. मुहताल अलैह हवाला की गई रक़म को अदा करने से पहले मुहील से उसकी माँग नहीं कर सकता।

6. मुहील ने जो चीज़ देने के लिये मुहताल अलैह को बताई हो वही चीज़ वह मुहील से वापस लेने का हक़दार है। अगर मुहताल अलैह ने अपनी तबीअत से कोई चीज़ दे दी तो वह चीज़ मुहील से नहीं ले सकता, जैसे मुहील ने मुहताल अलैह से चार तोला चाँदी किसी शख़्स को देने के लिये कहा लेकिन मुहताल अलैह ने उसी क़ीमत का सोना उस शख़्स को दे दिया, अब अगर मुहताल अलैह मुहील से चार तोला चाँदी के बजाए उस कीमत का सोना मांगे तो यह जाइज़ नहीं, वह चार तोला चाँदी या उसकी क़ीमत ही ले सकता है। इसी पर दूसरी चीज़ो को भी क़यास किया जाये।

7. अगर हवाला करने के बाद खुद मुहील ने अदायगी कर दी तो मुहताल को मुहताल अलैह से मांगने का हक़ नहीं रहा।
8. मुहताल या मुहताल अलैह के मरने से हवाला ख़त्म नहीं होगा, मुहताल अलैह के तरके से हवाला की हुई रक़म मुहताल या उसके वारिस को दी जायेगी।

ग़ैर-मुल्की तिजारत में हवाला और कफ़ालतः ग़ैर मुल्की तिजारतों में ज़र (मुद्रा) को बदलने और जिन्स को बदलने के लिये हवाला और कफ़ालत दोनों जाइज़ हैं लेकिन बट्टा काटना इस्लामी शरीअत में जाइज़ नहीं क्योंकि यह सूद की शक्ल है बग़ैर बट्टा काटे हुए कोई रक़म या चीज़ दूसरे मुल्क में हवाला की जाये तो सही है। मुहताल अलैह की मौजूदगी ज़रूरी नहीं, उसकी इजाज़त ले लेना काफ़ी है।

रहन (गिरवी)

अगर सफ़र में किसी को रूपये की ज़रूरत पड़ जाये या अपने वतन में ही इतने रूपये की ज़रूरत पड़ गई कि उसे आसानी के साथ क़र्ज़ लेना मुम्किन न हो, तो वह अपनी चीज़ किसी के पास रहन (गरवी) रख कर रूपये ले सकता है। इस तरह क़र्ज़ देने वाले को इतमीनान हो जायेगा कि उसका रूपये मारा नहीं जायेगा और क़र्ज़ लेने वाले की ज़रूरत भी पूरी हो जायेगी।

रहन एक अख़लाक़ी ज़िम्मेदारी: किसी शख़्स को माल क़र्ज़ देने पर मजबूर नहीं किया जा सकता, लेकिन इस्लामी समाज मालदार लोगों पर अपने ज़रूरतमंद भाई की मदद करना अख़लाक़न ज़रूरी क़रार देता है। अब अगर वह बग़ैर किसी ज़मानत के मदद नहीं करता है तो वह उसकी कोई चीज़ रहन रख ले और मदद कर दे। चुनाचे कुरआन पाक में मुत्तक़ी (ख़ुदा से डरने वाले) मुसलमानों से कहा गया है –

وَاِنْ كُنْتُمْ عَلٰى سَفَرٍ وَّلَمْ تَجِدُوْا كَاتِبًا فَرِهٰنٌ مَّقْبُوْضَةٌ ط فَاِنْ اَمِنَ
بَعْضُكُمْ بَعْضًا فَلْيُؤَدِّ الَّذِى اؤْتُمِنَ اَمَانَتَهٗ وَلْيَتَّقِ اللّٰهَ رَبَّهٗ ط (بقرہ۔۲۸۳)

''व इन कुनतुम अला सफ़रिवं वलम तजिदू कातिबन फ़रिहानुम मक़बूज़तुन, फ़इन अमिना बअज़ुकुम बअज़न फ़लयुअद्दिल्लज़ीअ तुमिना अमानतहू वल यत्तिक़िल्लाहा रब्बहू''। (सूरह बक़रा: 283)

अनुवाद: अगर तुम सफ़र की हालत में हो और कोई लिखने वाला न मिले तो रहन बिल क़ब्ज़ पर मुआमला करो और अगर कोई शख़्स दूसरे का एतेबार कर के मुआमला करे तो जिस पर भरोसा किया गया है उसे चाहिये कि अमानत अदा

करे और अल्लाह अपने रब से डरे।

सफ़र की हालत में रहन का ज़िक्र इस लिए है कि आमतौर पर सफ़र में ऐसी इमरजेंसी ज़रूरत पेश आती है, वर्ना यह सूरत अगर बग़ैर सफ़र के पेश आ जाए तो भी रहन जाइज़ है।

इस आयत में दाइन (क़र्ज़ देने वाले) के लिये यह बात कही गई है कि अगर बग़ैर गिरवी के उसको इतमीनान हो जाये तो क़र्ज़ देना चाहिये मगर चेतावनी मदयून (क़र्ज़दार) को भी दी गई है कि जिस तरह उसने एतबार कर के रूपये दे दिये तो तुम्हारी ज़िम्मेदारी का तक़ाज़ा यह है कि उस रूपये को एक अमानत समझ कर जब भी रूपये आ जायें तो तुरन्त वापस कर दो।

ख़ुद नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वाल्लम ने और आप (स.अ.व.) के सहाबा किराम (र.त.अ) ने ज़रूरत के वक़्त गिरवी रख कर क़र्ज़ लिया है। हज़रत आयशा (र.त.अ.) से रिवायत है कि एक बार आप (स.अ.व.) को कुछ ग़ल्ले की ज़रूरत हुई तो आप (स.अ.व.) ने एक यहूदी से 30 साअ (ढाई मन) ग़ल्ला उधार लिया और उस के इतमीनान के लिये अपनी लोहे की ज़िरह गिरवी रख दी। चुनाचे आप (स.अ.व.) की वफ़ात हुई तो वह ज़िरह यहूदी के यहाँ गिरवी थी। (बुख़ारी)

आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि "गिरवी रख देने से राहिन (यानी जो अपनी चीज़ गिरवी रख देता है) उस फ़ायदे से महरूम नहीं किया जा सकता जो उस चीज़ से हासिल हो" यह फ़रमान मुबारक एक क़ानूनी दफ़ा भी है और अख़लाक़ी हिदायत भी, क़ानूनी पहलू यह है कि मुरतहिन (जिसके पास गिरवी रखा गया है) को गिरवी रखी हुई चीज़ से कोई फ़ायदा उठाना जाइज़ नहीं, अगर वह फ़ायदा उठायेगा तो उसका जुर्माना देना होगा, इसका पता आप (स.अ.व.) के इस क़ौल से भी चलता है कि क़र्ज़ से जो फ़ायदा उठाया जाये वह सूद है, अख़लाक़ी पहलू यह है कि मुरतहिन नफ़ा

हासिल करने के लिये क़र्ज़ दे कर कोई चीज़ गिरवी न रखे बल्कि सिर्फ़ इन्सानी हमदर्दी की बिना पर क़र्ज़ दे क्योंकि हो सकता है कोई वक़्त ऐसा भी आ जाये कि उसे दूसरों से क़र्ज़ लेना पड़ जाये, गिरवी रखी हुई चीज़ से इस लिये भी फ़ायदा न उठाना चाहिये कि चीज़ रहन रख लेने के बाद उसको नुक़सान का डर नहीं रहा।

रहन का अर्थ और शरई परिभाषा: किसी चीज़ को किसी सबब की बुनियाद पर रोक रखना या पाबन्द कर देना गिरवी का शाब्दिक अर्थ है। शरीअत में किसी को कोई चीज़ किसी मांग या क़र्ज़ के बदले इस लिये रोक लेने को कहते हैं कि वह मांग या क़र्ज़ वसूल हो जाये, मारा न जाये। (हिदाया, मुजल्ला)

इस्तिलाहें: (1) इरतिहान, गिरवी लेना (2) राहिन, गिरवी करने वाला (मक़रूज़ या मदयून) (3) मुरतहिन, गिरवी रखने वाला (दाइन या हक़दार) (4) मरहून, वह चीज़ जो गिरवी रखी जाये (5) अदल, वह शख़्स जिस के यहाँ चीज़ अमानत रखी जाये।

रहन के अरकान व शर्तें: 1. रहन एक तरह का मुआहदा है जिस में राहिन व मुरतहिन दोनों का गिरवी रखने के लिये राज़ी होना ज़रूरी है यानी राहिन यह कहे कि मैं ने फ़लाँ क़र्ज़ के बदले, में यह चीज़ रहन रखी और मुरतहिन अपनी क़बूलियत का इज़हार करे इस ईजाब व क़बूल में रहन शब्द का इस्तेमाल ज़रूरी नहीं।

2. रहन का दूसरा ज़रूरी रूक्न क़ब्ज़ा है यानी जो चीज़ राहिन ने मुरतहिन को दी, उस पर क़ब्ज़ा भी दे जैसे कोई खेत गिरवी रखा मगर उस पर क़ब्ज़ा दूसरे का है तो यह रहन सही न होगा।

3. तीसरी शर्त राहिन और मुरतहिन दोनों का आक़िल होना है, बालिग़ होना ज़रूरी नहीं, होशियार बच्चे जो समझ रखते हों, कोई चीज़ रहन रख सकते हैं।

4. चौथी शर्त मरहून (यानी चीज़) का इस क़ाबिल होना कि

उसकी क़ीमत वसूल की जा सके जैसे तालाब की मछली या बाग़ के फल जो अभी आये नहीं हैं या किसी दूसरे मुल्क में कोई माल है जो अभी आया नहीं है, इन सब चीज़ों को रहन में देना सही न होगा क्योंकि ये चीज़ें इस वक़्त न तो मौजूद हैं और न उन पर क़ब्ज़ा है।

मरहून की हैसियतः जो चीज़ गिरवी रखी जाये वह मुरतहिन के हाथ में ज़मानत के साथ अमानत समझी जायेगी, वह उसकी उसी तरह हिफ़ाज़त करेगा जिस तरह अमानत की की जाती है, फ़र्क़ इतना है कि अमानत खो जाने पर अमीन पर ज़िम्मेदारी नहीं होती लेकिन गिरवी रखी हुई चीज़ खो जाने पर उसकी ज़िम्मेदारी मुरतहिन पर होगी। इसकी कई सूरतें हैं –

1. अगर खो जाने वाली गिरवी रखी चीज़ उसी क़ीमत की थी जितनी क़र्ज़ की रक़म है तो राहिन मुरतहिन से अपना रूपये नहीं माँग सकता, हिसाब बराबर सराबर समझ लिया जायेगा।

2. अगर खोई हुई गिरवी रखी चीज़ की क़ीमत असल रक़म से कम है तो कीमत का हिसाब लगाने के बाद बाक़ी रूपये की मांग मुरतहिन राहिन से कर सकता है।

3. अगर खो जाने वाली मरहून चीज़ की क़ीमत असल रूपये से ज़्यादा हो तो फिर क़र्ज़ की रक़म को छोड़ कर नुक़सान राहिन को बर्दाश्त करना पड़ेगा क्योंकि मरहून चीज़ के बराबर नुक़सान का ज़िम्मेदार मुरतहिन था और जो रक़म ज़्यादा बची वह उसके पास अमानत (बे ज़मानत) थी और अमीन से ऐसी अमानत का जुर्माना नहीं लिया जा सकता, मिसाल के तौर पर–

एक शख़्स ने सौ रूपये क़र्ज़ लिये और एक ज़ेवर मुरतहिन के पास गिरवी रख दिया और वह चोरी हो गया तो अगर यह सौ ही रूपये की क़ीमत का था तो दोनों का हिसाब बराबर हो गया, कोई किसी से माँग नहीं कर सकता लेकिन अगर यह 90 रूपये का था

तो समझा जायेगा कि 90 रूपये मुरतहिन को मिल गये, अब सिर्फ़ 10 रूपये की माँग राहिन कर सकता है और अगर वह ज़ेवर 125 रूपये का था तो सौ रूपये क़र्ज़ में से माने जायेंगे और 25 रूपये राहिन के बेकार होंगे, मुरतहिन से माँग नहीं कर सकता क्योंकि मुरतहिन सौ रूपये का ज़ामिन और 25 रूपये का अमीन था अमानत अगर जान बूझ कर या ग़फ़लत से बरबाद न हुई हो तो उसकी ज़िम्मेदारी अमीन पर नहीं आती।

राहिन की ज़िम्मेदारियां और हुक़ूक़:

1. राहिन को जो चीज़ गिरवी रखना हो उसे मुरतहिन के हवाले कर दे।
2. मरहून चीज़ जब तक मुरतहिन के क़ब्ज़े में नहीं दी है वह रहन का समझौता तोड़ सकता है।
3. मरहून चीज़ को मुरतहिन के क़ब्ज़े में देने के बाद राहिन रहन के समझौते को बग़ैर मुरतहिन की रज़ामंदी के ख़त्म नहीं कर सकता।
4. मकफ़ूल अनहु कफ़ील को उसके इतमीनान के लिये कोई चीज़ रहन के तौर पर दे सकता है और ख़ुद कफ़ील भी रहन की माँग कर सकता है।
5. अगर दो आदमियों ने मिल कर एक आदमी को क़र्ज़ दिया यानी एक आदमी दो आदमियों का मक़रूज़ हुआ तो वे मक़रूज़ एक ही चीज़ दोनों क़र्ज़ों के बदले रहन रख सकता है, अगर वे दोनों उस चीज़ को मिल कर गिरवी रख लें। इसी तरह अगर मक़रूज़ दो हों और एक क़र्ज़ देने वाला तो वे दोनों मक़रूज़ भी एक मुशतरक चीज़ को रहन में दे सकते हैं और क़र्ज़ देने वाला उसे कुबूल कर सकता है।
6. राहिन को गिरवी रखी हुई चीज़ बदलने का अधिकार है, अगर

उसे ज़रूरत पड़ जाये तो वह उस चीज़ को वापस ले कर उसके बदले दूसरी चीज़ मुरतहिन की रज़ामंदी से उसके हवाले कर सकता है।

7. गिरवी रखने की मुद्दत में अगर गिरवी रखी चीज़ में कोई बढ़ोतरी हुई या मुनाफ़ा दिया तो वह राहिन का होगा जैसे बाग़ में फल आये या खेत में पैदावर हुई और बाग़ या खेत गिरवी था, या कोई जानवर गिरवी रखा था और उसने बच्चा दिया, या मकान गिरवी रखा था उसका किराया वसूल हुआ तो यह सब बढ़ोतरी राहिन के होंगे। मगर मुरतहिन के पास अमानत रहेंगे जब गिरवी रखी हुई चीज़ वापस होगी तो उसके साथ वह चीज़ भी वापस होंगी, जो चीज़ उनमें जल्द ख़राब हो जाने वाली हो जैसे फल उनको राहिन बेच कर क़ीमत अपने पास रख सकता है।

8. गिरवी रखी हुई चीज़ पर हासिल होने वाला नफ़ा चूंकि राहिन का हक़ होता है इस लिये उसके बाक़ी रहने और हिफ़ाज़त के लिये जो कुछ ख़र्च करना पड़े वह भी राहिन के ज़िम्मे होगा, जैसे जानवर के चारे का ख़र्च या चरवाहे की मज़दूरी, अगर खेत है तो उसकी बुवाई, जुताई और सिंचाई पर होने वाला ख़र्च राहिन के ज़िम्मे होगा। पैदावार का मुनाफ़ा मुरतहिन के पास रहेगा, जब रूपया अदा कर के गिरवी रखी हुई चीज़ छुड़ाई जाये तो यह मुनाफ़े भी उसको मिलेगा, यही हुक्म बाग़ और मकान के मुनाफ़े का है।

9. राहिन मुरतहिन की रज़ामंदी के बग़ैर गिरवी रखी हुई चीज़ को बेच नहीं सकता, अगर ऐसा करेगा तो बैअ मुरतहिन की रज़ामंदी पर निर्भर रहेगी'

10. राहिन की मौत हो जाये तो रहन का मुआमला ख़त्म समझा जायेगा, उसके वरसा अगर बालिग़ हैं तो उन पर ज़रूरी है कि

वह उसके तरके से क़र्ज़ अदा कर के गिरवी रखी हुई चीज़ वापस ले लें या गिरवी रखी हुई चीज़ को बेचने की इजाज़त दे दें।

अगर वरसा नाबालिग़ हैं या कहीं दूर रहते हैं तो जो शख़्स उस के तरके का ज़िम्मेदार हो उसको चाहिये कि गिरवी रखी हुई चीज़ को बेचने और उससे अपना क़र्ज़ वसूल कर लेने की इजाज़त मुरतहिन को दे दे, दूसरी सूरत में मुरतहिन क़ानूनी दावा कर के गिरवी रखी हुई चीज़ को बेच कर अपना क़र्ज़ वसूल करने की इजाज़त हासिल कर सकता है इससे ज़ाहिर है कि वली, वारिस या अदालद की इजाज़त के बग़ैर उसे बेचने का हक़ नहीं है।

मुरतहिन की ज़िम्मेदारियां और उसके हुकूक़:

1. मुरतहिन अकेले अपनी मर्ज़ी से गिरवी का मुआमला तोड़ सकता है।
2. मुरतहिन गिरवी रखी हुई चीज़ का अमीन भी है और मुहाफ़िज़ (रक्षक) भी, उस पर और उसके घर वालों पर गिरवी रखी हुई चीज़ की हिफ़ाज़त ज़रूरी है।
3. इस देख भाल और हिफ़ाज़त के सिलसिले में अगर कुछ ख़र्च करना हो तो उसे भी मुरतहिन बर्दाश्त करेगा, जैसे सौ मन ग़ल्ला रहन रखा तो इसके लिए मकान की ज़रूरत होगी या जानवर रहन रखे तो इलाज और देखभाल में होने वाला ख़र्च, लेकिन अगर यह ख़र्च मरहूना चीज़ की बक़ाया मुनाफ़े से संबधित हो तो वह राहिन के जिम्मे होगी, जैसे गिरवी रखे हुए जानवरों का चारा, गिरवी रखे हुए खेत की सिंचाई, गिरवी रखे हुये फलों की देख भाल, इस क़िस्म का ख़र्च राहिन के ज़िम्मे होगा, मुरतहिन या तो राहिन से लेता रहे या अपने पास से ख़र्च के बाद में राहिन से वसूल कर ले।
4. मुरतहिन गिरवी रखी हुई चीज़ से कोई फ़ायदा नहीं उठा सकता

जैसे अगर मकान है तो उसमें न रह सकता है न उसका किराया वसूल कर सकता है। गिरवी रखे हुए खेत की पैदावार नहीं खा सकता, गिरवी रखा हुआ जानवर अगर दूध वाला है तो उसका दूध नहीं पी सकता, अगर सवारी का है तो उसपर सवारी नहीं कर सकता, अगर बोझ उठाने वाला है तो उस पर सामान नहीं लाद सकता। नक़द रूपया या सोना चांदी गिरवी है तो उससे तिजारत या कारोबार नहीं कर सकता, हां अगर राहिन से किसी चीज़ के इस्तेमाल की इजाज़त ले ली हो और ख़ुशी के साथ दे दी हो तो इस्तेमाल करने की इजाज़त होगी लेकिन रहन लेते वक़्त इस क़िस्म की कोई शर्त लगाना मकरूह और बिला इजाज़त इस्तेमाल हराम है। नुक़सान की सूरत में जुर्माना अदा करना पड़ेगा।

5. राहिन अगर गिरवी रखी हुई चीज़ को बाक़ी रखने का और देख भाल का ख़र्च मुरतहिन को नहीं देता तो मुरतहिन ऐसा किया हुआ ख़र्च नफ़े में से लेगा।

मरहूना चीज़ से फ़ायदा उठाना: आम ज़हनियत यह है कि मरहून चीज़ जिसके पास गिरवी होगी वह उससे फ़ायदा उठायेगा, हक़ीक़त में कोई भी फ़ायदा उठाया गया तो वह सूद होगा। सूद की परिभाषा यह है कि किसी चीज़ से उसका बदला दिये बग़ैर फ़ायदा उठाया गया तो मरहून चीज़ से फ़ायदा उठाना मुरतहिन के लिये सूद है। रहन के खेत का ग़ल्ला या रहन के बाग़ का फल अगर मुरतहिन इस्तेमाल करेगा तो राहिन को उसके बदले में कुछ नहीं मिलता बल्कि उलटा नुक़सान होता है, जिस तरह सूदख़ोर एक सौ रूपये का सूद एक हज़ार तक वसूल कर लेता है यह मुरतहिन एक सौ क़र्ज़ देकर मरहून चीज़ से कई सौ का फ़ायदा उठा लेता है दोनो में कोई फ़र्क़ नहीं है, इस्तेमाल की इजाज़त अगर राहिन मुरतहिन को देता है तो यह सिर्फ़ मजबूरी की इजाज़त है जिसका शरीअत में कोई एतेबार नहीं।

7. रहन के ज़माने में गिरवी रखी हुई चीज़ में जो फ़ायदा हासिल होगा या उसमें बेशी होगी उस पर मिलकियत (स्वामित्व) राहिन की होगी मगर उस पर क़ब्ज़ा मुरतहिन का रहेगा यानी उसे भी मरहून समझा जायेगा और जब मरहून चीज़ की वापसी का वक़्त आयेगा तो यह ज़्यादा हासिल की हुई चीज़ भी वापस कर दी जायेगी।

8. अगर राहिन कुछ रूपया अदा करे और कुछ बाक़ी रखे तो जब तक पूरा रूपया अदा न हो जाये मुरतहिन को चीज़ वापस न करने का इख़्तियार है।

9. मरहूना चीज़ में रहन के दौरान अगर कोई ख़राबी पैदा हो जाये तो उसकी ज़िम्मेदारी मुरतहिन पर होगी। और राहिन को इख़्तियार होगा कि क़र्ज़ अदा करते वक़्त जितना नुक़सान हुआ है उतना रूपया काट ले।

10. राहिन अगर गिरवी रखी हुई चीज़ को मुरतहिन की इजाज़त से किसी दूसरे के यहां रहन रखना चाहे तो ऐसा कर सकता है। इस सूरत में पहला रहन बातिल हो जायेगा।

11. मुरतहिन गिरवी रखी हुई चीज़ को राहिन की इजाज़त और मर्ज़ी के बग़ैर बेच नहीं सकता। अगर बग़ैर इजाज़त ऐसा हो गया तो उसे दो बातों में से एक बात करना होगी, या तो बैअ को तोड़ दे या राहिन से बैअ की इजाज़त हासिल करे।

12. अगर रहन की मुद्दत ख़त्म हो जाये और राहिन रक़म अदा कर के अपनी चीज़ वापस न ले तो मुरतहिन को उसे बेच कर अपनी क़ीमत वसूल करने का हक़ होगा और जहाँ इस्लामी अदालत हो वहाँ क़ाज़ी से इजाज़त ले कर बेचेगा।

13. अगर राहिन मौजूद न हो तो मुरतहिन को हुकूमत की इजाज़त लेना पड़ेगी बग़ैर उसके वह बेच नहीं सकता।

14. मुरतहिन की मौत हो जाये तो उसके वरसा क़ायम मक़ाम होंगे।

रहन से संबंधित विभिन्न मसाइलः

1. जिस चीज़ में कई लोगों का हिस्सा हो उसको गिरवी नहीं रखा जा सकता जब तक उसकी बांट (तक़सीम) न हो जाये।
2. बाग़ का फल जो पेड़ पर हो या खेती जो खेत में लगी है उनका गिरवी रखना जाइज़ नहीं है, इसी तरह सिर्फ़ पेड़ का गिरवी रखना भी जाइज़ नहीं है। अगर पेड़ रहन रखना है तो उसकी ज़मीन भी गिरवी होना चाहिये।
3. इसी तरह पेड़ को बग़ैर फल के और ज़मीन को बग़ैर खेती के गिरवी रखना भी जाइज़ नहीं है, ये चीज़ें ख़ुद बख़ुद रहन में दाख़िल होंगी, इस लिये इनका अलग करना सही नहीं है।
4. अमानत, आरियत, मुज़ारबत और शिर्कत की चीज़ों को गिरवी रखना जाइज़ नहीं है, इसी तरह हक़ माँगने के डर से गिरवी रखना जाइज़ नहीं जैसे बेचने वाले ने कोई चीज़ बेची और ख़रीदने वाले ने क़ीमत अदा करके उसको ख़रीद लिया, फिर उसे यह ख़याल हुआ कि हो सकता है इस चीज़ का हक़दार कोई और हो जाये और इस वजह से वह बेचने वाले से कोई चीज़ गिरवी रखने को कहता है ताकि ज़रूरत के वक़्त उससे क़ीमत वुसूल की जा सके, यह दिर्क है, दिर्क के आधार पर कफ़ालत तो हो सकती है लेकिन गिरवी करना नाजाइज़ है।

····

अमानत

इन्सान को कभी न कभी ऐसा मौक़ा पेश आ जाता है कि उसे अपनी चीज़ या रूपये पैसे की हिफ़ाज़त के लिये दूसरों की मदद की ज़रूरत पड़ती है। इन्सान का अख़लाक़ी फ़र्ज़ यह है कि जब उससे मदद मांगी जाये तो वह इनकार न करे बल्कि ख़ुशी के साथ उस तकलीफ़ को बर्दाश्त करे क्योंकि ऐसी ज़रूरत कभी उसे भी पड़ सकती है। शरीअत में इसे अमानत और वदीअत (धरोहर) कहते हैं, दोनों में थोड़ा इस्तिलाही फ़र्क़ है, वदीअत में क़स्द व इरादे का होना ज़रूरी है जबकि अमानत क़स्द व इरादे के साथ भी होती है और बग़ैर क़स्द व इरादे के भी जैसे आप रास्ते में कोई चीज़ पड़ी पायें तो यह चीज़ आप के हाथ में अमानत होगी, इस को वदीअत नहीं कहेंगे। लेकिन अगर ऐसी ही चीज़ कोई आपके पास हिफ़ाज़त की ग़र्ज़ से रखवाये तो उसे वदीअत भी कह सकते हैं, और अमानत भी।

यानी यह कि हर वदीअत को अमानत कह सकते हैं मगर हर अमानत को वदीअत नहीं कह सकते। कुरआन में वदीअत और अमानत दोनों के लिये अमानत ही का शब्द इस्तेमाल हुआ है, हदीस में दोनों शब्द एक दूसरे के अर्थ में इस्तेमाल हुए हैं। फुक़हा ने दोनों शब्दों को आम तौर पर अलग-अलग अर्थ में इस्तेमाल किया है।

अमानत के बारे में कुरआन व हदीस के फ़रमानः जैसा कि ज़िक्र किया जा चुका कि किसी की चीज़ अगर बग़ैर इरादे के हाथ में आ जाये तो वह अमानत होगी। इसी तरह अगर आप कोई चीज़ उधार लायें, किराये पर लें, गिरवी रखें या उस चीज़ का आपको ज़िम्मेदार या वली बना दिया जाये तो इन तमाम सूरतों में आप उस चीज़ या रक़म के अमीन ही कहे जायेंगे। आप को उस की हिफ़ाज़त

उसी तरह करना होगी जिस तरह अपनी चीज़ की करते हैं। यह न हो कि अपनी चीज़ की हिफ़ाज़त तो अलमारी या बक्स में बन्द कर के करें और दुसरे की चीज़ खुली जगह रख दें, यह अमानत में ख़यानत होगी, अमानत का अर्थ है, सुरक्षित होना, अगर सुरक्षित न हो तो यह ख़यानत होगी।

किसी यतीम की जायदाद या लावारिस का माल आप की ज़िम्मेदारी में रखा जाये तो ठीक-ठीक उस की देख भाल करना आप पर लाज़िम है ताकि जिसका जो हक़ है वह उसे पहुंच सके, अगर आप ने ऐसा न किया तो ख़यानत करने वाले समझे जायेंगे अल्लाह का हुक्म है –

اِنَّ اللّٰهَ يَامُرُكُمْ اَنْ تُؤَدُّوا الْاَمٰنٰتِ اِلٰى اَهْلِهَا. (نساء-۵۸)

''इन्नल्लाहा यामुरुकुम अन तुअद्दुल अमानाति इला अहलिहा''। (सूरह निसा, 58)

अनुवादः अल्लाह तआला हुक्म देता है कि अमानतों को उनके मालिकों और हक़दारों तक पहुंचा दो।

मोमिनों की ख़ूबियाँ बयान करते हुए फ़रमाया गया وَالَّذِيْنَ هُمْ لِاَمٰنٰتِهِمْ وَعَهْدِهِمْ رَاعُوْنَ ''वल्लज़ीनहुम लिअमानातिहिम व अहदिहिम राऊन'' मोमिन वे हैं जो अपने ज़िम्मे ली हुई अमानतों और अपने अहद का लिहाज़ रखते हैं, इसके विपरीत ख़यानत करने वालों की निंदा की गई है फ़रमाया اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ كُلَّ خَوَّانٍ كَفُوْرٍ ''इन्नल्लाहा लायुहिब्बु कुल्ला ख़व्वानिन कफ़ूर'' (अल्लाह तआला ख़यानत करने वाले नाशुक्रे को पसंद नहीं करता)।

यहूदियों के बारे में फ़रमाया कि उनमें कुछ तो ऐसे हैं कि अगर एक ख़ज़ाना उनके पास अमानत रख दिया तो वह वापस कर देंगे और कुछ ऐसे हैं कि एक दीनार भी उनके पास रख दो तो जब तक सर पर सवार न हो वे वापस नहीं करेंगे कुरआन पाक ने अमानतदारी

मोमिन की ख़ूबी बताई है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया لَا إِيْمَانَ لِمَنْ لَّا أَمَانَةَ لَهُ "ला ईमाना लिमल ला अमानता लहू" (जिसमें अमानतदारी नहीं उस का दिल ईमान से ख़ाली है। आप (स.अ.व.) ने ख़यानत को मुनाफ़िक़ की निशानी फ़रमाया है, आप ने फ़रमाया कि मुनाफ़िक़ की पहचान तीन बातों से होती है, एक यह कि "जब उसके पास अमानत रखी जाये तो ख़यानत करे" आपने हिदायत फ़रमा दी है कि "जो तुम्हारे पास अमानत रखे उस की अमानत अदा कर दो और अगर तुम्हारी ख़यानत कोई कर भी ले तो तुम उसकी ख़यानत न करने लगो, यानी अगर ख़यानत करने वाला भी कोई तुम्हारे पास अमानत रखे तो तुम उसके साथ भी ख़यानत न करो, अगर उसने अपनी ज़िम्मेदारी पूरी नहीं की तो उसकी यह बात तुम्हें अपनी ज़िम्मेदारी अदा करने से न रोके।

अमानत का हुक्मः अमानत एक अख़लाक़ी फ़र्ज़ है, ख़ुलूस, हमदर्दी और अच्छे व्यवहार का नाम है, क़ानूनन किसी को मजबूर नहीं किया जा सकता कि वह अमानत रखे, अगर अचानक कोई दुर्घटना होने से अमानत बरबाद हो जाये तो अमानत रखने वाले पर उसका जुर्माना लागू नहीं किया जायेगा, जुर्माना उसी सूरत में देना पड़ेगा जब यह साबित हो जाये कि जान बूझ कर उसने ग़फ़लत की है और उसे बरबाद होने दिया गया, मिसाल के तौर पर रास्ते में पड़ी चीज़ इस ख़याल से उठा ली कि उसके मालिक को पहुंचाई जाये तो यह चीज़ अमानत होगी अगर वह जानता था कि यह चीज़ फ़लाँ शख़्स की है, अब अगर वह किसी दुर्घटना में बरबाद हो जाये तो उस पर कोई ज़िम्मेदारी न होगी लेकिन अगर वह यह न जानता हो कि यह चीज़ फ़लाँ शख़्स की है तो यह चीज़ लुक़ता कहलायेगी।

लुक़ता का हुक्मः किसी ने कोई पड़ी हुई चीज़ पाई जिस के मालिक का पता नहीं तो वह लुक़ता है, उसका हुक्म यह है कि उसे अपने पास अमानत रख कर एलान करे कि फ़लां जगह पाई है जिसकी हो

वह ले जाये, यह एलान बराबर करता रहे, अगर एक साल तक कोई मालिक न मिले तो बैतुलमाल में जमा कर दे, अगर मालिक मिल जाये तो तुरन्त उसके हवाले कर दे अगर गुम कर दिया तो जुर्माना देना पड़ेगा मगर जब कि वह क़सम खा ले कि मैंने जान बूझ कर गुम नहीं किया है, क़सम लेने के बाद जुर्मान नहीं लगाया जायेगा।

अगर इस्लामी बैतुलमाल न हो जिसमें जमा किया जा सके तो दान कर देना चाहिये अपने इस्तेमाल में न लाना चाहिये अगर वह खुद ग़रीब और ज़रूरतमंद है तो इस्तेमाल कर सकता है।

अमानत का दायरा कितना वसीअ (विस्तृत) है: अगर एक शख़्स किसी संस्था या दफ़्तर में किसी काम पर लगा है तो जितनी चीज़ें उसके चार्ज (क़ब्ज़े) में दी गई हों जैसे फ़रनीचर, कागज़, क़लम, दवात, चपरासी वग़ैरा सब उसके हाथ में अमानत हैं, उन्हें अपने ज़ाती इस्तेमाल में नहीं लाना चाहिये। इसी तरह जिस वक़्त की वह तनख़्वाह पाता है उस वक़्त में अपना ज़ाती काम न करना चाहिये जो वक़्त काम के लिये मुक़र्रर है वह एक अमानत है, अगर अपना ज़ाती काम करेगा तो यह ख़यानत होगी जिसका जुर्माना भी लिया जा सकता है, जो काम उसके ज़िम्मे है उसको करने के बजाये गप लड़ाना, मनोरंजन करना, या वक़्त गुज़ारी करना ये सब वक़्त की अमानत में ख़यानत हैं, अगर अमानत की इस ज़िम्मेदारी को हुकूमत या किसी संस्था के कर्मचारी या मुलाज़िम महसूस कर लिया करें तो कम वक़्त में ज़्यादा काम हो, हज़ारों रूपये की बचत हो मगर यह तभी हो सकता है जब अख़लाक़ी तसव्वुरात को न भूला जाये।

वदीअत की परिभाषा: ऊपर बयान किया जा चुका है कि अमानत और वदीअत दोनों का अर्थ एक ही है और अलग अलग अर्थ भी रखते हैं, वदीअत की परिभाषा शरीअत में यह कराई गई है - "अपनी किसी चीज़ या माल को हिफ़ाज़त के लिये दूसरे के हवाले करना"। मक़सद यह है कि जो चीज़ वदीअत रखी जाये वह

वदीअत रखने वाले की मिल्क (क़ब्ज़े) भी हो और अपने क़स्द व इरादे से वह किसी के सुपुर्द कर दे तब वदीअत का रखना सही होगा।

वदीअत का हुक्म: जिसके पास अमानत वदीअत रखी जा रही है, अगर वह उसको मंज़ूर कर ले तो गोया दोनों में मुआहदा हो गया कि जब तक भी वह चीज़ उसके पास रखी है उसकी हिफ़ाज़त अपने माल की तरह वाजिब होगी, अगर हिफ़ाज़त में कोताही की और वह चीज़ बरबाद हो गई तो उसका जुर्माना देना पड़ेगा।

वदीअत का मुआहदा ख़त्म होने की मुद्दत: जितने दिन के लिये वह चीज़ अमानत रखवाई थी अगर वे दिन गुज़र जायें या अमीन और वदीअत रखने वाले में से कोई मुआहदा तोड़ दे तो वदीअत का मुआहदा बाक़ी नहीं रहेगा, दोनों को मुआहदा तोड़ देने का हर वक़्त इख़्तियार है।

कुछ शरई इस्तिलाहें: वदीअत या अमानत रखने के अमल को 'ईदाअ' वदीअत रखने वाले को "मुवद्देअ या मुसतौदेअ" और जो अमानत रख ले उसे "अमीन या मुसतौदअ़" कहते हैं।

वदीअत रखने के तरीक़े: एक तरीक़ा यह है कि मुवद्देअ साफ़ तौर से किसी से कहे कि मेरा यह माल अमानत रख लीजिये और दूसरा हाँ कह दे, तो वह अमीन बन गया। दूसरा तरीक़ा यह है कि एक आदमी ने किसी की दुकान पर अपनी कोई चीज़ रख दी, दुकानदार ने रखते हुये देखा मगर कुछ बोला नहीं या एक शख़्स दूसरे शख़्स के पास प्लेटफ़ार्म पर या रेल और बस में अपना सामान रख कर यह कहते हुए चला गया कि ज़रा मेरा सामान देखते रहियेगा और दूसरा शख़्स कुछ बोला नहीं तो वह चीज़ उसकी अमानत में आ गई जिसकी देख रेख उस पर लाज़िम होगी, अगर उसने देख रेख छोड़ दी और चीज़ चोरी हो गई तो सुपुर्द करने वाला जुर्माना रखने का हक़ रखता है, हाँ अगर दुकानदार ने दुकान पर सामान

रखने से मना कर दिया था या "मेरा सामान देखते रहियेगा" के जवाब में उसी वक़्त यह कह दिया था कि 'मैं देख नहीं सकता' तो उस पर कोई ज़िम्मेदारी नहीं।

वदीअत के लिये शर्तें: 1. वही चीज़ अमानत के तौर पर रखी जा सकेगी जिस पर अमीन का क़ब्ज़ा हो सके, हवा के पंछी, तालाब की मछलियाँ या किसी दूसरे शख़्स के क़ब्ज़े में मौजूद चीज़ को अमानत में रखना सही नहीं है चाहे अमीन ख़ामोश हो जाये या क़बूल कर ले।

2. मुवद्देअ (सुपुर्द करने वाले) और अमीन दोनों का आक़िल (यानी समझदार) होना ज़रूरी है नासमझ बच्चे और पागल न कोई चीज़ अमानत रख सकते हैं न रखवा सकते हैं।

3. वदीअत की मुद्दत में अगर चीज़ से कोई फ़ायदा हासिल हो तो वह मुवद्देअ का होगा, जैसे जानवर वदीअत में रखा, अगर उसने बच्चा दिया या उसका ऊन काटा गया या दूध दिया तो यह सब मवद्देअ का होगा, अमीन अगर बग़ैर इजाज़त उनमें से कोई चीज़ इस्तेमाल करेगा तो ख़यानत का गुनहगार होगा और जुर्माना अदा करना पड़ेगा।

अमीन की ज़िम्मेदारियां: 1. अमानत की चीज़ की हिफ़ाज़त अपनी चीज़ की तरह करनी चाहिये।

2. यह हिफ़ाज़त या तो वह ख़ुद करे या अपने घर वालों से कराये जिनसे ख़ूनी या दाईमी (स्थाई) रिश्ता है और वह ख़यानत करने वाले भी नहीं हैं, घर में आने जाने वाले नौकर को भी हिफ़ाज़त का ज़िम्मेदार किया जा सकता है जबकि ख़यानत का डर न हो, अगर अमानत बरबाद हो जायेगी तो जुर्माना देना होगा।

3. अमीन अगर अमानत को किसी ग़ैर शख़्स के पास हिफ़ाज़त के लिये रख दे तो ऐसा करना दो सूरतों में जाइज़ है –

(1) अमीन ने मुवद्देअ से दूसरे शख़्स की हिफ़ाज़त में देने की इजाज़त ले ली हो या (2) वह ऐसा आदमी हो जिसके यहाँ ख़ुद अपनी चीज़ें रख दिया करता हो, इन दो सूरतों के अलावा अगर किसी दूसरे के पास चीज़ रखी और वह बरबाद हो गई, तो पहले अमीन को ही जुर्माना देना पड़ेगा जबकि उन दो सूरतों में जुर्माना नहीं देना पड़ेगा।

4. अमानत रखी हुई चीज़ को अमीन न अपने इस्तेमाल में ला सकता है और न उसे चीज़ में मिला सकता है, ऐसा करना उस वक़्त जाइज़ होगा, अगर मवद्देअ उस की इजाज़त दे दे, मिसाल के तौर पर अगर किसी ने 100 रूपये अमानत रखवाये तो अमीन पर लाज़िम है कि वापस करते वक़्त वही रूपये लौटा दे। अगर अमीन ने उस रूपये को इस ख़याल से ख़र्च कर दिया या तिजारत में लगा दिया कि जब वापसी का वक़्त आयेगा तो अपने रूपयों में से सौ रूपये दे देगा, तो यह अमानत में ख़यानत होगी। अमीन गुनहगार होगा। इसी तरह अगर कपड़ा ज़ेवर या जूता अमानत रखा तो उसका पहनना गुनाह है, अमानत रखवाई गई कुर्सी मेज़ पलंग या बरतन को इस्तेमाल करने का हक़ नहीं है लेकिन अगर मवद्देअ इजाज़त दे दे तो उनके इस्तेमाल में कोई हर्ज नहीं है।

5. जहाँ अमीन को अमानत सुपुर्द की गई हो उसकी वापसी उसी जगह होना ज़रूरी है मवद्देअ उसको दूसरी जगह के लिये मजबूर नहीं कर सकता। किसी ने कोई चीज़ अमानत में रखने के लिये अगर लखनऊ में दी है तो दिल्ली में उस को माँगने का हक़ नहीं है, हाँ अगर अमीन ने कह दिया हो कि मैं उसे दिल्ली में रखूंगा तो फिर लखनऊ में मांगने का हक़ नहीं है।

6. कुछ आदमियों को एक चीज़ का अमीन बनाना भी सही है, अगर सब ने इक़रार कर लिया तो सब उसके ज़िम्मेदार होंगे, और बारी-बारी या जिस तरह भी हो सके अमानत की हिफ़ाज़त करना होगी।

अमानत की देख भाल की मज़दूरी: अमीन को अगर चीज़ की देख भाल के लिये वक़्त या मेहनत ख़र्च करना पड़े तो क्या वह उसकी मज़दूरी ले सकता है? फुक़हा की राय में इख़्तिलाफ़ है क्योंकि कुछ इजाज़त नहीं देते और कुछ लोग शर्तों के साथ इजाज़त देते हैं, जैसे ऐसा माल जिसे चोरों से बचाने के लिये चौकीदार रखना पड़े या उसे रखने के लिये बड़ी जगह की ज़रूरत हो, इन हालतों में अमानत रखने वाला मज़दूरी ले सकता है। बड़े गोदामों कोल्ड स्टोरेज़ में माल रखना आम है, इस लिये माल की हिफ़ाज़त की मज़दूरी देना भी ज़रूरी है और शरीअत के एतबार से सही है। मुजल्लतुल-अहकाम की यह दफ़ा इस राए की हिमायत करती है –

> अनुवादः अगर किसी ने अपना माल किसी के पास अमानत के तौर पर रखा और उस अमानत की देख भाल की उजरत भी अदा की ऐसी हालत में अगर वह माल किसी ऐसे सबब से बरबाद हो गया जिससे बचाना मुम्किन था जैसे चोरी हो गया तो उसको तावान देना पड़ेगा।

बैंक और डाकख़ाने में अमानत रखना: आज कल बैंक और डाकख़ाने में रूपया, ज़ेवर और दूसरी क़ीमती चीज़ें अमानत रखने का रिवाज है, ऐसा करना जाइज़ है मगर ख़ुद उससे सूद ले कर रूपया वग़ैरा जमा करना हराम है जिसका बयान पहले किया जा चुका है।

अमानत के माल से तिजारत: हनफ़ी फुक़हा की वज़ाहत इस बारे में नहीं मिली लेकिन सहाबा (र.त.अ.) के ज़माने में ऐसी मिसालें मिलती हैं जिनसे पता चलता है कि वे अमानत के रूपये से तिजारत करते थे। हज़रत उमर यतीमों के वालियों को उनके माल से तिजारत करने को इस लिये कहा करते थे कि ज़कात देते-देते उनका माल ख़त्म न हो जाये। हिदाया में है कि "क़ाज़ी को चाहिये कि वह यतीमों के माल को क़र्ज़ में लगा दिया करे ताकि वह बरबाद होने से बच जाये", इमाम अबू हनीफ़ा (रह०) अमानत के रूपये से तिजारत किया करते थे।

इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि मवद्देअ की इजाज़त के बग़ैर अमानत का रूपया तिजारत में लगाना सही नहीं है इजाज़त होनी चाहिये, इस सुरत में रूपया अमीन के हाथ में अमानत तो होगा ही मगर उस की एक हैसियत मुज़ारबत की भी हो जायेगी और उस रूपये से तिजारत करने में जो नफ़ा हासिल होगा उसमें मवद्देअ शरीक समझा जायेगा, अगर किसी यतीम का वली है तो उसको भी चाहिये कि वह सारा नफ़ा खुद न समेट ले बल्कि उस में यतीम का हिस्सा भी लगाये।

जुर्माने के वाजिब होने या न होने की सूरतें: अमानत बरबाद हो जाने में अगर अमीन की बेख़बरी (ग़फ़लत) या सुस्ती का दख़ल न हो तो अमीन पर बरबाद होने की ज़िम्मेदारी नहीं है, लेकिन उसने अगर हिफ़ाज़त में सुस्ती की या मवद्देअ के कहने के ख़िलाफ़ क़दम उठाया या मवद्देअ की इजाज़त के बग़ैर इस्तेमाल कर लिया तो इन तमाम सूरतों में उसको जुर्माना देना पड़ेगा, इसी तरह जब उसने अमानत को रखने की मज़दूरी ले ली तो अब उस पर जुर्माना वाजिब हो गया, जुर्माना वाजिब होने और न होने की कुछ सूरतें लिखी जा रही हैं –

1. अमानत के रूपये या चीज़ को इस्तेमाल किया, फिर वह चीज़ ख़राब हो गई या टूट गई या रूपया चोरी हो गया तो जुर्माना देना पड़ेगा क्योंकि इस्तेमाल करने के नतीजे में जो कमी भी आयेगी उसका जुर्माना देना ही पड़ेगा। हाँ अगर इत्तिफ़ाक़ से अनजाने में इस्तेमाल कर लिया लेकिन फिर शर्मिन्दगी हुई और उसको हिफ़ाज़त से रख लिया, फिर नुक़सान हुआ तो उस पर जुर्माना नहीं होगा क्योंकि न नाइंसाफ़ी हुई न कमी।

2. जो चीज़ बक्से या तिजोरी में रखने की है उसे बेएहतियाती से बाहर रख दिया और वह खो गई या ख़राब हो गई तो जुर्माना देना होगा लेकिन अगर घर में कोई सुरक्षित जगह नहीं है और अपनी

क़ीमती चीजें भी ऐसे ही रहती हैं तो फिर नुक़सान की ज़िम्मेदारी नहीं होगी।

3. अगर ग़लती से ताला खुला रह गया और इस वजह से अमानत का माल बक्से के अन्दर से चोरी हो गया या उसको चूहे ने काट दिया या कोई और नुक़सान पहुंच गया तो सब सूरतों में जुर्माना देना पड़ेगा।

4. लेकिन अगर ख़रीदार दुकानदार की इजाज़त से शीशे का गिलास उठा कर देखे और उस बीच वह टूट जाये तो उसको जुर्माना नहीं देना पड़ेगा लेकिन अगर बग़ैर इजाज़त कोई चीज़ उठा कर देखेगा और वह टूट गई या ख़राब हो गई तो जुर्माना देना पड़ेगा।

5. अगर मुवद्देअ ने ऐसी शर्त लगाई जिसका पूरा करना मुम्किन था लेकिन अमीन ने उसके ख़िलाफ़ किया तो जुर्माना देना होगा, हाँ अगर उस शर्त को पूरा करना उसके लिये मुम्किन न हुआ तो फिर जुर्माना नहीं देना पड़ेगा, जैसे उसने कहा कि तुम्हारे अलावा घर का कोई दूसरा आदमी अमानत की देख भाल न करे तो यह शर्त सही नहीं है क्योंकि यह मुम्किन ही नहीं है कि एक ही शख़्स हर वक़्त चीज़ की देख भाल करता रहे।

6. अचानक कोई दुर्घटना हो जाने की वजह से अगर अमानत की चीज़ बरबाद हो जाये तो अमीन पर कोई ज़िम्मेदारी नहीं है जैसे घर में आग लग गई, डाका पड़ गया या बाढ़ में मकान गिर गया।

7. मुवद्देअ को यह शर्त लगाने का हक़ है कि मेरी अमानत अपने घर वालों के अलावा किसी दूसरे के पास न रखी जाये, इस सूरत में अगर ख़िलाफ़वर्ज़ी की और नुक़सान हो गया तो उसकी ज़िम्मेदारी अमीन पर होगी लेकिन अगर अचानक कोई आफ़त आने की वजह से दूसरी जगह अमानत ले कर चला गया ताकि वह सुरक्षित रहे और फिर बरबाद हो गई तो उस पर जुर्माना नहीं है।

वदीअत की वापसी का इख़्तियार: जैसा कि ऊपर ज़िक्र किया जा चुका, अमीन और मवद्देअ दोनो में से हर एक को हर वक़्त यह इख़्तियार है कि अमानत का मुआहदा जब चाहें तोड़ दें, इसी तरह जब अमानत की मुद्दत ख़त्म हो तो मुआहदा ख़ुद बख़ुद टूट जायेगा दोनों सूरतों में अमीन को अमानत तुरन्त मवद्देअ के हवाले कर देना चाहिये।

दोनों में से अगर किसी की मृत्यु हो जाये, इस सूरत में भी मुआहदा टूट जायेगा, फिर मुवद्देअ के वुरसा को अमानत वापस ले लेना या अमीन के वुरसा को वापस कर देना चाहिये, अगर उन्हें फिर अमानत रखना है तो दूसरा मुआहदा करना होगा।

वदीअत की वापसी से इन्कार: मुवद्देअ किसी वक़्त अपनी अमानत वापस माँगे या अमानत रखने की मुद्दत ख़त्म हो जाने पर उसको वापस माँगे तो तुरन्त वापस कर देना चाहिये लेकिन अगर उसने कहा "कल ले लेना" और कल तक वह चीज़ बरबाद हो गई तो उसकी दो सूरतें हैं, अगर मवद्देअ ख़ुशी से वापस चला गया था यानी एक दिन के लिये और उसको अमीन बना कर लौट गया था तो चीज़ के बरबाद हो जाने पर जुर्माना नहीं है, लेकिन दूसरी सूरत में अगर मवद्देअ अमीन के टालने की वजह से नाराज़ हो कर अमानत को नाख़ुशी से उसके पास छोड़ कर लौट गया था तो गोया अमानत की ज़िम्मेदारी से हटने के बाद भी अमीन ने अमानत को क़ब्ज़े में रखा जिसकी उसे इजाज़त न थी तो उसे जुर्माना देना पड़ेगा।

अगर मुवद्देअ ने किसी दूसरे आदमी को भेजा कि फ़लां अमानत फ़लां शख़्स से ले आओ तो अमीन को हक़ है कि वह उसे दे या न दे, देने की सूरत में अगर वह दूसरा आदमी ख़यानत कर जाये तो ज़िम्मेदारी अमीन पर होगी।

अमानत रखते और लेते वक़्त गवाह की ज़रूरत: बेहतर यह है कि अमानत देते और लेते वक़्त दो आदमियों को गवाह बना लिया जाये, ऐसे मौक़ों पर गवाह बनाने की ताकीद क़ुरआन में आई है,

चुनाचे नासमझों और यतीमों के माल की हवालगी के वक़्त यह हुक्म दिया गया है :-

فَإِذَا دَفَعْتُمْ إِلَيْهِمْ أَمْوَالَهُمْ فَأَشْهِدُوا عَلَيْهِمْ ط (نساء-٦)

"फ़इज़ा दफ़अतुम इलैहिम अमवालहुम फ़अशिहदू अलैहिम" (निसा: 6)

अनुवाद: यानी जब उनका माल उनके हवाले करो तो उन पर गवाह बना लो।

तहरीर: अगर मरने वाले ने कोई लिखी हुई चीज़ या बहीखाता ऐसा छोड़ा जिसमें लिखा है कि फ़लाँ शख़्स का इतना रूपया या फ़लाँ चीज़ मेरे यहाँ अमानत है तो उसके वुरसा को तहक़ीक़ के बाद वह माल या चीज़ वापस कर देना चाहिये, अगर वुरसा को ख़ुद जानकारी हो तो तहक़ीक़ करना ज़रूरी नहीं है।

तावान (जुर्माना) अदा करना: अमीन पर जुर्माना वाजिब होने की सूरत में इन बातों का ख़याल रखना चाहिये –

अगर अमानत नक़द नहीं बल्कि कोई जिन्स है जैसे घड़ी, बरतन, मेज़, कुर्सी वग़ैरा तो उसी तरह की चीज़ जुर्माने में अदा करना होगी, अगर नक़द रक़म या सोना, चाँदी या उनसे बने हुए ज़ेवर हों तो उतनी ही नक़द रक़म या उतनी ही क़ीमत का ज़ेवर या उसकी क़ीमत देना होगी, इसी तरह अगर जिन्स में कोई ऐसी चीज़ है जिसका मिलना मुश्किल है तो फिर क़ीमत भी दी जा सकती है जैसे वेसटर्न घड़ी अमानत थी और वह खो गई तो वैसी ही घड़ी मंगा कर देना चाहिये, अगर वह बाज़ार में न मिले तो फिर उसकी क़ीमत भी दी जा सकती है, क़ीमत वही दी जायेगी जो जुर्माना वाजिब होने के दिन थी, चाहे वह देते वक़्त सस्ती हो जाये या महंगी।

आरियत

कम लोग ऐसे हैं जिनको ज़िन्दगी की ज़रूरत की हर चीज़ हर वक्त हासिल हो, बहुत से लोग ऐसे मिलेंगे जिन्हें चीज़ें वक्ती तौरपर दूसरों से मांगना पड़ती हैं, इस मांगने को शरीअत में आरियत कहते हैं।

जिस तरह क़फ़ालत करना, क़र्ज़ देना, अमानत रखना, इस्लामी समाज का अख़लाक़ी फ़र्ज़ है, उसी तरह अगर कोई ज़रूरतमंद वक्ती ज़रूरत पूरी करने के लिये कोई चीज़ माँगे तो समाज के लोगों का अख़लाक़ी फ़र्ज़ है कि वह चीज़ बग़ैर किसी बहाने और बदले के दे दें (अगरचे क़ानूनी तौर पर किसी को आरियत देने पर मजबूर नहीं किया जा सकता) मामूली और रोज़ाना इस्तेमाल की चीज़ तो बिला झिझक दे देना चाहिये। क़ुरआन ने उन लोगों की मज़म्मत (निंदा) की है जो माऊन (मामूली चीज़) को देने में बख़ीली करते हैं चुनाचे एक सूरत का नाम ही अल माऊन है। इस सूरत में जिन बातों पर धमकी दी गई है, उनमें से एक यह है –

فَوَيْلٌ لِّلْمُصَلِّيْنَ. اَلَّذِيْنَ هُمْ عَنْ صَلَاتِهِمْ سَاهُوْنَ. اَلَّذِيْنَ هُمْ
يُرَآؤُوْنَ. وَيَمْنَعُوْنَ الْمَاعُوْنَ. (الماعون آیت ۴ تا ۷)

"फ़वैलुल लिलमुसल्लीन, अल्लज़ीनहुम अन सलातिहिम साहून, अल्लज़ीनहुम युराऊन, व यमनऊनल माऊन"।

अनुवाद: ख़राबी हो उन लोगों की जो अपनी नमाज़ों से बेख़बरी करते हैं, ये लोग सिर्फ़ दिखाने के लिये नमाज़ पढ़ते हैं, और रोज़ाना के इस्तेमाल में आने वाली मामूली चीज़ों के देने में झिझकते हैं।

मक़सद यह है कि ऐसी दिखावे की नमाज़ से क्या फ़ायदा

जिससे न तो दिल में ख़ालिक़ की मुहब्बत पैदा हो और न मख़लूक़ (मानवजाति) की, जिसको ख़ालिक़ से मुहब्बत होगी वह उसकी मख़लूक़ से भी मुहब्बत करेगा, उस मुहब्बत की छोटी सी माँग यह है कि वह उसकी मख़लूक़ की ज़रूरत बिला झिझक पूरी कर दे। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने और आपके सहाबा (र.त.अ.) ने चीज़ मांग कर ली भी है और दी भी है।

माऊन: माऊन में हर वह चीज़ दाख़िल है जिसके देने में कोई बड़ा नुक़सान या हर्ज न हो जैसे किसी के यहां मेहमान आ गये आप से चारपाई या बिस्तर या खाना खिलाने के लिये बरतन मांगे, इसी तरह नमक दियासलाई, छुरी या साबुन, पढ़ने के लिये किताब, पानी निकालने के लिये रस्सी अगर मांगी तो बिला झिझक दे देना चाहिये। सहाबा किराम (र.त.अ.) जिनकी ज़िन्दगी बहुत सादी थी उनका तरीक़ा यही था उनके बीच माऊन में जो चीज़ें ली या दी जाती थीं उनमें सूई धागा, डोल रस्सी वग़ैरा सब शामिल थे।

आरियत की परिभाषा: किसी को अपनी किसी चीज़ से फ़ायदा उठाने की इजाज़त बग़ैर किसी बदले के दे देना शरीअत में आरियत कहलाता है, इस काम को इआरा, आरियत माँगने को इस्तिआरा, आरियत देने वाले को मुईर, आरियत लेने वाले को मुसतईर और जो चीज़ आरियत ली जाये उसे मुसतआर कहते हैं।

आरियत का हुक्म: 1. पड़ोसी या दूसरे किसी आदमी से कहा गया कि आप दो दिन के लिये मुझे एक पलंग या कुर्सी दे दीजिये और उसने वह चीज़ दे दी तो यह आरियत होगी।

2. यह मुसतआर चीज़ जब तक मुसतईर के यहाँ रहेगी वह अमानत बेज़मानत होगी यानी उसकी हिफ़ाज़त मुसतईर पर उसी तरह लाज़िम होगी जिस तरह अमानत की, लेकिन अगर इत्तिफ़ाक़ से टूट फूट गई तो उस पर जुर्माना लागू न होगा, यह मसलक इमाम अबू हनीफ़ा (रह०) का है, इमाम मालिक (रह०) के नज़दीक अगर ऐसी

चीज़ें हैं जिनका नुक़सान हर शख़्स देख सकता है जैसे जानवर और बड़ी-बड़ी चीज़ें तो मुसतईर पर ज़मानत होगी, इमाम शाफ़ई (रह०) की राय में क़ब्ज़े के बाद मुसतआर चीज़ में किसी भी तरह का नुक़सान होगा तो मुसतईर ज़िम्मेदार क़रार दिया जायेगा चाहे चीज़ छोटी हो या बड़ी, क्योंकि हदीस है - "आरियहू मज़मूनतुन"।

3. इमाम अबू हनीफ़ा (रह०) के मसलक के मुताबिक़ अगर जान बूझ कर चीज़ को ख़राब कर दिया या तोड़ दिया या ग़लत तरीक़े से इस्तेमाल किया और वह चीज़ ख़राब हो गई तो मुसतईर को जुर्माना देना पड़ेगा, मिसाल के तौर पर मुसतआर ली गई चारपाई पर इतने ज़्यादा आदमी बिठा दिये कि वह टूट गई। मुसतआर साइकल को इतने ख़राब रास्ते पर चलाया कि टायर फट गया, मुसतआर चीनी की प्लेट छोटे बच्चे के हाथ में दे दी और वह टूट गई फ़र्श या दरी पर दिया सलाई की जलती हुई तीली या सिगरेट का जलता हुआ टुकड़ा डाल दिया और फ़र्श जल गया तो उसका जुर्माना नुक़सान के बराबर देना पड़ेगा लेकिन अगर इत्तिफ़ाक़ से फ़र्श पर उगालदान टूट गया या गिलास हाथ से इत्तिफ़ाक़ से या पैर फिसल जाने से गिर पड़ा और टूट गया, ऐसी सूरत में जुर्माना नहीं है, यानी ग़लत इस्तेमाल से या जान बुझ कर जो चीज़ ख़राब की जायेगी तो उसका जुर्माना लिया जायेगा।

4. जितने दिन या वक़्त के लिये आरियत ली है उस के बाद तुरन्त वापस कर देना चाहिये, अगर देर की और वह चीज़ खो गई या टूट फूट गई तो नुक़सान की क़ीमत देना होगी।

5. मुसतआर चीज़ को अपने ही इस्तेमाल में लाना चाहिये मालिक की इजाज़त के बग़ैर दूसरों को न देना चाहिये, अगर मालिक की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ किसी दूसरे को दी तो यह गुनाह भी है और नुक़सान हो जाने की सूरत में, बदला भी देना पड़ेगा।

6. अगर मुईर ने अपने तौर पर कोई पाबन्दी न लगाई हो कि आरियत दी गई चीज़ को किस वक़्त तक, किस जगह पर और किस

तरीक़े पर इस्तेमाल किया जाये तो मुसतईर को इख़्तियार होगा कि वह जिस वक़्त तक चाहे जिस जगह चाहे और जिस तरह चाहे पूरी एहतियात के साथ इस्तेमाल करे, अब अगर इत्तिफ़ाक़ से कोई नुक़सान उस चीज़ को हो जाये तो मुसतईर से उसका जुर्माना नहीं लिया जायेगा लेकिन अगर बेएहतियाती से या जिस तरह वह चीज़ आम तौर पर इस्तेमाल की जाती है उसके ख़िलाफ़ इस्तेमाल करने से नुक़सान पहुंचा तो इजाज़त के बावजूद जुर्माना देना पड़ेगा जैसे साइकल या मोटर आरियत ली और उसे बेएहतियाती से चलाया कि वह टकरा गई और नुक़सान हो गया या किसी दूसरे को चोट लग गई, या कोई माल नुक़सान पहुंच गया तो नुक़सान का जुर्माना मुसतईर को देना होगा, या चादर को पलंग पर बिछाने के बजाये दस्तरख़्वान के तौर पर इस्तेमाल किया और उस पर ऐसा धब्बा लगा कि उस की क़ीमत घट गई तो उस की ज़िम्मेदारी मुसतईर पर होगी और जुर्माना देना पड़ेगा।

इसी तरह मुसतआर चीज़ किसी दूसरे को इस्तेमाल करने को देना, अगर मुईर ने उससे मना न किया हो तो ऐसी चीज़ें दे देने में हर्ज नहीं है जिन्हें अगर दूसरे इस्तेमाल करें तो चीज़ों में कोई फ़र्क़ न आ सके जैसे मकान, बरतन, गिलास, चमचे, तख़्त वग़ैरा, लेकिन ऐसी चीज़ जिस में दूसरे के इस्तेमाल से फ़र्क़ आ सकता हो, देना जाइज़ नहीं, जैसे घड़ी, क़लम, मोटर, साइकल या कोई भी सवारी या कपड़ा, जूता, छतरी वग़ैरा ये चीज़ें दूसरों के पास जा कर ख़राब हो सकती हैं इस लिये न देना चाहिये, बल्कि ख़ुद ही इस्तेमाल करना चाहिये, अगर देने के बाद ख़राब हो गई या गुम हो गई तो उसका जुर्माना देना पड़ेगा।

7. मुईर की हिदायत के ख़िलाफ़ इस्तेमाल करेगा तो मुसतईर को नुक़सान का जुर्माना देना पड़ेगा।

8. कभी औरत से ऐसी चीज़ मुसतआर माँगी जो उसके शौहर (पति) की है और औरत ने शौहर से पूछे बग़ैर दे दी तो अगर वह

ऐसी चीज़ है जो आम तौर से औरत के क़ब्ज़े ही में रहती है जैसे घी, तेल, नमक, शकर, बरतन, ज़ेवर या ग़ल्ला वग़ैरा और वह दी हुई चीज़ इत्तिफ़ाक़ से खो गई तो न मुसतईर पर और न औरत पर जुर्माना डाला जायेगा, लेकिन अगर ऐसी चीज़ जिस का औरत से संबंध नहीं होता जैसे जानवर मर्दाना मकान फनीचर या सवारी की चीज़ तो उनके खो जाने की सूरत में शौहर यानी मालिक को इख़्तियार होगा कि वह जुर्माना ले मुसतईर से या औरत से।

मुईर व मुसतईर के लिये ज़रूरी हिदायातः अकसर बातों का ज़िक्र हो चुका है। हिदायत के बहस में उनको दोबारा ज़िक्र किया जाता है –

1. मुईर जब चाहे अपनी दी हुई चीज़ वापस ले सकता है, मुसतईर को बग़ैर किसी सबब (बहाने) के वापस कर देना चाहिये अगर किसी सबब से वापस नहीं किया और वह चीज़ खो गई तो मुसतईर को जुर्माना देना पड़ेगा।

2. मुईर ने 2 दिन में चीज़ वापस करने को कहा लेकिन मुसतईर ने कहा कि 4 दिन में वापस करूँगा, मुईर ख़ामोश हो गया तो यह रज़ामंदी की दलील नहीं है, 2 ही दिन में वापस करना चाहिये।

3. मुईर या मुसतईर की मौत आरियत का मुआमला ख़त्म समझा जायेगा।

4. मुईर और मुसतईर का आक़िल और समझदार होना ज़रूरी है, नासमझ बच्चों या पागलों से आरियत लेना या उनको देना सही नहीं है।

5. मुसतआर चीज़ पर मुसतईर का क़ब्ज़ा होना ज़रूरी है।

6. कोई मुक़र्रर चीज़ ही मुसतआर दी जा सकती है, कुछ साइकलें एक जगह हों तो यह न कहे कि उनमें से एक ले लो बल्कि तै कर के कहे कि फ़लां साइकल ले लो या इजाज़त दे कि जो चाहो ले लो।

7. मुईर मुसतईर से चीज़ की मज़दूरी या उसके बदले में और कोई चीज़ नहीं ले सकता।

8. आरियत लेने के वक़्त से वापसी के वक़्त तक अगर कोई ख़र्च मुसतआर चीज़ पर करना पड़े तो मुसतईर को बर्दाश्त करना होगा जैसे साइकल में हवा भरवाने या पंक्चर ठीक कराने का ख़र्च, जानवर के चारे का ख़र्च, मकान की मरम्मत का ख़र्च।

9. मुसतआर को न तो मुसतईर बेच सकता है न गिरवी रख सकता है, न किराये पर दे सकता है, हां किसी दूसरे के पास अमानत रख सकता है, अब अगर चीज़ इत्तिफ़ाक़ से खो जाये तो जुर्माना लागू न होगा लेकिन अगर मुसतईर की या उसके अमीन की ग़लती से खो गई तो जुर्माना देना होगा।

10. आरियत की मुद्दत ख़त्म होते ही चीज़ वापस कर देना चाहिये, अगर मुद्दत गुज़रने के बाद नुक़सान हुआ तो मुसतईर पर ज़िम्मेदारी है।

11. आरियत की चीज़ मुसतईर को ख़ुद अपने या भरोसेमंद आदमी के ज़रिये वापस करना चाहिये। अगर किसी ग़ैर आदमी के हाथ भेजी और खो गई या ख़राब हो गई तो मुसतईर को जुर्माना देना होगा।

12. आरियत की चीज़ ले जाने और वापस करनें में अगर उठाने और लाने ले जाने में ख़र्च हुआ तो मुसतईर को बर्दाश्त करना होगा।

13. अगर बाग़ लगाने या मकान बनाने के लिये कोई ज़मीन आरियत के तौर पर ली तो मुईर जब चाहे ख़ाली करा सकता है, लेकिन अगर कोई मुद्दत मुक़र्रर कर दी है, तब भी ख़ाली कराने का इख़्तियार है मगर वक़्त से पहले ख़ाली कराने से जो नुक़सान मुसतईर का होगा उसका बदला मुईर अदा करेगा, जैसे बाग़ लगाने के लिये ज़मीन दस वर्ष के लिये दी लेकिन मुईर को पाँच ही वर्ष में ज़मीन ख़ाली कराने की ज़रूरत पेश आ गई तो मुसतईर को अपने पेड़ काट

कर ज़मीन ख़ाली कर देना चाहिये, अब रहा नुक़सान का बदला तो अगर दस वर्ष बाग़ रहता तो पेड़ों की क़ीमत पाँच सौ रूपये होती और जिस वक़्त ख़ाली कर रहा है तो पेड़ों की क़ीमत दो सौ रूपये है, इस तरह तीन सौ रूपये नुक़सान के मुईर मुसतईर को देगा, अगर मुईर पेड़ भी लेना चाहे और मुसतईर राज़ी हो तो पेड़ों की जो क़ीमत हो वह पूरी अदा करना होगी।

14. अगर किसी को खेत जोतने के लिये दिया तो मुद्दत मुक़र्रर हो या न हो जब तक फ़सल पक न जाये ज़मीन को ख़ाली नहीं करा सकता।

हिबा और हदिया

सदक़ा, हदिया और हिबा ग़रीबों और ज़रूरतमंदों की मदद के तरीक़े हैं जिनकी तरफ़ कुरआन व सुन्नत में उभारा गया है, सदक़े का बयान ज़कात की बहस में आ चुका है, हदिये और अतिये के बारे में नबी करीम सल्लल्लाहु अलहि वसल्लम का फ़रमान है, "आपस में हदिये और अतिये भेजा करो" इससे मुहब्बत बढ़ती और दिलों का गुबार दूर होता है (तिर्मिज़ी)। आप सल्लल्लाहु अलैहि वाल्लम ने फ़रमाया कि हदिया चाहे कितना ही मामूली क्यों न हो उसको कुबूल कर लेना चाहिये इसी तरह मामूली अतिया देने में भी शर्म न करना चाहिये, आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि "अगर कोई मुझे गोश्त का एक टुकड़ा भी भेजे तो मैं ख़ुशी के साथ कुबूल करूंगा।

(मुसनद अहमद व तिर्मिज़ी)

हदिये का बदला: एक शख़्स जब किसी को कोई चीज़ हदिये के तौर पर भेजे या हिबा करे या सदक़ा दे तो ज़बान से कोई बात ऐसी न कहना चाहिये, न ऐसा तरीक़ा इख़्तियार करना चाहिये जिससे एहसान जताना या उसका इज़हार महसूस हो, कुरआन और हदीस में इसकी मज़म्मत (निंदा) की गई है, कुरआन में है कि "एहसान धरने वाले या दिखावा करने वाले की मिसाल ऐसी है जैसे चट्टान जिस पर मिट्टी जमी हो और हल्की सी बारिश से धुल जाये ऐसा शख़्स न तो ख़ुदा पर ईमान रखता है न आख़िरत पर, हदीस में कहा गया है कि क़यामत के दिन जो लोग रहमते इलाही के साये से दूर होंगे उनमें एहसान जताने वाला भी शामिल है, यानी सदक़ा और हदिया देते वक़्त दिखावा व नुमाइश या एहसान करने का इज़हार बिल्कुल न होना चाहिये, हाँ जिसको सदक़ा या हदिया दिया गया अगर वह भी अपनी हैसियत और ताक़त के मुताबिक़ उसके बदले कोई तोहफ़ा या

हदिया दे तो अच्छा है लेकिन अगर वह उस की ताक़त नहीं रखता तो कम से कम उसकी तारीफ़ और उसका शुक्रिया तो अदा करना चाहिये, अगर यह भी नहीं किया तो एहसानशनासी और नेमत का इन्कार किया। (अबू दाऊद व तिर्मिज़ी)

ग़ैर-मुस्लिम को हदिया देना और लेना: जिस तरह मुआमलात में मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम का फ़र्क़ नहीं है जब तक कि हलाल व हराम की सीमा से आगे न बढ़ें, इसी तरह हदिया देने और लेने में भी मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम बराबर हैं। नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने ग़ैर-मुस्लिम का हदिया कुबूल फ़रमाया है कुरआन में है -

لَا يَنْهٰكُمُ اللّٰهُ عَنِ الَّذِيْنَ لَمْ يُقَاتِلُوْكُمْ فِي الدِّيْنِ وَلَمْ يُخْرِجُوْكُمْ مِنْ دِيَارِكُمْ اَنْ تَبَرُّوْهُمْ وَتُقْسِطُوْٓا اِلَيْهِمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُقْسِطِيْنَ. (ممتحنة آيت ـ ٨)

"ला यनहाकुमुल्लाहु अनिल्लज़ीना लम युक़ातिलूकुम फ़िद्दीनि वलम युख़रिजूकुम मिन दियारिकुम अन तबररूहुम व तुक़सितू इलैहिम, इन्नल्लाहा युहिब्बुल मुक़सितीन"।

(सूरह मुमतहिना: 8)

अनुवाद: अल्लाह तआला तुमको उन लोगों के साथ अच्छा व्यवहार और इन्साफ़ करने से नहीं रोकता जिन्हों ने तुमसे दीन के बारे में न तो लड़ाई की, न तुमको घर से निकाला, अल्लाह इन्साफ़ करने वालों को पसन्द करता है।

हिबा, हदिया और आरियत में फ़र्क़: आरियत में दी गई कोई चीज़ नक़्त हो या जिन्स उसकी वापसी उन चीज़ों के साथ होती है जिसकी शर्त लगाई गई हो, मुसतईर एक मुक़र्ररह मुद्दत के लिये उसका अमीन होता है लेकिन हदिया के तौर पर, हिबा या सदक़ा के तौर पर जो चीज़ दी जाती है, उसे वापस लेने का हक़ नहीं होता।

उसकी मिलकियत मुंतकि़ल (स्थानांतरित) जो जाती है, अब उसका वापस लेना गुनाह है। नबी करीम (स.अ.व.) ने फ़रमाया है - "जो शख़्स हिबा कर के या हदिया या सदका़ दे कर वापस ले उसकी मिसाल उस कुत्ते की है जो खाने के बाद उल्टी कर के दोबारह उसको खाजाये", इसलिये आदमी को ख़ूब सोच समझ कर देना चाहिये कि न तो बाद में शर्मिन्दगी हो और न वापसी की ज़रूरत लेकिन अगर वाक़ई वापसी की ज़रूरत पेश ही आ जाये तो शरीअत में उसकी इजाज़त है यानी हिबा तोड़ा जा सकता है का़नूनी तफ़सील आगे बयान की जायेगी।

हिबा, हदिया और सदका़ में फ़र्क़: इस एतेबार से कि आदमी अपनी किसी चीज़ का मालिक दूसरे आदमी को हिबा, हदिया और सदका़ के ज़रिया बना देता है और फिर उसकी वापसी का इख़्तियार उसको नहीं रहता, यह हुक्म तीनों सूरतों में बराबर है, लेकिन हर एक में देने का जज़्बा अलग-अलग होता है इस लिये थोड़ा सा फ़र्क़ है लेकिन नतीजे के एतेबार से कोई फ़र्क़ नहीं है।

हदिया का परिचय: किसी की हिम्मत को बढ़ाने के लिये और मुहब्बत के जज़्बे से कोई चीज़ देना।

सदका़ का परिचय: किसी को सिर्फ़ सवाब के लिये कोई चीज़ देना।

हिबा का परिचय: बग़ैर किसी बदले के अपना कोई माल दुसरे के क़ब्ज़े में दे देना, डिक्शनरी में हिबा का अर्थ देना है।

सदका़ और हदिया हिबा ही की दो कि़स्में हैं, सदका़ में सिर्फ़ सवाब की नियत होती है और दूसरा कोई जज़्बा नहीं होता अगर सवाब की नियत न हो तो वह सदका़ नहीं कहलायेगा, इसका मतलब यह नहीं है कि हिबा और हदिया में कोई सवाब नहीं मिलता, हर नेकी का सवाब मिलता है हिबा और हदिया सिर्फ़ अल्लाह के लिये हो तो उनका भी सवाब मिलेगा।

हिबा की इस्तिलाहात: हिबा करने वाले को 'वाहिब' और जिसको हिबा किया जाये उसको 'मौहूब लहू' और जो चीज़ हिबा की जाये उसे 'मौहूब' कहते हैं।

हिबा के अरकान व शर्तें: 1. हिबा के लिये ईजाब व कुबूल और क़ब्ज़े का होना ज़रूरी है यानी वाहिब राज़ी खुशी के से कोई चीज़ दे और मौहूब खुशी से कुबूल करके उसे अपने क़ब्ज़े में ले ले तो हिबा हो गया और वह चीज़ वाहिब की मिलकियत के बजाये मौहूब की मिलकियत होगी।

2. ईजाब व कुबूल में हिबा का शब्द साफ़ तौर से कहना ज़रूरी नहीं है बल्कि जिस शब्द या जिस ढंग से भी दी हुई चीज़ लेने वाले की मिलकियत में हो जाती है वह ईजाब व कुबूल समझा जायेगा जैसे किसी ने कहा कि मैं अपनी यह किताब आपको हदिया करता हूं और आपने शुक्रिया अदा कर के ले ली तो किताब हिबा हो गई या आपने ख़ामोशी से ले ली तो भी वह आपकी मिलकियत में आ गई या आपने अपने किसी दोस्त से कोई चीज़ हिबा या हदिये के तौर पर मांगी और उसने खुशी के साथ दे दी तो वह चीज़ हिबा हो गई मगर जहां तक हो सके इस तरह मांगना नहीं चाहिये आरियत के तौर पर मांगने में कोई हर्ज नहीं है।

3. किसी ने कपड़ा ख़रीदा और बीवी से कहा कि इसमें से अपने लिये एक जोड़ा बनवा लो, या ज़ेवर बनवाया और बीवी से कहा इसे पहन लो, यह हिबा हो गया और चीज़ औरत के क़ब्ज़े में हो गई अब किसी नाराज़गी के वक़्त वापस ले लेना गुनाह है।

4. वाहिब का आक़िल व बालिग़ होना ज़रूरी है, कोई नाबालिग़ बच्चा अगर कोई चीज़ हिबा कर दे तो माँ बाप या उसके ज़िम्मेदार वापस ले सकते हैं।

5. हिबा में वाहिब की रज़ामंदी ज़रूरी है और रज़ामंदी के बग़ैर ज़बरदस्ती हिबा कराना और दबाव डाल कर या बार बार कह कर हदिया लेना सही नहीं बल्कि गुनाह है।

6. वाहिब ने किसी चीज़ को वाज़ेह शब्दों में हिबा किया जैसे वह कहे कि यह घड़ी मैं आपको देता हूँ आप इसे ले लीजिये अब मौहूब लहू उसी वक़्त ले ले या बाद में ले दोनों जाइज़ है, लेकिन अगर साफ़ शब्दों में नहीं कहा जैसे वह कहे कि मैं यह घड़ी आप को देना चाहता हूँ या दूंगा" यह नही कहा कि ले लीजिये तो अगर मौहूब लहू उसी वक़्त घड़ी क़ब्ज़े में ले ले तो वह उसकी हो गई, लेकिन अगर उस वक़्त न ले और फिर किसी वक़्त लेना चाहे तो सही नहीं होगा, जब तक दोबारा वाहिब से इजाज़त न ले ली गई हो।

7. ख़रीदार अपने माल पर क़ब्ज़ा करने से पहले उसको हिबा कर देने का हक़ रखता है।

8. हिबा या हदिया की हुई चीज़ को क़ब्ज़े में दे देना ज़रूरी है अगर वह चीज़ दूसरे के क़ब्ज़े में है तो वाहिब को उसके क़ब्ज़े से निकाल कर मौहूब लहू के हवाले करना चाहिये।

9. माल जिसके क़ब्ज़े में था उसी को वह हिबा कर दिया तो हिबा हो गया, वाहिब पर लाज़िम नहीं कि दोबारा क़ब्ज़ा दिलाए।

10. किसी ने अपना क़र्ज़ या मुतालबा हिबा कर दिया और मक़रूज़ या मदयून ने उसे क़ुबूल कर लिया तो अब मुतालबे का हक़ वाहिब को नहीं रहा।

11. मौहूब यानी जो चीज़ हिबा की गई उस पर क़ब्ज़े से पहले वाहिब या मौहूब लहू की मृत्यु हो जाये तो हिबा टूट जायेगा क्योंकि हिबा क़ब्ज़े के बग़ैर पूरा नहीं होता, यानी मौहूब लहू के क़ब्ज़े से पहले वह वाहिब ही के क़ब्ज़े में रहेगी और उसकी मौत के बाद वुरसा मालिक हो जायेंगे, इसी तरह मौहूब लहू अगर मर गया तो अब क़ब्ज़ा कौन करेगा।

12. नाबालिग़ बच्चे हिबा नहीं कर सकते, मगर उनको हिबा किया जा सकता है।

बच्चों को हिबाः अगर बाप दादा अपने लड़के या पोते को कोई चीज़ दें और कहें कि यह मैंने तुम को दी तो दे देने से वह चीज़ उसके क़ब्ज़े में हो गई, अब वापस लेना सही नहीं है। इसी तरह कोई भाई या बहन अपने छोटे भाई बहन को कोई चीज़ दे दे तो वह उसकी मिल्क हो गई जैसे उसका कपड़ा बनवाया, उस के लिये किताब और क़लम ख़रीदा तो यह चीज़ उसकी हो गई लेकिन अगर ख़ास बच्चे को नहीं दें या यह कह दिया कि सब लोग इस्तेमाल करें तो फिर वह किसी की मिल्क नहीं होगी।

13. छोटे नासमझ बच्चों को जो कुछ ईदी या इनआम के नाम से लोग दिया करते हैं तो उस का मक़सद उन के माँ बाप को देना होता है चूंकि छोटी रक़म होती है इस लिये बच्चों के बहाने से दी जाती है, तो ऐसी चीज़ों पर बच्चों के माँ बाप का अधिकार समझा जायेगा लेकिन अगर किसी ने वाज़ेह तौर पर यह कहा कि मैं इस बच्चे को दे रहा हूं तो अगर बच्चा समझदार है और उसने उसे ले लिया तो चीज़ उसकी मिल्क हो गई और अगर नासमझ है तो उस के बाप दादा या उसकी पालन पोशन करने वाले का क़ब्ज़ा काफ़ी है लेकिन उन्हें यह हक़ नहीं है कि उस चीज़ को अपने इस्तेमाल में लायें या उसे किसी दूसरे बच्चे को दें।

14. अगर अपनी औलाद को कोई चीज़ हिबा करना हो तो सब को बराबर देना चाहिये यानी लड़के और लड़कियों को बराबर दें यह मसलक तीनों इमामों इमाम अबू हनीफ़ा (रह०) इमाम मालिक (रह०) इमाम शाफ़ई (रह०) का है, हाँ इमाम अहमद बिन हम्बल (रह०) की राय में हिबा भी विरासत की तरह होना चाहिये, यानी लड़कियों का एक-एक और लड़कों के दो-दो हिस्से।

15. हिबा में मुद्दत मुक़र्रर करना सही नहीं एक साल या एक महीने के लिये हिबा करना ना जाइज़ है।

16. वाहिब अगर हिबा करते वक़्त किसी बदले या फ़ायदे की

शर्त लगा दे तो यह सही है, जैसे यह कहा कि यह मकान तुम्हें देता हूँ इस शर्त के साथ कि मैं भी इसमें रहूंगा, या इसके बदले में तुम मेरा फ़लां क़र्ज़ अदा कर दो या 'फ़ुलां ज़मीन इस शर्त पर हिबा करता हूं कि तुम मेरे खाने कपड़े के ज़िम्मेदार रहो' तो यह हिबा सही है। अब अगर वाहिब इस सशर्त हिबा को लौटाना चाहे तो उसका हक़ नहीं है जब तक वह शर्त पूरी होती रहे, हाँ अगर शर्त पूरी न हो तो लौटा सकता है।

17. हिबा की जाने वाली चीज़ का मौजूद होना ज़रूरी है यानी यह कहना जाइज़ नहीं कि "इस खेत में जो कुछ पैदा होगा वह हिबा करता हूँ" या "बाग़ में जो फल आयेंगे या इस जानवर से जो बच्चे पैदा होंगे उन्हें हिबा करता हूं"।

18. वाहिब जो चीज़ हिबा करे वह उसके क़ब्ज़े में होना ज़रूरी है, दूसरे की चीज़ किसी को दे देना नाजाइज़ है।

19. मौहूब यानी जो चीज़ हिबा की जाये उसकी तायीन (निर्धारण) ज़रूरी है, कुछ घड़ियां कुछ साइकलें या कुछ जानवर हैं उनमें से एक घड़ी या एक साइकल या एक जानवर हिबा करना हो तो उसे अलग कर के हिबा करना चाहिये कि यह चीज़ मैं तुमको हिबा करता हूं, यह कहना कि इनमें से एक ले लीजिये सही नहीं है, हां यह कहना कि इनमें से जो पसन्द हो ले लीजिये और मौहूब लहू ने उसी वक़्त पसन्द करके ले लिया तो हिबा सही होगा लेकिन अगर उस वक़्त नहीं लिया तो फिर इजाज़त के बग़ैर जाइज़ नहीं होगा।

हिबा और हदिये की वापसी: हिबा कर देने के बाद उस चीज़ का वापस लेना गुनाह है और ईमानदारी व अख़लाक़ के ख़िलाफ़ भी, लेकिन अगर मौहूब लहू ने अभी उस पर क़ब्ज़ा नहीं किया था कि वाहिब को उसी चीज़ की सख़्त ज़रूरत पड़ जाये और वह मौहूब लहू से कह दे कि आप इसको न लीजिये तो गोया वाहिब ने हिबा को लौटा लिया।

मगर क़ब्ज़े के बाद हिबा से वापसी की दो ही सूरतें हैं या तो मौहूब लहू खुशी से वापस कर दे या इस्लामी अदालत उस हिबा को तुड़वा दे इस शर्त पर कि कोई दूसरी क़ानूनी रूकावट मौजूद न हो।

किन सूरतों में हिबा की वापसी नहीं हो सकती: अगर ऐसे शख़्स को हिबा किया है जिससे ख़ूनी रिश्ता है और निकाह हराम है तो वापसी का हक़ नहीं है जैसे मां, बाप, फूफा, फूफी, चचा, भाई, बहन, भानजे, बेटे, पोते, नवासे, या बेटी, पोती, नवासी, दादा और दादी वग़ैरा, अब अगर किसी ने अपने रज़ाई भाई बहन (दूध शरीक) और सास ससुर को हिबा किया है तो अख़लाक़न वापस लेना सही नहीं है, मगर क़ानून वापस करा सकता है, क्योंकि उनसे निकाह तो हराम है मगर ख़ून का रिश्ता नहीं है।

2. अगर बीवी ने शौहर को या शौहर ने बीवी को कोई चीज़ हिबा की तो क़ब्ज़े के बाद फिर वापसी का हक़ नहीं है।

3. अगर हिबा की हुई चीज़ में मौहूब लहू ने ऐसी बढ़ोतरी कर दी जो उससे अलग नहीं की जा सकती जैसे ज़मीन हिबा की थी उस पर घर बनवा लिया या पेड़ लगा दिये, या जानवर हिबा किया था, उसको खिला पिला कर मोटा कर दिया, गेहूं दिये थे उन्हें पिसवा लिया तो यह तमाम बढ़ोतरी असल चीज़ से अलग नहीं की जा सकती, इसलिये वापसी का हक़ जाता रहा, लेकिन अगर ऐसी ज़्यादती है जो असल से अलग है तो असल चीज़ की वापसी हो सकती है और ज़्यादती मौहूब लहू की होगी, जैसे बकरी या गाय हिबा की थी उसने बच्चे दे दिये तो वाहिब अगर अपनी दी हुई चीज़ वापस लेना चाहे तो गाय या बकरी वापस लेगा बच्चे मौहूब लहू के होंगे।

4. अगर मौहूब लहू ने मौहूब को बेच दिया तो अब वापसी का सवाल नहीं किया जा कसता।

5. इसी तरह अगर हिबा की हुई चीज़ मौहूब लहू के पास खो गई तो भी वाहिब वापस नहीं माँग सकता।

6. अगर वाहिब या मौहूब लहू मर जाये तो किसी के वरसा न वापस ले सकते हैं न दे सकते हैं।

हदिये और सदक़े की वापसी: जो आदेश हिबा की वापसी के हैं वही सदक़े और हदिये के हैं।

ज़रूरी हिदायत: पहले यह बात कही जा चुकी है कि हिबा, हदिया या सदक़ा दे कर वापस लेना अख़लाक़ी तौर पर बुरा और गुनाह हैं। अगर जिसको दिया गया है वह ख़ुशी के साथ वापस कर दे तभी जाइज़ होगा लेकिन अगर मौहूब लहू राज़ी न हो तो किसी ग़ैर-क़ानूनी या ग़ैर अख़लाक़ी तरीक़े से वापस लेने की कोशिश करना दोहरे गुनाह का सबब होगा, एक गुनाह मौहूब लहू के राज़ी न होने का, दूसरे ग़लत तरीक़े पर वापसी की कोशिश का, लेकिन अगर किसी बड़े नुक़सान से बचने के लिये इस्लामी अदालत मुआहदे को तोड़ दे तो जाइज़ है।

इजारह

फ़िक़ह की किताबों में "किताबुल इजारह" के नाम से तीन क़िस्म की उजरतों (बदलों) का ज़िक्र और उनके मसाइल बयान किये गये हैं -

1. वह उजरत (बदला) जो किराये की सूरत में दी जाये या ली जाये।

2. वह उजरत जो पेशावर लोग जैसे सुनार, लुहार, दर्ज़ी, धोबी बढ़ई वग़ैरा को दी जाये।

3. वह उजरत जो नौकर या मज़दूर की हैसियत से किसी को दी जाये या किसी से ली जाये।

तीनों क़िस्म के मसाइल एक ही विषय से संबंधित हैं, लेकिन चूँकि उनमें थोड़ा फ़र्क़ है इस लिये हर क़िस्म की उजरतों को अलग-अलग बयान किया जा रहा है।

किराये पर लेना या देना: अपनी चीज़ को किराये पर देना या दूसरे आदमी की चीज़ को किराये पर लेना जाइज़ है।

1. ये दो बातें तै हो जाने के बाद कि उस चीज़ का किराया कितना होगा और वह कितने दिनों के लिये या किस काम के लिये किराये पर ली जा रही है किराया का मुआमला तै हो पायेगा। किसी सवारी को किराये पर लेते वक़्त यह भी बताना होगी कि सवार होने के लिये ली जा रही है या सामान ढोने के लिये और यह कि उसे कहाँ तक और कितने मील ले जाने के लिये इस्तेमाल किया जायेगा।

2. अगर किराया और मुद्दत वग़ैरा तै नहीं की तो मुआमला

किराये का नहीं हुआ आरियत का हुआ इस लिये आरियत की शर्तों के मुताबिक़ मुआमला करना चाहिये।

3. अगर किसी कमरे या मकान का किराया दस रूपये महीने के हिसाब से तै हुआ और मुद्दत नहीं तै की गई तो मुआमला सिर्फ़ एक महीने के लिये समझा जायेगा, दूसरे महीने फिर से मुआमला करना चाहिये और मालिक मकान एक महीने के किरायेदार से मकान ख़ाली करा सकता है और अगर मालिक मकान ने दूसरे महीने की पहली तारीख़ को कोई एतेराज़ नहीं किया तो दूसरे महीने भी उसी किराये पर रह सकता है यानी हर महीने मकान का मालिक किराये भी बढ़ा सकता है और उसे ख़ाली भी करा सकता है लेकिन अगर किरायेदार ने साल दो साल या उससे ज़्यादा मुद्दत मुक़र्रर कर के मकान किराये पर लिया है तो फिर उस मुद्दत तक मकान के मालिक को न तो किराया बढ़ाने का हक़ है न उसे निकालने का।

4. अगर मकान या दुकान किराये पर लेने के बाद उसे इस्तेमाल नहीं किया फिर भी क़ब्ज़े के दिन से किराया देना पड़ेगा और जितने दिन क़ब्ज़े में रखेगा उतने दिन का किराया देना होगा।

5. अगर मोटर, बस, साइकल या रिक्शा किराये पर ली तो उस पर उतने ही आदमी सवार हो सकते हैं जितने आम तौर पर सवार होते हैं जैसे रिक्शा पर दो आदमी, लेकिन अगर ख़ुद मालिक दो से ज़्यादा आदमियों को बिठा ले तो उसे हक़ है।

6. ऐसी चीज़ जिस में दो या कई लोगों का हिस्सा हो चाहे वह मकान हो या दुकान या कुछ और वह किराये पर नहीं दी जा सकती।

7. मकान की सजावट के लिये कोई चीज़ किराये पर लेना नाजाइज़ है, हाँ अगर किसी काम के लिये चीज़ किराये पर ली गई हो और उसी के साथ सजावट भी हो जाये तो कोई हर्ज नहीं है।

8. किताब किराये पर लेना या देना, इमाम अबू हनीफ़ा (रह०) के नज़दीक जाइज़ नहीं है, क्योंकि यह आम फ़ायदा उठाने की चीज़ है इस लिये इसे किराये पर लेना सही नहीं है, हिफ़ाज़त के ख़याल से सिर्फ़ ज़मानत ली जा सकती है, बाक़ी तीनों इमाम किराये पर देने और लेने की इजाज़त देते हैं, हालात के हिसाब से किसी एक राय पर अमल किया जा सकता है।

9. गाय भैंस या बकरी को इस लिये किराये पर देना कि उनका दूध किरायेदार इस्तेमाल करे, सही नहीं है इसी तरह पेड़ किराये पर देना कि जब फल आये तो किरायेदार खाये सही नहीं है। अधिया पर जानवर किराये पर देना कि जब बच्चे होंगे तो आधे-आधे बाँट लेंगे या अंडे बराबर बराबर बाँट लेंगे, ये सब सूरतें नाजाइज़ हैं क्योंकि वजूद में आने से पहले किसी चीज़ की न तो ख़रीद व फ़रोख़्त जाइज़ है और न किराये पर देना, हाँ गाय बकरी वग़ैरा चरवाई तै कर के उजरत पर दिया जा सकता है।

किराये का मुआमला ख़त्म कर देना: 1. किसी चीज़ को किराये पर लेने या देने का मुआमला मुआहदे से तै पाता है, इसलिये उसे बग़ैर किसी मजबूरी या बहाने के तोड़ना न चाहिये, जैसे किराये पर देने के बाद कोई दूसरा शख़्स ज़्यादा किराये पर लेने के लिये तैयार हो जाये तो असल किरायेदार को परेशान करने की कोशिश न करना चाहिये।

2. कहीं जाने के लिये किराये पर रिक्शा या मोटर मंगाई फिर इरादा बदल गया ऐसी सूरत में उसे वापस कर सकते हैं लेकिन अगर रिक्शे वाले का वक़्त बरबाद हुआ है या मोटर कई मील से चल कर आई है तो वक़्त की मज़दूरी और पेट्रोल की क़ीमत देना चाहिये।

3. किरायेदार या मालिक में से कोई मर जाये तो किराये का मुआमला ख़त्म हो जायेगा, वारिसों को नया मुआहदा करना होगा।

4. पेशगी किराया इस शर्त पर लेना जाइज़ नहीं कि अगर किराये पर न लिया तो वह पेशगी रकम ज़ब्त कर ली जाएगी यह मालिक की तरफ़ से ज़्यादती है, इस्लामी हुकूमत में यह भी जाइज़ नहीं होगा कि रेल का टिकेट ख़रीद लेने के बाद अगर उसकी वापसी की जाये तो उसकी क़ीमत कम लौटाई जाये।

किराये के कुछ ज़रूरी मसाइलः 1. किरायेदारी की मुद्दत ख़त्म होने के बाद मालिक को ख़ुद उस चीज़ को क़ब्ज़े में ले लेना चाहिये जो किराये पर दी थी, किरायेदार पर हवालगी की ज़िम्मेदारी नहीं है।

2. वापस लेते वक़्त जो कुछ उस पर ख़र्च होगा वह मालिक को देना होगा, इसके विपरीत किराये पर देते वक़्त ले जाने का ख़र्च किराये पर ले जाने वाले को देना होगा।

3. मकान या दुकान किराये पर ली लेकिन यह नहीं बताया कि उस में कौन रहेगा, तो यह जाइज़ है।

4. जो मकान या दुकान किराये पर देना तै हो जाये, उसे तुरन्त किरायेदार के हवाले कर देना चाहिये।

5. मकान या दुकान में ऐसा कोई काम न किया जायेगा जिस से उसमें ख़राबी या कमज़ोरी आने का डर हो जैसे अगर किरायेदार ने मकान में आटा पीसने की चक्की लगाई या दुकान में भट्टी लगाई दोनों कामों से मकान और दुकान के ख़राब और कमज़ोर होने का डर है, इस लिये ऐसे कामों के लिये दोबारा इजाज़त (आज्ञा) लेना ज़रूरी है, इसी तरह अगर मकान में जानवर रखना ज़रूरी हो तो अगर वहां आम रिवाज हो तो रखा जा सकता है, वरना इजाज़त लेना ज़रूरी होगा।

6. किराये के मकान को ठीक कराने रास्ते की आसानी वग़ैरा ऐसी बातें हैं जिसकी ज़िम्मेदारी मकान मालिक पर आती थी उन्हें

पूरा करना ज़रूरी है लेकिन अगर किरायेदार ने मकान को मरम्मत के लायक़ और बिगड़ी हुई हालत में पाया फिर भी वह उसमें रहने पर राज़ी हो गया तो वह मालिक को मरम्मत कराने के लिये मजबूर नहीं कर सकता लेकिन अगर किराये पर लेते वक़्त अच्छी हालत में था, अब ख़राब हो गया या मालिक ने किराये पर देते वक़्त कहा था कि मैं मरम्मत करा दूंगा तो दोनों सूरतों में उसे मरम्मत कराना होगी।

7. अगर किरायेदार मकान में अपनी आसानी के लिये कोई चीज़ बनवा ले तो अगर मकान के मालिक की इजाज़त से वह यह काम करता है तो उसका ख़र्च मकान के मालिक से ले सकता है वर्ना उसके तमाम ख़र्च किरायेदार को बर्दाश्त करना पड़ेंगे।

8. अगर किराये दार किराये की ज़मीन पर कोई पेड़ लगाये या कोई चीज़ अपने ख़र्च से बनवाये तो मकान को छोड़ते वक़्त मालिक पेड़ को कटवा और बनी हुई चीज़ को तुड़वा सकता है और उसकी क़ीमत दे कर ख़रीद भी सकता है मगर किरायेदार मालिक को क़ीमत देने पर मजबूर नहीं कर सकता।

9. मकान किराये पर लेने के बाद उसकी सफ़ाई और कूड़ा करकट फेंकने की ज़िम्मेदारी मकान के मालिक पर नहीं रहेगी।

10. अगर किरायेदार मकान को ख़राब या बहुत गंदा कर दे तो मकान के मालिक को उसे अलग कर देने का इख़्तियार है।

11. अगर ऐसी चीज़ जो एक जगह से दूसरी जगह ले जाई जा सकती है जैसे फरनीचर बरतन या कपड़ा वग़ैरा किराये पर लाई जाये लेकिन इस्तेमाल न की जाये तो जितने दिनों वह किरायेदार के पास रहेगी उसका किराया देना होगा लेकिन अगर किराये का मुआमला तै हो गया और चीज़ लाई नहीं गई थी कि उसकी ज़रूरत ख़त्म हो गई इस सूरत में किराया तो नहीं देना पड़ेगा लेकिन तुरन्त ख़बर देना ज़रूरी है।

12. अगर किरायेदार ने ख़ास अपने इस्तेमाल के लिये चीज़ किराया पर ली है तो किसी दूसरे को किराये पर आरियतन (वक़्ती तौर पर) देना सही नहीं।

13. अगर कोई सवारी इस शर्त पर तै की कि फ़लाँ जगह तक पहुंचा दे, अब अगर रास्ते में वह ख़राब हो जाये या बिगड़ जाये तो मालिक की ज़िम्मेदारी है कि वह उस जगह तक पहुंचाये जिस का वादा कर लिया है, अगर उसको सही करने में देर हो रही है और सवार होने वाले इन्तिज़ार नहीं कर सकते हों, तो जितनी दूरी वे तै कर चुके हों उसका किराया अदा करने के बाद दूसरी सवारी से जा सकते हैं और अगर पूरा किराया वे अदा कर चुके हैं तो बाक़ी दूरी का किराया वापस ले कर दूसरी सवारी से जा सकते हैं, इस्लामी शरीअत के मुताबिक़ यही तरीक़ा सही है।

14. जिस जगह का टिकट लिया है या जिस जगह के लिये सवारी तै की है, अगर उससे ज़्यादा जायेगा तो उसका जुर्माना देना पड़ेगा।

15. अगर किसी शहर में दो या दो से ज़्यादा स्टेशन हों तो एक का निर्धारण ज़रूरी है, क्योंकि अगर पहले स्टेशन का टिकट लिया है और बाद वाले स्टेशन पर उतरा तो जुर्माना उस किराये के बराबर होगा जो पहले स्टेशन से दूसरे स्टेशन तक का है, इससे ज़्यादा जुर्माना शरीअत के हिसाब से ग़लत है।

रेल और दूसरी सवारियों के एहकाम: 1. कफ़ालत के बयान में ज़िक्र आ चुका है कि रेलवे और जहाज़ चलाने वाली कम्पनियाँ जिस को जहाँ तक का टिकट दे देती हैं वे उसे हिफ़ाज़त के साथ वहाँ तक पहुंचाने की ज़िम्मेदार होती हैं। इसी तरह अगर कोई सामान बुक कराया है तो उसे ले जाने और जब तक वह उस स्टेशन तक नहीं पहुंच जाता उसके टूट फूट और नुक़सान की भी ज़िम्मेदार होती हैं

क्योंकि उनकी हैसियत उजरत के साथ कफ़ील की होती, इस लिये जिन शर्तों पर उजरत दी जाती है वे पूरी करना पड़ती हैं, कुछ बातें ऐसी हैं जिनका ज़िक्र किया जाये या न किया जाये विभाग पर ज़िम्मेदारी होती है। रेलवे से माल जहाँ भेजा जाना है वहाँ के रेलवे स्टेशन पर माल उतारने की ज़िम्मेदारी वहां के रेल विभाग की होगी, इसी तरह कुछ ज़िम्मेदारियाँ माल के मालिक की हुआ करती हैं चाहे उनका ज़िक्र किया जाये या न किया जाये जैसे जानवर (गाय, बैल, भैंस, बकरी और मुर्ग़ी वग़ैरा) को खिलाने पिलाने की जिम्मेदारी जब वे रेल या जहाज़ पर हों या मछली या अंडों को सर्द (कोल्ड) रखने का इंतेज़ाम मालिक की ज़िम्मेदारी है और रेलवे या जहाज़ चलाने वाली कम्पनी पर नहीं है, यानी माल को हिफ़ाज़त व सुरक्षा के साथ पहुंचाना रेल विभाग का फ़र्ज़ है और माल बाक़ी रहने की ज़िम्मदारी मालिक पर है।

2. जिस क़िस्म का और जितना सामान ले जाने की इजाज़त रेल विभाग ने दी हो उसके ख़िलाफ़ या उस मात्रा से ज़्यादा ले जाना सही नहीं है। चोरी से माल ज़्यादा लादना चाहे वह मालगाड़ी का डिब्बा हो या ट्रक या ठेला नाजाइज़ है।

मज़दूरों की क़िस्में: जैसा कि बयान किया जा चुका है कि मज़दूरी तीन तरह से अदा की जाती है या ली जाती है, एक किराये के ज़रिये जिसका बयान हो चुका, अब बाक़ी दो क़िस्मों का ज़िक्र किया जाता है। दूसरों का काम कर के रोज़ी कमाने वाले दो तरह के होते हैं, एक वे जो अपना काम तलाश करने दूसरों के पास जाते हैं जैसे मज़दूर, घरेलू नौकर, दफ़तर या कारख़ाने के क्लर्क, जब उन्हें काम मिलता है तो उसको पूरा कर के काम लेने वाले से अपनी मेहनत की मज़दूरी वसूल करते हैं। दूसरे वे पेशावर लोग जो कोई हुनर जानते हैं, ऐसे लोग खुद किसी के पास नहीं जाते और न किसी ख़ास आदमी के नौकर होते हैं बल्कि दूसरे लोग उनके पास अपनी

ज़रूरत पूरी कराने के लिये आते हैं, जैसे घड़ी बनाने वाला, मोची, टेलर, लोहार, सुनार, पेन्टर या उन्हें बुला कर अपनी ज़रूरत पूरी कराते हैं जैसे कुली, नाई, धोबी, मेहतर वग़ैरा। पहली क़िस्म के लोगों को अजीरे ख़ास और दूसरी क़िस्म के लोगों को अजीरे मुश्तरक कहा जाता है।

अजीरे मुश्तरक

1. अजीरे मुश्तरक की हैसियत अमीन (अमानतदार) की होती है, यानी जो चीज़ें बनाने, ठीक करने, धोने या रंगने के लिये दी जाती हैं वे अमानत के तौरपर अजीर के पास होती हैं और यह अमानत "अमानत बाज़मानत" होती है, यानी वह अमानत की हिफ़ाज़त के लिये उजरत लेता है। उसकी ज़िम्मेदारी इस हैसियत से भी अहम है कि वह किसी एक आदमी की चीज़ों का अमीन नहीं होता बल्कि बहुत से लोगों की चीज़ें उसके क़ब्ज़े में होती हैं, अगर उसे ज़िम्मेदार क़रार न दिया जाये तो फिर बद दियानती करके बहुत से लोगों की चीज़ें हड़प कर सकता है।

2. चूंकि वह अमीन होने के साथ ज़ामिन (ज़िम्मेदार) भी होता है, इस लिये अगर उसकी ग़फ़लत से कोई चीज़ गुम हो गई या ख़राब हो गई तो उसका जुर्माना लिया जायेगा जैसे धोबी ने कपड़ा गुम कर दिया या नया कपड़ा फाड़ लाया या गधे ने चबा डाला सुनार ने ज़ेवर खो दिया या जो चीज़ ठीक करने के लिये दी गई थी उसमें और ज़्यादा ख़राबी पैदा कर दी, दर्ज़ी को कपड़ा सीने के लिये दिया गया उसने इतना छोटा सी दिया कि पहनने में तकलीफ़ हुई, रंगने वाले ने हरे रंग के बजाये पीले रंग से रंग दिया तो इन तमाम सूरतों में जुर्माना लिया जा सकता है, जिसकी चीज़ ख़राब हुई है उसे क़ानूनी तौर पर जुर्माना लेने का हक़ है, अब अगर वह जुर्माना न ले तो यह उसका एहसान होगा हां अगर अचानक कोई आफ़त आ गई और कोई चीज़ अजीरे मुश्तरक के पास से खो गई तो जुर्माना लेना

सही नहीं है जैसे घर गिर पड़ा या आग लग गई या चोरी हो गई तो इन सूरतों में जुर्माना लेना सही न होगा, लेकिन अगर यह सुबूत मिल जाये कि वह चीज़ नष्ट या गुम नहीं हुई है तो फिर चीज़ का मालिक मुतालबा कर सकता है। मिसाल के तौर पर अगर धोबी के घर से कपड़े की एक लादी चोरी हो गई तो नहीं समझा जायेगा कि हर गाहक का कपड़ा चोरी हो गया। धोबी को यह सुबूत देना होगा कि किस गाहक का क्या क्या कपड़ा चोरी हुआ है वर्ना जुर्माना लिया जायेगा, हाँ अगर घर का पूरा सामान चोरी होना साबित हो जाये तो कोई गाहक जुर्माना नहीं ले सकता।

कुछ और शर्तें: 1. काम देने वाले और काम लेने वाले दोनों का आकि़ल और समझदार होना ज़रूरी है, नासमझ बच्चे का एतेबार नहीं किया जायेगा।

2. उजरत लेने वाले और उजरत देने वाले दोनों की रज़ामंदी ज़रूरी है।

3. जो काम कराना है उसको विस्तार के साथ बताना ज़रूरी है जैसे कोई ज़ेवर बनवाना है तो उसके हुलिये और वज़न के बारे में सब कुछ सुनार को बता दिया जाये, जूता बनवाना है तो पैर का नाप और उसकी बनावट (शू, पम्प, या न्यू कट वगै़रा) बता दी जाये।

4. चीज़ की क़ीमत और यह कि वह नक़द अदा होगी या उधार पहले से तै क़र लेना चाहिये।

अजीरे मुश्तरक की मज़दूरी और दूसरे मसाइल: 1. अजीरे मुश्तरक अपना काम पूरा कर लेने पर मज़दूरी का हक़दार होता है उससे पहले नहीं, जब तक घड़ी बनाने वाला घड़ी को ठीक न कर दे, मोची जूता तैयार न कर दे, दर्ज़ी कपड़ा सी न दे, और धोबी कपड़ा धो न दे वह क़ानूनी तौर पर मज़दूरी नहीं माँग सकता। लेकिन अगर आप दे दें तो आपको इसकी इजाज़त है।

2. महीने की तनख़्वाह पर काम करने वाला मज़दूर महीना पूरे होने से पहले मज़दूरी नहीं माँग सकता।

3. पेशावर मज़दूर पहले ही कुछ रक़म इस शर्त पर ले लेते हैं कि अगर आप वह चीज़ न लेंगे तो वह रक़म वापस न होगी, यह नाजाइज़ है (सिर्फ़ इमाम अहमद बिन हम्बल इसको जाइज़ कहते हैं)

4. अजीरे मुश्तरक अगर कोई वक़्त मुक़र्रर कर दे कि मैं यह चीज़ फ़लाँ वक़्त दूँगा तो अख़लाक़न उसे अपने वादे को पूरा करना चाहिये। लेकिन क़ानूनन वह काम का पाबन्द है वक़्त का नहीं, हाँ अगर उसने जल्दी देने के वादे पर कुछ मज़दूरी ज़्यादा ले ली है तो उसे वक़्त पर देना ज़रूरी होगा।

5. अजीरे मुश्तरक को जब तक अपने काम की मज़दूरी या बदला न मिल जाये वह उस चीज़ को अपने पास रोक सकता है, उस रोकने की मुद्दत में अगर माल खो जाये या ख़राब हो जाये तो उसकी ज़िम्मेदारी अजीर पर नहीं है क्योंकि यह काम कराने वाले की ग़लती है कि उसने मज़दूरी नहीं दी और इस लिये अजीर माल को रोकने पर मजबूर हुआ। यह मसलक इमाम मालिक (रह०) का है मगर इमाम अबू हनीफ़ा (रह०) इस की दो क़िस्में करते हैं एक वे पेशावर जिनका काम असल चीज़ में परिवर्तन करना है जैसे दर्ज़ी जो कपड़े को काट कर सीता है, रंग करने वाला जो कपड़े को रंग कर उसकी सूरत बदल देता है और धोबी जो मैले कपड़े को उजला कर देता है तो ऐसे लोगों को यह हक़ है कि जब तक मज़दूरी न मिल जाये वे चीज़ मालिक के हवाले न करें, दूसरी क़िस्म उन पेशावरों की है जिनके काम से असल चीज़ में कोई परिवर्तन नहीं होता जैसे सामान ढोने वाले क़ुली, मल्लाह, रेल और जहाज़ चलाने वाली कम्पनियां, मोटर तांगे और रिक्शा चलाने वाले। इमाम अबू हनीफ़ा (रह०) के नज़दीक उनको यह हक़ नहीं है कि मज़दूरी मिलने तक उस माल को रोक लें जिसे उन्हों ने पहुंचाया है, मौजूदा ज़माने में

अगर यह हुक्म दिया जाये कि मज़दूरी अदा होने तक माल को रोक न रखा जाये तो लोग कुलियों और सामान ले जाने वाली दूसरी सवारियों की मज़दूरी जानबूझ कर हड़प करने लगेंगे, और स्वार्थी व्यापारियों को भी यह ख़तरा नहीं होगा कि उनका माल उजरत अदा न होने की वजह से रोक लिया जाएगा लिहाज़ा वे अपना माल लेकर निकल जाने के बाद उजरत अदा करने की फिक्र ही नहीं करेंगे इस लिये इमाम मालिक और दूसरे इमामों का मसलक ही ज़्यादा मुनासिब है साहिबैन ने भी इसी को अपनाया है।

अजीरे मुश्तरक अजीरे ख़ास भी हो जाता है: अजीरे मुश्तरक उसी को कहते हैं जो किसी एक आदमी का काम नहीं करता लेकिन अगर उसको कोई एक शख़्स कुछ देर या कुछ दिन के लिये अपने काम पर लगा ले कि उतने दिनों तक दूसरा कोई काम न करो तो वह अजीरे ख़ास हो जायेगा, अब इस पूरे वक़्त में वह दूसरा कोई काम नहीं कर सकता, जैसे किसी बढ़ई को दिन भर के लिये अपने यहाँ रखा या किसी सुनार, दर्ज़ी या किसी और पेशावर को कुछ दिन घर पर बुला कर काम लिया तो वह उस पूरे वक़्त में अजीरे ख़ास होगा, इसी तरह एक या दो घंटे के लिये रिकशा या मोटर किसी मुक़र्ररह जगह तक जाने और आने के लिये ख़ास कर ली या रेल की कोई सीट रिज़र्व करा ली तो आप को हक़ है कि उतनी देर तक किसी और को सवार न होने दें। (अल-मुजल्ला, 62)

कुछ इस्तिलाहें: फ़िक़ह की किताबों में जो इस्तिलाहें "किताबुल इजारा" में इस्तेमाल हुई हैं उनको बयान किया जाता है ताकि मज़दूरी के बारे में इस्लामी शरीअत की हिदायतें और मज़दूरी पर काम करने वालों के मसाइल को अच्छी तरह समझा जा सके।

(1) उजरत - जो चीज़ मेहनत के बदले में दी जाये (2) अजीर - मेहनत करने वाला (3) मुस्ताजिर या आजिर - काम लेने

वाला (4) उजरते मिस्ल - वह उजरत जो हुकूमत किसी काम की मुक़र्रर करे। इन इस्तिलाहों को हम अपनी रोज़ाना की ज़बानों में जिस तरह अदा करते हैं उन्हें भी ध्यान में रखना चाहिये।

(1) उजरत के लिये मज़दूरी का शब्द (2) और अजीर के लिये मज़दूर का शब्द आम तौर पर बोला जाता है। (3)मुसताजिर या आजिर के लिये उनकी कई हैसियतों के लिहाज़ से नाम लिये जाते हैं जैसे कारख़ानेदार, फैक्ट्री का मालिक, ठेकेदार और अगर हुकूमत खुद अपने किसी अफ़सर के ज़रिये अजीरों से काम ले तो उसे सरकार का नाम दिया जाता है (4) उजरते मिस्ल के लिये वह मज़दूरी जो मुल्क के आम कारख़ानों में मज़दूरों को किसी काम के बदले दी जाती हो समझी जाती है।

इस्लामी शरीअत की हिदायात जब शुरू शुरू में बनीं तो उस वक़्त एक वर्ग ग़ुलामों का भी मौजूद था जिससे ज़ाती मज़दूरी और मेहनत का काम लिया जाता था इस लिये उनके बारे में जो आदेश इस्लामी शरीअत ने दिये हैं वे आदेश मौजूदा ज़माने के ज़ाती मुलाज़िमों, अजीरों, मज़दूरों और तमाम मेहनत करने वाले लोगों के लिये भी इस्तेमाल होंगे।

यह इस्लामी हिदायात की बरकत ही थी जिस पर अमल करने से ग़ुलामों की संख्या घटती ही चली गई यहाँ तक कि अब इस बदतरीन निचले वर्ग के लोगों का वजूद ही बाक़ी न रहा, यानी अब ग़ुलामों के मसाइल नहीं हैं लेकिन दुनिया की आबादी अगर ढाई अरब है तो उसमें एक अरब आबादी मज़दूरों और मेहनत करने वालों की है, हिन्दुस्तान में एक वर्ग हरिजनों का है जिन्हें ऊँचे 'वर्ग के हिन्दुस्तानी अपना ग़ुलाम समझते और मआशी व समाजी हुकूक़ में भी अपने बराबर लाना गवारा नहीं करते हैं इसलिये आज के तरक़्क़ी वाले दौर में भी एक वर्ग मौजूद है जिस को मआशी (आर्थिक) व

समाजी हैसियत से इतमीनान हासिल नहीं है कहीं वह मालदारों के हाथों पिस रहा है कहीं हुकूमत और ऊँचे वर्ग की इजारादारी ने उसे अपने चंगुल में ले रखा है।

मज़दूरों के मसाइल और इस्लामी शरीअत: मेहनत करने वाले वर्ग की मआशी और समाजी उलझनों का हल इस्लामी शरीअत की अख़लाक़ी हिदायतों और क़ानूनी बन्दिशें में मौजूद है अगर उन पर अमल किया जाये तो न मआशी कठिनाईयां बाक़ी रहेंगी और न कोई समाज जुल्म व अत्याचार का रास्ता अपना सकेगा।

उजरत के मुआमले में इस्लामी शरीअत ने अख़लाक़ी और क़ानूनी दोनों तरह की हिदायतें दी हैं।

उजरत के बारे में कुरआनी हिदायात: कुरआन में दूध पिलाने वाली औरतों का ज़िक्र करते हुए कहा गया है कि अगर तुम किसी ग़ैर औरत से अपने बच्चे को दूध पिलवाते हो तो चूँकि वह अपने बदन का खून ख़र्च कर के तुम्हारे बच्चे को दूध पिलाती और उसकी परवरिश करती है इस लिये तुम्हारा भी फ़र्ज़ है कि अपनी कमाई में से उसकी ज़िन्दगी की ज़रूरतों पर ख़र्च करो, दोनों को एक दूसरे की तकलीफ़ का ख़याल होना चाहिये –

وَعَلَى الْمَوْلُوْدِ لَهٗ رِزْقُهُنَّ وَكِسْوَتُهُنَّ بِالْمَعْرُوْفِ ؕ لَا تُكَلَّفُ
نَفْسٌ اِلَّا وُسْعَهَا ۚ (بقرہ، آیت۔۲۳۳)

"वअलल मौलूदि लहू रिज़्क़ुहुन्ना व किसवतुहुन्ना बिल मअरूफ़ि, ला तुकल्लफ़ु न"सुन इल्ला वुसअहा"। (सूरह बक़रा: 233)

अनुवाद: जिसका बच्चा है उसके ऊपर मअरूफ़ (ज़माने के दस्तूर) के मुताबिक़ दूध पिलाने वालियों का खाना कपड़ा है किसी शख़्स पर उसकी ताक़त से ज़्यादा बोझ न डाला जाये।

मअरूफ़ और तकलीफ़ शब्द का विवरण आगे आ रहा है जहाँ

उजरत को मुआहदा क़रार देने का फ़ायदा बताया गया है, कुरआन ने हज़रत मूसा और हज़रत शुऐब अलैहिस्सलातु वस्सलाम का क़िस्सा बयान किया है जिसमें हज़रत शुऐब मुस्ताजिर और हज़रत मूसा अजीर हैं, हज़रत मूसा नुबुव्वत से पहले मदयन की तरफ़ गुज़रे तो रास्ते में एक कुंवें पर चरवाहों की भीड़ नज़र आई, उन्होंने देखा कि वहाँ दो लड़कियाँ अपने जानवर लिये अलग खड़ी हैं, हज़रत मूसा को उन पर रहम आया और हाल पूछा उन्होंने बताया कि हमारे बाप बूढ़े हो चुके हैं वह यहाँ नहीं आ सकते यह चरवाहे जब अपने जानवरों को पानी पिला चुकेंगे तब हम पानी भरेंगे और अपने जानवरों को पिलायेंगे, हज़रत मूसा आगे बढ़े और डोल खींच कर उनके जानवरों को पानी पिलाया, ये लड़कियाँ हज़रत शुऐब अलैहिस्सलाम की थीं, जानवर ले कर जब घर आई तब इस क़िस्से का ज़िक्र अपने बाप से किया, हज़रत शुऐब नबी थे वह किसी की मेहनत चाहे वह रिज़ाकाराना ही क्यों न हो बरबाद करना गवारा न कर सके इस लिये उनको बुलवाने के लिये एक लड़की को भेजा ताकि एहसान का बदला एहसान से दें, चुनाचे हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम आये और हज़रत शुऐब ने बड़े प्यार से उनका हाल सुना, बात करने के दौरान लड़कियों ने कहा, अब्बा जान इनसे ज़्यादा ताक़तवर और ईमानदार आदमी नहीं मिल सकता इस लिये आप इनको मुस्तक़िल तौर पर अजीर रख लीजिये। 'अमीन' का लफ्ज़ ख़ास तौर पर हज़रत मूसा की परहेज़गारी और पवित्रता को साबित करता है, जिसे उन लड़कियों ने अच्छी तरह महसूस किया था, दोनों ख़ूबियाँ वे हैं जिनकी वजह से अजीर की उजरत बढ़ाई जा सकती है, चुनाचे हज़रत शुऐब अलैहिस्सलाम ने मुसताजिर होने की हैसियत से हज़रत मूसा से उजरत का मुआमला तै किया जिसे उन्होंने मंज़ूर कर लिया, हज़रत शुऐब ने मुआमला करते वक़्त यह बात वाज़ेह कर दी कि

وَمَــا اُرِيْـدُ اَنْ اَشُـقَّ عَلَيْكَ ؕ سَتَـجِـدُنِـىٓ اِنْ شَـآءَ الـلّٰـهُ مِنَ الصّٰلِحِيْنَ. (القصص:٢٧)

"वमा उरीदु अन अशुक़्क़ा अलैका, सतजिदुनी इन्शाअल्लाहु मिनस्सालिहीन"। (अल-क़सस: 27)

अनुवाद: मैं तुम पर कोई ज़्यादती करना नहीं चाहता इन्शाअल्लाह तुम मुझे अच्छा मुआमला करने वाला पाओगे।

चूंकि मुआहिदे में दोनों पक्ष अपनी रज़ामंदी और शराइत पेश करने का हक़ रखते हैं इस लिये हज़रत मूसा ने जवाब में कहा कि-

قَالَ ذٰلِكَ بَيْنِىْ وَبَيْنَكَ اَيَّمَا الْاَجَلَيْنِ قَضَيْتُ فَلَا عُدْوَانَ عَلَىَّ ؕ وَاللّٰهُ عَلٰى مَا نَقُوْلُ وَكِيْلٌ. (القصص_٢٨)

"क़ाला ज़ालिका बैनी व बैनका, अय्यमल अजलैनि क़ज़ैतु फ़ला उदवाना अलय्या, वल्लाहु अला मा नक़ूलु वकील"

अनुवाद: यह बात मेरे और आप के बीच तै हो गई कि दोनों मुद्दतों में से जिसे भी मैं पूरा कर लूँगा उसके बाद मुझ पर कोई ज़्यादती नहीं होगी और जो कुछ हम तै कर रहे हैं उस पर ख़ुदा गवाह है।

आख़िरी शब्द का मक़सद यह है कि जुल्म व अत्याचार से दूर रहने और मुआहदे पर क़ायम रहने के लिये सिर्फ़ मुनाफ़ा ही सामने न हो बल्कि यह ख़याल भी हो कि यह मुआमला ख़ुदा के सामने तै हो रहा है जो हर ढकी खुली बात का जानने वाला है।

इस बारे में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के फ़रमान भी सुन लें, सब से पहले आपने यह बताने के लिये कि मेहनत मज़दूरी कोई गिरी पड़ी चीज़ नहीं, फ़रमाया कि तमाम अम्बिया ने बकरियाँ चराई हैं, सहाबा ने पूछा "या रसूलल्लाह! आप ने भी? फ़रमाया "हाँ मैं भी

थोड़े से क़ीरात पर मक्के वालों की बकरियां चराया करता था।

(बुख़ारी)

मज़दूरों को उजरत देने का हुक्म आप (स.अ.व.) ने इन शब्दों में दिया है اَعْطُوْا الْاَجِيْرَ قَبْلَ اَنْ يَّجُفَّ عَرَقُهٗ ''अअतुल अजीरा क़ब्ला अंय्यजुफ्फ़ा अरक़ुहू'' (अजीर को उसका पसीना सूखने से पहले उजरत दे दो।

(इब्ने माजा)

अगर किसी ने मज़दूरी न दी या कम दी या इधर उधर का बहाना किया उसके बारे में आपने फ़रमाया कि क़यामत के दिन जिन तीन आदमियों के ख़िलाफ़ मैं दावा करने वाला हूंगा उनमें से –

"एक वह शख़्स है जो किसी को मज़दूरी पर रखे और उससे पूरा काम ले मगर मज़दूरी पूरी न दे"। (बुख़ारी)

मज़दूरी पूरी न देने का मतलब सिर्फ़ मज़दूरी का न देना नहीं बल्कि यह भी है कि जितनी मज़दूरी उस काम की उसे मिलना चाहिये वह न दी जाये और उसकी मजबूरी से फ़ायदा उठा कर कम क़ीमत पर काम कराया जाये, हदीस की शरह करने वाले इसकी तशरीह में फ़रमाते हैं ''वलम युअतिही अजरूहू वाफ़ियन'' (और उसको पूरी उजरत न दी) गुलामों के बारे में जो हदीसें हैं और उन में जो आदेश ज़िक्र किये गये हैं वे मौजूदा ज़माने के ज़ाती नौकरों, अजीरों और मेहनत करने वाले मज़दूरों पर भी लागू होंगे, एक बार हज़रत अबू ज़र (र.त.अ.) ने किसी गुलाम पर सख़्ती की, आप (स.अ.व.) को मालूम हुआ तो फ़रमाया –

هُمْ اِخْوَانُكُمْ جَعَلَهُمُ اللّٰهُ تَحْتَ اَيْدِيْكُمْ فَمَنْ جَعَلَ اَخَاهُ تَحْتَ يَدِهٖ فَلْيُطْعِمْهُ مِمَّا يَاكُلُ وَلْيُلْبِسْهُ مِمَّا يَلْبَسُ وَلَا يُكَلِّفْهُ مِنَ الْعَمَلِ مَا يَغْلِبُهٗ فَاِنْ كَلَّفَهٗ مَا يَغْلِبُهٗ فَلْيُعِنْهُ عَلَيْهِ.

''हुम इख़्वानुकुम जअलहुमुल्लाहु तहता ऐदीकुम फ़मन

जअला अख़ाहु तहता यदिही फ़लयुतइम्हु मिम्मा याकुलु वल युलबिस्हु मिम्मा यलबिसु वला युकल्लिफ़ुहू मिनल अमलि मा यग़लिबुहू फ़इन कल्लफ़हू मा यग़लिबुहू फ़लयुइनहु अलैहि"।

अनुवाद: ये तुम्हारे भाई हैं जिनको ख़ुदा ने तुम्हारे मातहत (अधीन) बनाया है तो जिसका भाई उसके मातहत हो जाये उसको उसे वही खिलाना चाहिये जो ख़ुद खाता है, वही पहनाना चाहिये जो ख़ुद पहनता है और उससे ऐसा काम न लेना चाहिये कि वह थक कर चूर हो जाये अगर ज़्यादा मेहनत का काम लेना पड़ जाये तो उस काम में उसकी मदद करना चहिये। (बुख़ारी व मुस्लिम)

इस हदीस से कई बातों का हुक्म मिलता है –

1. यह कि मुलाज़िमों और मज़दूरों को अपना भाई समझो।

2. उस को इतनी मज़दूरी दो कि ज़िन्दगी गुज़ारने का जो तुम्हारा मेअयार है वही वह भी क़ायम रख सके।

3. उन पर ताक़त से ज़्यादा काम करने का बोझ न डालो कि वे थक कर चूर हो जायें और सेहत ख़राब हो जाये।

हदीस के इमामों ने हुक्म नम्बर 2 के बारे में लिखा है कि अगर मालिक अपने बुख़्ल (कंजूसी) की वजह से ख़ुद मोटा झोटा खाता पहनता है तो उसे यह हक़ नहीं कि अपने नौकरों और अजीरों को ऐसा करने पर मजबूर करे। (मिरक़ात) हुक्म नम्बर 3 में ख़ुद साफ़ तौर से यह बयान है कि अगर कभी ज़्यादा काम लेने की ज़रूरत पड़ जाये तो उस काम में उसका हाथ बटा कर उसकी मदद करनी चाहिये।

आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया "आदमी के लिये यह गुनाह काफ़ी है कि जिसकी रोज़ी उसके ज़िम्मे हो वह उसे रोक ले या बरबाद (नष्ट) कर दे" (मुस्लिम) ज़ाहिर है कि मज़दूर की ज़िन्दगी का

दारोमदार (निर्भरता) उसकी पेशावराना कमाई पर होता है इस लिये अगर उसको उसकी ज़रूरत से कम मज़दूरी दी गई तो गोया उसकी मज़दूरी रोक ली या बरबाद (नष्ट) कर दी।

आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया "अपने मातहतों से बुरे व्यवहार से पेश आने वाला जन्नत में दाख़िल नहीं होगा" (तिर्मिज़ी) आप ने फ़रमाया وَاَكْرِمُوْهُمْ كَكَرَامَةِ اَوْلَادِكُمْ وَاَطْعِمُوْهُمْ مِمَّا تَاكُلُوْنَ "व अकरिमूहुम ककरामति औलादिकुम व अतइमूहुम मिम्मा ताकुलून" (यानी उनकी देख भाल इस तरह करो जैसे अपनी औलाद की करते हो और जो तुम खाओ उसी में से उनको भी खिलाओ)। (मिश्कात)

एक सहाबी ने पूछा "अगर नौकर ग़लती करता रहे तो कितनी बार उस को माफ़ किया जाये?" आप ने उस का कोई जवाब नहीं दिया उन्होंने दोबारा पूछा फिर भी आप चुप रहे जब तीसरी बार पूछा तो फ़रमाया "अगर रोज़ाना 70 बार भी ग़लती करे तो माफ़ कर दो।

(अबू दाऊद)

आपको इस मज़लूम वर्ग का इतना ख़याल था कि मरने के वक़्त जो आख़िरी नसीहतें फ़रमाई उनमें से एक यह भी थी "अस्सलातु वमा मलकत ऐमानुकुम" (यानी नमाज़ और अपने मातहतों का ख़याल ज़रूर रखना) (अबू दाऊद, मुसनद अहमद) हदीस के इमामों के नज़दीक यह हुक्म सिर्फ़ गुलामों मुलाज़िमों और मज़दूरों पर ही नहीं लागू होगा बल्कि मेहनत करने वाले जानवरों पर भी होगा जिनके क़ानूनी हुक़ूक़ का ज़िक्र आगे आ रहा है।

उजरत का मुआमला मुस्ताजिर और अजीर के हुकूक़

कुरआन व हदीस की हिदायात की रोशनी में फुक़हा ने उजरत की क़ानूनी हैसियत और मुस्ताजिर और अजीर के इख़्तियारात व हुकूक़ मुक़र्रर कर दिये हैं जिसकी तफ़सील बयान की जाती है –

उजरत एक मुआहदा: काम लेने और उसका बदला अदा करने के लिये जो मुआमला अजीर व मुस्ताजिर या मज़दूर और मालिक के बीच तै पाता है इस इस्लामी शरीअत एक मुआहदा क़रार देती है, जिस तरह ख़रीद व फ़रोख़्त का मुआमला भी एक मुआहदे की सूरत में तै पाता है। यहाँ अजीर अपनी मेहनत पेश करता है और आजिर उसका बदला उजरत या मज़दूरी के नाम से देने का वादा करता है दोनों इस पर रज़ामंदी ज़ाहिर करते हैं जिस तरह ख़रीदने और बेचने में बायेअ माल देता है और ख़रीदने वाला उसकी क़ीमत देता है कोई किसी पर एहसान नहीं करता दोनों की हैसियत बराबर होती है बिल्कुल इसी तरह अजीर व मुस्ताजिर की हैसियत भी बराबर की होती है कोई किसी पर एहसान नहीं करता इस लिये न तो अजीर या मज़दूर को यह हक़ पहुंचता है कि वह अपनी मेहनत ही को असल चीज़ समझ कर मुस्ताजिर को परेशान करे और न मुस्ताजिर को यह हक़ है कि वह सरमाये (माल) को असल चीज़ समझ कर अजीर को परेशान करे या उसका हक़ मारे, नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का हुक्म यही है कि दोनों एक दूसरे को अपना भाई समझें और वही मुआमला करें जो एक भाई दूसरे भाई के साथ करता है।

मुआहदे का फ़ायदा: (1) उजरत के मुआमले को मुआहदा क़रार देने का सब से बड़ा फ़ायदा यह है कि मआशी एतेबार से दोनों का दर्जा बराबर कर के समाज में मज़दूर पेशा वर्ग को ऊपर उठाया जा सके और समाजी एतेबार से अजीर का दर्जा वही हो जाये जो एक मुस्ताजिर का है।

(2) दूसरा फ़ायदा यह है कि दोनों फ़रीक़ (पक्ष) मुआमला करते वक़्त एक दूसरे की ज़रूरत और मआशी (आर्थिक) हालत का पूरा ख़याल रखें सिर्फ़ अपनी ग़र्ज़ के बन्दे न बनें, अगर कोई शख़्स ज़्यादती करेगा तो हुकूमत मुदाख़लत (हस्तक्षेप) करेगी, कुरआन में उजरत को एक बुनियादी शर्त "मअरूफ़" के साथ से मशरूत किया

गया है, मअरूफ़ का मतलब यह है कि न तो उजरत इतनी ज़्यादा हो कि उजरत देने वाले की ताक़त से बाहर हो और न इतनी कम हो कि उजरत पाने वाले की ज़रूरत पूरी न हो सकें, यह आयत हम कुरआनी हिदायात के ज़िक्र में पहले बयान कर चुके हैं –

وَعَلَى الْمَوْلُوْدِ لَهُ رِزْقُهُنَّ وَكِسْوَتُهُنَّ بِالْمَعْرُوْفِ ط لَا تُكَلَّفُ نَفْسٌ اِلَّا وُسْعَهَا. (بقرہ-۲۳۳)

"वअलल मौलूदि लहू रिज़्क़ुहुन्ना व किसवतुहुन्ना बिल मअरूफ़ि, ला तुकल्लफु नफ़्सुन इल्ला वुसअहा"।

(सूरह बक़रा: 233)

अनुवादः और बच्चे वाले पर क़ायदे और दस्तूर के मुताबिक़ उनका खाना कपड़ा है, किसी जान पर उसकी ताक़त से ज़्यादा बोझ न डाला जाये।

हदीस में 'हुम इख़वानुकुम' (ये तुम्हारे भाई हैं) और 'अकरिमूहुम ककरामति औलादिकुम' (इनसे तुम अपने लड़कों की तरह व्यवहार करो) के शब्द नक़ल किये जा चुके हैं जिससे ज़ाहिर है कि अजीरों पर ताक़त से ज़्यादा बोझ न डालने के साथ साथ उनके साथ वह व्यवहार होना चाहिये जो एक भाई का भाई से और बाप का औलाद से होता है और यही जज़्बा उजरत माँगने में अजीर का होना चाहिये, सिर्फ़ फ़ायदा और ख़ुदग़र्ज़ी दोनों में संबंध रखने और उसके ख़त्म होने का सबब न हों।

कुरआन में जो मअरूफ़ का शब्द आया है उसकी वज़ाहत इमाम अबू बकर जस्सास ने इस तरह की है, "खाने पीने का निर्धारण मर्द की हालत को सामने रख कर होगी, अगर वह ख़ुशहाल है तो हैसियत के मुताबिक़ दूध पिलाने वाली को खाना कपड़ा देना चाहिये और अगर ग़रीब है तो उसी एतेबार से उजरत देना चाहिये"

"ला तुकल्लफु नफ़्सुन इल्ला वुसअहा" की वज़ाहत इस तरह की है, कि अगर औरत ज़्यादा उजरत माँगे तो उजरते मिस्ल (यानी जिस उजरत पर आम तौर पर दूसरी औरतें दूध पिलाया करती हैं,) उससे ज़्यादा नहीं दी जायेगी और अगर बच्चे का बाप उजरते मिस्ल से कम उजरत दे तो उसे पूरी उजरत देने पर मजबूर किया जायेगा, इससे मालूम हुआ कि उजरत के मुआमले में हुकूमत को दख़ल देने का पूरा हक़ है, अगर ऐसा न हो उजरते मिस्ल या मअरूफ़ उजरत का निर्धारण कौन करेगा और निर्धारण के बाद अगर कोई ज़्यादती हो तो उसे दूर करने का इख़्तियार किस को होगा।

मअरूफ़ या उजरते मिस्ल की तायीन करते वक़्त हुकूमत मज़दूरों की ज़रूरत के साथ मुस्ताजिरों के माली फ़ायदों को भी देख सकती है, अगर एक मिल मालिक को साल में एक लाख का फ़ायदा होता है और वह पचास हज़ार उजरत में बाँटता है, अगर मज़दूर संतुष्ट नहीं होते या उनकी बुनियादी ज़रूरतें पूरी नहीं होतीं तो मज़दूर और ज़्यादा उजरत माँग सकते हैं और अगर वह न दे तो हुकूमत उसमें दख़ल दे कर उजरतें बढ़वा सकती है क्योंकि जो उजरत वह दे रहा है वह मअरूफ़ से कम है और भाईचारे के जज़्बे के ख़िलाफ़ है कि एक भाई ऐश व आराम करे और उसके दूसरे भाई जिनकी मेहनत से उसको ऐश व आराम हासिल हुआ है वे अपनी बुनियादी ज़रूरतों को भी पूरा न कर सकें, नबी (स.अ.व.) के फ़रमान में दोनों को भाई क़रार दिया गया है।

(3) मुआहदे का तीसरा फ़ायदा यह है कि जिस तरह ख़रीदार को यह हक़ होता है कि चीज़ को अच्छी तरह देख भाल और सोच विचार कर के ले और बेचने वाला भी सोच समझ कर क़ीमत का फ़ैसला करे, इसी तरह अजीर व मुस्ताजिर को हक़ है कि दोनों उजरत और मेहनत का अन्दाज़ा कर के फ़ैसला करें, जैसे आजिर ने अजीर से कहा कि इतने फिट मिट्टी फ़लाँ जगह से ला कर मेरे घर

पहुंचाना होगी या मेरे कारख़ाने में रोज़ाना 8 घंटे मशीन चलाना होगी और इतनी उजरत मिलेगी, अजीर ने मंज़ूर कर लिया, मगर जब मिट्‌टी काटनी शुरू की तो वह बहुत सख़्त निकली और मेहनत के एतेबार से उजरत कम मुक़र्रर हुई या 8 घंटे रोज़ाना मशीन चलाना ताक़त से ज़्यादा निकला और मालूम हुआ कि सिर्फ़ 6 घंटे ही रोज़ाना मशीन चलाई जा कसती है और जो उजरत मुक़र्रर हुई थी वह 6 घंटे की मेहनत ही की थी तो अजीर को और ज़्यादा उजरत माँगने का हक़ है जैसा कि पहले बयान किया गया है इस सूरत में उजरते मअरूफ़ या अजरे मिस्म के मुताबिक़ फ़ैसला होगा।

(4) चौथा फ़ायदा मुआहदे का यह है कि आजिर को जब मालूम हो जाये कि यह काम अजीर से न हो सकेगा तो वह उससे दूसरा हल्का काम ले और अगर कोई दूसरा काम नहीं है तो उसको अलग कर सकता है दोनों सूरतों में अगर कोई फ़रीक़ (पक्ष) यह समझे कि दूसरे फ़रीक़ (पक्ष) की तरफ़ से ज़्यादाती हो रही है तो वह हुकूमत से फ़ैसला करा सकता है।

(5) मुआहदे का पाँचवाँ फ़ायदा यह है कि इन्सानी हैसियत से आजिर और अजीर भाई हैं इस लिये आजिर अजीर को अपने से कम दर्जो का इन्सान न समझे। भाईचारे की यही ज़हनियत उजरत की अदायगी में होना चाहिये, नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान भी यही है कि तुम उनको वही खिलाओ जो ख़ुद खाते हो और वही पहनाओ जो तुम पहनते हो समाजी हैसियत से भी सोसाइटी में बराबर का दर्जा दिया जायेगा, अपने बाज़ू की कुव्वत से रोज़ी हासिल करने की बुनियाद पर वह समाजी हुकूक़ से महरूम नहीं होगा जिनका ज़िक्र हदीसों में किया गया है, जैसे उनके साथ खाने में बुरा न समझो, उनको सलाम करने में पहल करो उनकी ख़ुशी व ग़म में उसी तरह शरीक रहो जिस तरह वे तुम्हारी ख़ुशी और ग़म में शरीक होते हैं।

एक मुआहदे के बाद दूसरा मुआहदा: यह बताया जा चुका कि अजीर व मुस्ताजिर मुआहदा करते वक़्त काम और उजरत का निर्धारण सोच समझ कर करने के हक़ में बराबर हैं और यह हक़ इस्तेमाल करने के बाद ही मुआहदा पूरा होगा लेकिन अगर मुआहदा पहली बार हो चुकने के बाद भी काम या उजरत के बारे में कोई एतेराज़ हो और दूसरा मुआहदा करना चाहते हों तो ऐसा किया जा सकता है। इस सूरत में पहला मुआहदा फ़स्ख़ हो (टूट) जायेगा।

मुआहदा कब फ़स्ख़ हो सकता है: फ़स्ख़ करने (तोड़ने) का हक़ उस वक़्त पैदा होगा जब दोनों में से किसी को ऐसी मजबूरी पेश आ जाये जिसमें मुस्ताजिर काम लेने से और मज़दूर काम करने से मजबूर हो जाये, हिदाया में है –

> "उजरत का मुआमला मजबूरी की बुनियाद पर फ़स्ख़ किया जा सकता है"

स्ट्राइक और कारख़ानाबन्दी: मजबूरी का मतलब यह नहीं है कि मज़दूर जब चाहें किसी बहाने काम करना छोड़ दें, यानी स्ट्राइक कर दें, या मालिक और कारख़ानेदार जब चाहे अपना फाटक मज़दूर पर बन्द करदें, मजबूरी का मतलब यह है कि मुआहदा करने वाला मुआहदे को ऐसा नुक़सान बर्दाश्त करने के बाद ही पूरा कर सके जो मुआहदे की स्प्रिट (रूह) के ख़िलाफ़ हो, आगे लिखा है कि मजबूरी का यही मतलब है।

मुआहदा कैसे फ़स्ख़ हो? इस सवाल का जवाब बग़ैर तफ़सील में गये हुए नहीं दिया जा सकता, साहिबे हिदाया ने लिखा है कि मुआहदे की तनसीख़ (रद्द) बग़ैर क़ानूनी दावे के मुम्किन नहीं है, कुछ इमामों की राय यह मालूम होती है कि बग़ैर क़ानूनी दावे के मुम्किन है, इन दोनों रायों के बीच एक तीसरी राह कुछ फुक़हा ने यह निकाली है कि अगर मजबूरी इतनी ज़्यादा ज़ाहिर हो कि हर

शख़्स उसे महसूस कर सके तो क़ानूनी दावे की ज़रूरत नहीं है लेकिन अगर मजबूरी ऐसी है जिसे सिर्फ़ अजीर और मुस्ताजिर ही समझ सकते हैं तो फिर क़ानूनी दावे के बग़ैर मुआहदा फ़स्ख़ नहीं किया जा सकता जैसे कोई आसमानी या ज़मीनी आफ़त आ पड़ी या कारख़ाने में आग लग गई तो हुकूमत को ख़बर किये बग़ैर भी कारख़ानेदार काम बन्द कर सकता है और मज़दूरों को जवाब दे सकता है लेकिन अगर कारोबार या उद्योग में घाटा हो रहा है या हो चुका है तो उसका सुबूत हुकूमत के सामने रखा जायेगा अगर वह उसे सही समझेगी तो फ़स्ख़ करा (तुड़वा) देगी वर्ना नहीं।

इसी तरह मज़दूर अगर बीमार पड़ गया या किसी हादसे का शिकार हो कर काम करने से मजबूर हो गया तो वह काम छोड़ सकता है लेकिन अगर वह किसी दूसरी जगह जाने या कोई दूसरा काम करने का इरादा कर चुका हो या उसे उजरत कम और काम ज़्यादा हो तो इस सूरत में न तो स्ट्राइक और न कोई ग़ैर क़ानूनी हरकत करना चाहिये बल्कि मुस्ताजिर को मुआहदा फ़स्ख़ करने (तोड़ने) पर राज़ी करने की कोशिश करना चाहिये अगर वह राज़ी न हो सके तो हुकूमत को अपनी मजबूरियाँ और माँग पेश कर के मुनासिब फ़ैसला करने की अपील करनी चाहिये, वह हालात को देख भाल कर मुनासिब फ़ैसला करेगी, मक़सद यह है कि मुआहदा हक़ीक़त पसन्दी के साथ होना चाहिये और सिर्फ़ अपनी ख़ुदग़र्ज़ी और फ़ायदे को ही सामने नहीं रखना चाहिये, बल्कि दूसरे के फ़ायदे और नुक़सान को भी देख लेना चाहिये, फिर अगर किसी तरफ़ से कोई ज़्यादती होगी तो हुकूमत दख़लअंदाज़ी करेगी, इस बात का ध्यान रहे कि हुकूमत का सहारा लेने का मतलब दीवानी में दावा दायर करना नहीं है जहाँ महीनों कचेहरी का चक्कर लगाना पड़े बल्कि सनअती संस्थाओं की निगरानी एक मख़सूस और मुसतक़िल विभाग करेगा तो मुल्क भर के मुस्ताजिरों और अजीरों के हुक़ूक़ का

देख भाल करने वाला होगा, आजिर और अजीर के बीच जो इख़्तिलाफ़ होगा वह कुछ घंटे में या कुछ दिनों में तै किया करेगा।

मुआहदा-ए-उजरत के सही होने की क़ानूनी शर्तें: 1. सब से पहली शर्त यह है कि अजीर व मस्ताजिर दोनों अक्ल व होश रखते हों, नादान बच्चों या पागल व बेअक्ल बालिग़ों के बीच उजरत का मुआमला नहीं हो सकता, बालिग़ होना ज़रूरी नहीं लेकिन आक़िल होना लाज़िम है, नादान बच्चों के वली अगर चाहें तो उनको अपने काम में शरीक कर सकते हैं मगर वे खुद न अजीर हो सकते हैं न मुस्ताजिर।

2. अजीर और मुस्ताजिर दोनों की रज़ामंदी ज़रूरी है, ऐसी रज़ामंदी जिसमें किसी दबाव् का दख़ल न हो जैसे आजिर की तरफ़ से अपने माल का दबाव डाल कर कम उजरत पर काम लेने की कोशिश या अजीर की तरफ़ से मुज़ाहिरा (प्रदर्शन) या स्ट्राइक की धमकी दे कर ज़्यादा उजरत हासिल करने की कोशिश।

3. उजरत का मुक़र्रर व मालूम होना ज़रूरी है यानी रोज़ाना या महीने में क्या उजरत दी जायेगी, हाँ अगर उस काम की उजरत आम तौर पर मुक़र्रर हो या जितना काम आजिर ले रहा है उसकी क़ीमत पहले से मुक़र्रर है तो बग़ैर तै किये हुए भी मुआमला हो सकता है इस सूरत में आजिर को उतनी ही उजरत देना और अजीर को लेना होगी जो उस काम के लिये आम मज़दूरों को दी जाती है, इसमें मक़ाम का लिहाज़ भी रखा जायेगा, क्योंकि एक काम की मज़दूरी बड़े शहरों में ज़्यादा और छोटे शहरों में कम भी हो सकती है।

4. उजरत के साथ काम की क़िस्म, काम करने की जगह, काम की मात्रा या काम करने का वक़्त भी बता देना चाहिये क्योंकि जगह और काम के क़िस्म की वजह से उजरत में कमी बेशी हो जाती है।

काम की मात्रा बता कर भी मज़दूरी तै की ज़ा सकती है यानी यह कि इतना काम कर लोगे तो इतनी उजरत मिलेगी जैसा कि आम तौर पर ठेके में होता है लेकिन अगर उजरत के मुक़ाबिले में काम ज़्यादा या मुश्किल होगा तो उतने काम की जो उजरत आम तौर पर दी जाती है वह देना पड़ेगी, इसी को उजरते मिस्ल कहा जाता है। महीने की तनख़्वाह पर भी अजीर रखा जा सकता है मगर इसमें भी काम की क़िस्म और जगह बताना ज़रूरी है।

मुआहदा-ए-उजरत का फ़ासिद हो जानाः जो शर्तें बयान की गई अगर उनमें से कोई न पाई जायेगी तो मुआहदा फ़ासिद समझा जायेगा और फ़स्ख़ हो जाने (टूटने) की सूरत में जितने दिन अजीर ने काम किया है ठनकी उजरत मिलेगी।

इस्लामी उजरत का क़ानूनः आम तौरपर अजीर के ज़हन में यह बात होती है कि मस्ताजिर से उसे ज़्यादा से ज़्यादा उजरत वसूल होना चाहिये चाहे उसे फ़ायदा हो या नुक़सान इसी तरह मुस्ताजिर यह सोचता है कि अजीर से जभी तक उसका संबंध है जब तक उसकी मेहनत से वह फ़ायदा कमाता रहे लेकिन जब उसका मेहनत से फ़ायदा उठाने का वक़्त गुज़र जाये, फिर उससे कोई संबंध नहीं, जैसे एक मशीन बेकार होने के बाद फेंक दी जाती है, उसी तरह अजीर भी फेंक देने के क़ाबिल है, मुस्ताजिर अपने माल को असल बुनियाद बना कर मेहनत को उसके ताबेअ क़रार दे लेता है और फ़ायदे का असल हक़दार भी वह अपने को समझता है, अजीर की ज़हनियत यह होती है कि असल फ़ायदा मेहनत और प्रबंध से हासिल होता है, अगर यह न हो तो माल बेकार हो जायेगा।

इस्लामी क़ानून में दोनों के वजूद को मानते हुए दोनों के हुक़ूक़ और ज़िम्मेदारियाँ मुक़र्रर कर दी गई हैं।

मुस्ताजिर के हुकूक़ और ज़िम्मेदारियां: मुस्ताजिर को यह हक़ है कि किसी सनअती, तिजारती, खेती, या अपने घरेलू और ज़ाती काम के लिये रोज़ाना उजरत पर या महीने की तनख़्वाह पर अजीर से उन शर्तों पर काम ले जिनका ज़िक्र किया जा चुका है, अजीर चाहे एक हो या दो, या लाख दो लाख हों, इन शर्तों के ख़िलाफ़ अगर काम करेगा तो सज़ा का हक़दार होगा। अगर कोई क़ानूनी ताक़त सज़ा देने वाली न हो तो आख़िरत में पकड़ ज़रूर होगी, क़ुरआन में साफ़ तौर से ज़िक्र है कि हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने उजरत के शराइत तै करते हुये फ़रमाया –

وَاللّٰهُ عَلٰى مَا نَقُوْلُ وَكِيْلٌ.

"वल्लाहु अला मा नक़ूलु वकील"

(हम जो कुछ कह रहे हैं उसका निगरां (रक्षक) अल्लाह है)

हदीस में है –

كُلُّكُمْ رَاعٍ وَ كُلُّكُمْ مَسْئُوْلٌ عَنْ رَعِيَّتِهٖ

"कुल्लुकुम राइन व कुल्लुकुम मसऊलुन अन रेइयतिही"
अनुवाद: तुम से हर एक दूसरों का रखवाला है और हर एक से अपनी निगरानी में आये हुए लोगों के बारे में पूछा जायेगा।

2. अजीर की बेरोज़गारी और उसकी मजबूरी से फ़ायदा उठा कर कम उजरत पर ज़्यादा काम लेने की कोशिश न अख़लाक़न सही है न क़ानूनन, इस्लामी हुकूमत इसमें दख़लअंदाज़ी कर सकती है, चाहे वह ख़ुद तहक़ीक़ करके जान ले कि मुस्ताजिर मज़दूरों पर ज़ुल्म और अत्याचार कर रहा है चाहे मज़दूरों के ध्यान दिलाने पर उसे मालूम हो।

3. मुस्ताजिर किसी अजीर को काम बिगाड़ने या दिल लगा कर

काम करने की वजह से अलग कर दे तो यह हक़ उसे है मगर अलग करने से पहले दो बातें करना होंगी - (1) उसे कोई शारीरिक मजबूरी तो नहीं है, अगर ऐसी बात है तो उस पर कोई पकड़ नहीं की जानी चाहिये। (2) उसकी दिलचसपी न होने का सबब उजरत की कमी तो नहीं है, इस हालत में उजरते मिस्ल के मुताबिक़ उस को उजरत मिलना चाहिये लेकिन अगर दोनों बातों में से कोई बात न हो तो मुस्ताजिर क़ानूनी तौर पद उससे पूरा काम लेने का हक़ रखता है और जानबूझ कर काम बिगाड़ने पर उससे जुर्माना ले सकता है।

4. अजीर से किसी दिन काम न लेने पर उस दिन की उजरत नहीं दी जायेगी, अगर उसे रोज़ाना की मज़दूरी पर रखा गया है लेकिन अगर महीने की तनख़्वाह पर है तो काम न लेने या छुटी के दिन की तनख़्वाह उसे मिलेगी।

5. उजरत देने के लिये मुस्ताजिर को वक़्त मुक़र्रर करना और वक़्त पर उजरत दे देना ज़रूरी है, अगर इत्तिफ़ाक़ से देर हो जाये तो उस पर पकड़ नहीं होगी लेकिन अगर देर करना उसकी आदत है तो क़ानून और अख़लाक़ दोनों लिहाज़ से मुजरिम होगा। नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है कि मज़दूर को मज़दूरी उसका पसीना सूखने से पहले दे दो।

6. मुस्ताजिर की हैसियत राई (राजा) की और मज़दूर की हैसियत प्रजा की होती है, ऊपर हदीस नक़ल की जा चुकी है कि हर राई से उसकी प्रजा के बारे में पूछा जायेगा, इस लिये अगर प्रजा में से कोई बीमार हो जाये तो अख़लाक़न राजा उसके इलाज का ज़िम्मेदार होगा, क़ानूनन भी यह ज़िम्मेदारी उस पर डाली जा सकती है, जिस तरह एक मुज़ारिब काम के ख़र्च के अलावा इलाज का ख़र्च भी मुज़ारबत के रूपये से ले सकता है यानी रूपया लगाने वाले की पूंजी से, उसी तरह एक मज़दूर जिस की हैसियत काम करने के

एतेबार से एक मुज़ारिब की तरह है उसके इलाज की ज़िम्मेदारी भी पूंजी लगाने वाले पर होना चाहिये और उजरत की शर्तों में उसका ज़िक्र कर देना बहुत मुनासिब है।

7. मज़दूरों से आम तौर पर जितना काम लिया जाता है उससे ज़्यादा न लिया जाये। नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का फ़रमान है, कि ताक़त से ज़्यादा काम न लिया जाये यहाँ तक कि जानवरों के बारे में भी यह हुक्म दिया है। इस्लामी हुकूमत ने बोझ उठाने की हद भी मुक़र्रर की है, इसी तरह मज़दूरों पर काम का बोझ डालने की भी हद मुक़र्रर होना चाहिये।

8. मुस्ताजिर मज़दूरों और अजीरों को काम पूरा न करने पर उनको वारनिंग तो दे सकता है मगर इससे ज़्यादा उनके साथ बदज़ुबानी करने बुरा भला कहने का हक़ नहीं रखता अगर ऐसा करेगा तो हुकूमत उसको सज़ा भी दे सकती है और जुर्माना भी कर सकती है। "ज़ालिका बैंनी व बैनका" के साथ "वल्लाहु अला मा नक़ूलु वकील", अजीर की तरफ़ से इस बात का इक़रार है कि ख़ुदा जिस तरह मुस्ताजिर के खुले और छुपे हुए जुल्म को देखता है, इसी तरह उसकी खुली ढकी कोताहियों को भी निगरां है।"

2. अजीरे मुश्तरक (यानी पेशावर) बढ़ई, लोहार, सुनार, दर्ज़ी वग़ैरा की हैसियत अमीन बाज़मानत की होती है जबकि अजीरे ख़ास अमीने बेज़मानत होता है, इसको पहले विस्तार के साथ बयान किया जा चुका है कि जिस तरह एक अमीन अमानत की चीज़ का ज़िम्मेदार और रक्षक होता है और अगर हिफ़ाज़त के बावजूद इत्तिफ़ाक़ से ज़मानत में आई हुई चीज़ खो दी जाये या ख़राब हो जाये तो अमीन से जुर्माना नहीं लिया जायेगा। लेकिन अगर जानबूझ कर वह चीज़ खो दिया जाये या ख़राब कर दी जाये तो उससे जुर्माना भी लिया जायेगा। इसी तरह हर अजीर व मज़दूर भी

मुस्ताजिर की तरफ़ से काम का और उन चीज़ों का जो उस के चार्ज में दी जायें अमीन होता है इस लिये अगर किसी इत्तिफ़ाक़ी मजबूरी की वजह से कोई कोताही काम में हो गई या कोई चीज़ जो उस के ज़िम्मे थी इत्तिफ़ाक़ से टूट गई या उसमें ख़राबी आ गई तो उस पर कोई ज़िम्मेदारी नहीं है लेकिन अगर जान बूझ कर उसने काम में कोताही की या जान बूझ कर नुक़सान किया तो उसका जुर्माना लिया जायेगा, मिसाल के तौरपर मशीन चलाते हुए उस का कोई पुरज़ा ख़राब हो गया या टूट गया या इत्तिफ़ाक़ से कोई चीज़ हाथ से छूट गई और टूट गई तो उसका कोई जुर्माना नहीं लिया जायेगा, लेकिन अगर जानबूझ कर मशीन सीधी चलाने के बजाये उल्टी चला दी या दियासलाई जलाई और तेल ने आग पकड़ ली या जानबूझ कर गिलास या चीनी का बरतन तोड़ दिया तो जुर्माना लिया जायेगा क्योंकि अजीर ने ख़ुद वह सूरत पैदा कर दी जिस की वजह से नुक़सान हुआ। इसी तरह अगर किसी दिन इत्तिफ़ाक़ से कोई ग़म पेश आ गया, तबीअत सुस्त हो गई और काम मुक़र्ररह मात्रा से कम किया तो उससे पूछ ताछ न करना चाहिये, लेकिन अगर काम में कमी करना उसकी आदत है तो उससे पूछ ताछ करने का और इख़राज का हक़ भी मुस्ताजिर को है, अगर मुस्ताजिर की हिदायत के ख़िलाफ़ कोई काम किया और नुक़सान पहुंच गया तो भी जुर्माना देना होगा।

3. अजीर को मुक़र्ररह वक़्त से पहले उजरत मांगने का हक़ नहीं है लेकिन अगर आजिर ख़ुद दे दे तो वह उसका हक़ रखता है लेकिन इस सूरत में अजीर पर ज़िम्मेदारी होगी कि जिस मुद्दत तक की मज़दूरी वह ले चुका है उस मुद्दत तक काम करे, हाँ अगर उजरत अजरे मिस्ल से कम हो तो जितने दिन की उजरत (अजरे मिस्ल के एतेबार से) बाक़ी हो उस मुद्दत तक काम करने का ही वह पाबन्द है, और उसी की उजरत अजीर को अदा करना होगी।

4. जितने दिन या जितने काम के लिये उजरत का मुआहदा किया गया है उसके पूरा होने से पहले अजीर को बग़ैर किसी मजबूरी के काम छोड़ने का हक़ नहीं है। मजबूरी क्या है इसको पहले बयान किया जा चुका है। हां अगर मुस्ताजिर जुल्म कर रहा हो तो वह अदालत से उसका फ़ैसला करा सकता है।

स्ट्राइकः अगर मुस्ताजिर उजरत रोक ले तो अजीर को काम बन्द कर देने और माँगने का हक़ है या नहीं है इनको उन अहकाम (आदेशों) की रोशनी में देखना चाहिये जो अजीर को उजरत न मिलने की सूरत में आजिर का माल, या चीज़ रोक लेने की इजाज़त के बारे में फ़िक़ह के इमामों ने दिये हैं (देखिये "अजीरे मुश्तरक की उजरत और दूसरे मसाइल" नम्बर 5)। काम बन्द कर देने या स्ट्राइक करने का तरीक़ा पहले राइज न था, इस लिये सराहत के साथ इसका ज़िक्र फ़िक़ह की किताबों में नहीं मिलता, जिस तरह उजरत न मिलने या कम मिलने की सूरत में अजीर को यह हक़ है कि वह माल को रोक ले इमाम अबू हनीफ़ा के अलावा तीनों इमामों की यही राय है, और इमाम अबू हनीफ़ा की राय के मुताबिक़ सनअती मज़दूरों को जिनके काम से असल चीज़ में परिवर्तन हो जाती है यह हक़ पहुंचता है) तो उसी पर स्ट्राइक को क़यास करना चाहिये क्योंकि इसका मक़सद भी माल की तैयारी को रोकना है जो उजरत न मिलने या सही उजरत न दी जाने के जुर्म में की जाती है।

5. अगर मुस्ताजिर ने किसी काम के बारे में यह क़ैद (बन्दिश) नहीं लगाई कि तुम को यह काम करना है तो अजीर अपने बदले में दूसरे मज़दूर से वह काम करवा सकता है लेकिन अगर क़ैद लगा दी है तो उसी अजीर को करना चाहिये दूसरे से अगर काम लेगा तो वह ज़ामिन होगा, नुक़सान हो जाने या काम ख़राब हो जाने पर उसको जुर्माना देना पड़ेगा चाहे इत्तिफ़ाक़ से ही नुक़सान हुआ हो।

कौनसी उजरतें जाइज़ हैं और कौनसी नाजाइज़: 1. शिक्षा या ट्रेनिंग देने की उजरत। अगर किसी शिक्षा संस्थान या सनअती कारख़ाने में काम सिखाने की मुद्दत और उजरत मुक़र्रर है, तो सीखने वाले को दाख़िल करने के बाद मुक़र्ररह उजरत देना पड़ेगी चाहे लड़का स्कूल जाये या न जाये। जैसे स्कूल में माहाना फीस ली जाती है वह उसको देना पड़ेगी चाहे लड़का स्कूल जाए या ना जाए, अगर उजरत मुक़र्रर हो मगर मुद्दत मुक़र्रर न हो तो इजारे का मुआहदा सही न होगा, लड़का जितने दिन काम सीखेगा उतने दिन की उजरत शिक्षा संस्थान या कारख़ानेदार को दी जायेगी, उन दिनों की कोई उजरत नहीं मिलेगी जिनमें शिक्षा नहीं हासिल की, अगर शिक्षा या ट्रेनिंग की मुद्दत मुक़र्रर कर दी गई हो, मगर उजरत का कोई ज़िक्र न किया गया हो तो उजरत देने या न देने का फ़ैसला आम हालतों के मुताबिक़ किया जायेगा, उजरत उसी वक़्त माँगी जा सकती है जब आम तौर से उस काम के सिखाने की उजरत ली जाती हो वर्ना मुतालबा नहीं किया जा सकता।

2. वे संस्थायें या विभाग जिनमें हुकूमत या पब्लिक की तरफ़ से किसी एक शख़्स को ज़िम्मेदार बना दिया गया हो जैसे मदरसे और किताब लिखने वाले या तहक़ीक़ का काम करने वाली संस्था, उनमें छुट्टी या बीमारी के ज़माने की उजरत भी दी जा सकती है इस शर्त पर कि हुकूमत या पब्लिक ने उसकी इजाज़त दे रखी हो।

3. कारख़ानेदार या मुस्ताजिर की तरफ़ से जो रक़म अजीरों को इनआम के तौर पर, अतिया, बोनस और प्रौवीडेन्ट फ़न्ड मिलती है उसे उजरत में किसी वक़्त भी शुमार नहीं किया जा सकता।

4. उजरत में नक़द रक़म को कसौटी बनाया जाये न कि जिन्स को। इसी तरह खाने कपड़े की उजरत पर किसी को मुलाज़िम न रखा जाये क्योंकि इस आधार पर नियुक्ति में इख़्तिलाफ़ हो सकता

है। लेकन अगर किसी मुल्क में इसका रिवाज हो तो कोई हर्ज नहीं लेकिन इस सूरत में वही खाना कपड़ा अजीर को दिया जायेगा जो आम तौरपर मुस्ताजिर खुद खाता पहनता है, स्कूलों में छात्रों से मिठाई बटवाने का रिवाज सही नहीं है हाँ अगर उजरत वाला अध्यापक हो तो उजरत के तौर पर सिर्फ़ उसके लिये जाइज़ है बाँटने के लिये सही नहीं है।

5. किसी सिफ़ारिश पर उजरत लेना जाइज़ नहीं है।

6. उजरत दे कर किसी हाफ़िज़ से तरावीह पढ़वाना भी ग़लत काम है, इससे बेहतर यह है कि छोटी-छोटी सूरतें पढ़ कर तरावीह की नमाज़ अदा की जाये।

7. गंदे खेल कूद या ग़ैर हलाल और नाजाइज़ चीज़ों की तैयारी या मरम्मत की उजरत लेना नाजाइज़ है, जिस तरह हर ग़ैर इस्लामी काम पर उजरत लेना हराम है।

यह हुकूमत की ज़िम्मेदारी है कि अज़ीर व मुस्ताजिर के हुकूक़ मुक़र्रर कर के उन पर लोगों से अमल कराये और फिर अजीरों के बेकार या मजबूर हो जाने पर उनकी ज़िन्दगी की ज़रूरतों को पूरा करने का इन्तिज़ाम करे।

मेहनत करने वाले जानवरों के हुकूक़: मेहनत मज़दूरी करने के सिलसिले में कई क़िस्म के जानवरों से काम लिया जाता है और इन्सान उनसे फ़ायदा उठाता है, इस्लामी शरीअत ने जहां मेहनत करने वाले इन्सानो के हुकूक़ मुक़र्रर किये हैं वहां इन बेज़ुबान जानवरों के हुकूक़ भी रखे हैं:

कुरआन करीम ने जानवरों को भी इन्सानों की तरह एक उम्मत कहा है -

وَمَا مِنْ دَآبَّةٍ فِي الْاَرْضِ وَلَا طَائِرٍ يَّطِيْرُ بِجَنَاحَيْهِ اِلَّا اُمَمٌ اَمْثَالُكُمْ (پاره ۷، ۱۲)

"वमा मिन दाब्बतिन फ़िल अर्ज़ि वला ताइरियं यतीरू बिजनाहैहि इल्ला उममुन अमसालुकुम"।

अनुवाद: ज़मीन पर चलने वाला हर जानदार और हवा में अपने दोनों परों से उड़ने वाला हर पंछी तुम्हारी तरह उम्मत है।

खुदा की मख़लूक़ होने की हैसियत से इन्सान और यह जानदार दोनों बराबर हैं, खुदा ने जानवरों को इन्सान के वश में कर दिया है तो इसका यह मतलब नहीं है कि वह उनके आराम व तकलीफ़ का ख़याल रखे बग़ैर जिस तरह और जितना चाहे काम लेता चला जाये, यह सिर्फ़ अख़लाक़ी हिदायत ही नहीं बल्कि क़ानूनी दफ़ा भी है। इसकी ताईद इस वाक़िये से होती है कि एक बार हज़रत उबैदुल्लाह (र.त.अ.) ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन बिश्र (र.त.अ.) से पूछा कि एक शख़्स घोड़े पर सवारी करता है और बिला वजह उसको कोड़े भी मारता है, इसके बारे में नबी (स.अ.व.) का कोई फ़रमान आप को मालूम है?, वह बोले मुझे मालूम नहीं, अन्दर से एक औरत बोली, खुद अल्लाह तआला का फ़रमान है कि यह तुम्हारे जैसी एक मख़लूक़ है, फ़िर ऊपर ज़िक्र की हुई आयत पढ़ी उन का मक़सद यह था कि खुदा की किसी मख़लूक़ को तकलीफ़ पहुंचाना जुर्म है। सवारी पर बैठते वक़्त यह पढ़ने के लिये कहा गया है -

سُبْحَانَ الَّذِیْ سَخَّرَلَنَا هٰذَا وَمَا كُنَّا لَهٗ مُقْرِنِيْنَ.

"सुब्हानल्लज़ी सख़्ख़रा लना हाज़ा वमा कुन्ना लहू मुक़रिनीन"

अनुवाद: पाक है वह ज़ात जिसने इसको हमारे बस में किया हम इसको क़ब्ज़े में नहीं ला सकते थे।

यह बात ज़हन में रहना चाहिये कि यह जानवर जिनको हमारे वश में कर दिया गया है सिर्फ़ अल्लाह का फ़ज़्ल है वर्ना इनको अपने क़ाबू में करना इन्सानों के वश से बाहर था। इन हिदायात की

रोशनी में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने हम पर उन जानवरों के हुकूक़ मुक़र्रर फ़रमाये हैं जिनसे हम काम लेते और फ़ायदा उठाते हैं।

1. जानवरों से वही काम लिया जायेगा जिसके लिये वे पैदा किये गये हैं। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक मिसाल दे कर इस बात को वाज़ेह (स्पष्ट) फ़रमाया कि एक शख़्स बैल पर सवार हो कर उसको मारने लगा तो बैल ने मुड़ कर कहा कि मैं सवारी के लिये नहीं पैदा किया गया हूं।

(बुख़ारी, बाब इस्तेमालि अल-बक़रि लिलहरासति)

आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि सवारी के जानवर की पीठ को मिम्बर (आसन) न बनाओ खुदा ने उसे सिर्फ़ इस लिये तुम्हारे वश में कर दिया है कि जिन जगहों तक तुम परेशानी उठा कर पहुंच सकते हो, वहाँ वह आसानी से पहुंचा दे। मिम्बर (आसन) न बनाने के दो मतलब है - (1) जानवर की पीठ को लकड़ी या पत्थर से बना हुआ मिम्बर (आसन) न समझो कि जितनी देर चाहो बैठे रहो (2) एक जानदार को आराम करने और खुराक की ज़रूरत होती है इस लिये उससे काम लेने के बाद उसकी गिज़ा का और आराम का इन्तिज़ाम करो।

2. जानवरों से काम लेने से पहले यह देख लिया जाये कि वह भूखे प्यासे और थके हुये तो नहीं हैं एक बार नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने किसी शख़्स को ऐसे ऊंट पर बैठे देखा जिसका पेट भूख की वजह से बैठ गया था, फ़रमाया! बेज़ुबान जानवरों के मुआमले में खुदा से डरा, उनपर सवार हो तों अच्छी हालत में सवार हो, "फ़रकिबूहा सालिहतन" (अबू दाऊद, किताबुल जिहाद)। मतलब यह कि सवार होने से पहले अच्छी तरह खिला पिला लिया करो और यह भी देख लिया करो कि बीमार तो नहीं हैं। एक अन्सारी

(मूल मदीना वासी) अपने ऊंट से ज़्यादा काम लेते और चारे का ख़याल कम रखते थे आप (स.अ.व.) ने उनको बुला कर यह चेतावनी दी -

"क्या इस जानवर के बारे में ख़ुदा से नहीं डरते जिसने तुम को इसका मालिक बनाया और तुम उसे भुखा रखते हो और तकलीफ़ पहुंचाते हो"

हज़रत अनस बिन मालिक (र.त.अ.) आम सहाबा का नमूना (आदर्श) बयान करते हुये कहते हैं कि हम लोग जब मंज़िल पर उतरते थे तो नमाज़ पढ़ने से पहले ऊँटों के कजावे खोल देते थे इस नमूने की रोशनी में हदीस के उलमा ने लिखा है कि अपने खाने पीने और आराम से पहले जानवरों के खाने पीने और आराम का इन्तिज़ाम करना चाहिये।

3. नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने जानवर के मुँह पर मारने और उन्हें दाग़ने से मना फ़रमाया है और ऐसा करने वाले को बुरा कहा है।

4. जानवरों को लड़ाने से मना फ़रमाया है।

5. जानवरों को गाली देना और बुरा भला कहना भी आप (स.अ.व.) को उसी तरह बुरा लगता था जिस तरह इन्सानों को गाली देना या आदत के तौर पर उसको बुरा भला कहना।

जानवरों से सुलूक (व्यवहार) की क़ानूनी हैसियत: जानवरों के बारे में ऊपर जो हिदायतें दी गई हैं वह सिर्फ़ अख़लाक़ी ही नहीं क़ानूनी भी हैं यानी उनकी ख़िलाफ़वर्ज़ी करने वालों को सज़ा भी दी जा सकती है। इमाम अबू हनीफ़ा (रह०) हुकूमत को इख़्तियार देते हैं कि वह जानवरों के मालिकों को चारे का अच्छा इन्तिज़ाम करने और जानवरों को आराम पहुंचाने की हिदायात जारी करे मगर उन पर कोई ज़बरदस्ती न करे। मगर इमाम मालिक इमाम शाफ़ई और इमाम

अहमद बिन हम्बल (रह०) एक राय रखते हुये फ़रमाते हैं कि अगर मालिक ने जानवर को ठीक तरह से चारा नहीं दिया तो हाकिम को इख़्तियार है कि वह उसे मजबूर करे कि वह या तो ठीक से चारा दे या जानवर को बेच डाले। इमाम मालिक और इमाम अहमद बिन हम्बल रहमतुल्लाह अलैहिमा यह भी फ़रमाते हैं कि कोई शख़्स जानवर से उसकी ताक़त से ज़्यादा काम लेता या बोझ लादता है तो हाकिम उसको उस काम से रोक देने का हक़ रखता है।

इमाम अबू हनीफ़ा (रह०) फ़रमाते हैं कि अगर एक शख़्स अपने जानवर पर सवार हो कर जा रहा हो और वह जानवर किसी दूसरे की चीज़ का नुक़सान कर दे तो मालिक को उसका जुर्माना देना पड़ेगा।

जैसे किसी का खेत खा लिया या रास्ते में किसी चीज़ को तोड़ डाला या ख़राब कर दिया।

इस से यह बात मालूम हुई कि जब जानवर के जिस्म और अंगों से होने वाले नुक़सान की ज़िम्मेदारी मालिक पर है तो फिर खुद जानवर पर जो ज़्यादती या ज़ुल्म होगा जिससे उसके जिस्म व जान को नुक़सान पहुंचे।।, उसका ज़िम्मेदार वह क्यों न हो।

ज़िराअत (खेती)

रोज़ी कमाने के साधनों में अहम और बड़े साधन दो हैं एक तिजारत दूसरा ज़िराअत (खेती) यह दोनों मुबारक पेशे हैं और कुरआन व हदीस में दोनों को करने के लिये कहा गया है।

ज़िराअत ज़्यादा बेहतर है या तिजारत: इमाम सरख़सी (रह०) मशहूर हनफ़ी आलिम ने इस सवाल पर बहस करते हुए रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के फ़रमान ''ख़ैरुन्नासि मन हुवा अनफ़उन्नासा'' (बेहतर आदमी वह है जो आम लोगों को ज़्यादा फ़ायदा पहुंचाये) की रोशनी में कहा है कि –

فَالْاِشْغَالُ بِمَا يَكُوْنُ نَفْعُهٗ اَعَمَّ يَكُوْنُ اَفْضَل.

''फ़ल इशग़ालु बिमा यकूनु नफ़उहू अअ़म्मा यकूनु अफ़ज़ल''

अनुवादः वह काम जिसका फ़ायादा ज़्यादा आम हो वही अफ़ज़ल (बेहतर) है।

इसका मतलब यह हुआ कि अगर मुल्क में ग़ल्ला ज़्यादा हो लेकिन तिजारत का निज़ाम सही न हो तो तिजारत के काम को सही तरीक़े से करना बेहतर और प्रथम है लेकिन अगर ग़ल्ले की कमी हो तो सब से ज़रूरी काम खेती को बढ़ाना होगा।

अल्लाह तआला ने ज़मीन की पैदाइश का ज़िक्र करते हुए फ़रमाया है –

وَالْاَرْضَ وَضَعَهَا لِلْاَنَامِ. فِيْهَا فَاكِهَةٌ وَّالنَّخْلُ ذَاتُ الْاَكْمَامِ.
وَالْحَبُّ ذُوالْعَصْفِ وَالرَّيْحَانِ. (سورۂ رحمٰن ۱۲)

''वलअर्ज़ा वज़अहा लिलअनामे, फ़ीहा फ़ाकिहतुवं वन्नख़्लु

ज़ातुल अकमामे, वल हब्बु जुलअस्फ़े वर्रयहान''

(सूरह रहमान, 12)

अनुवादः खुदा ने ज़मीन मख़लूक़ के फ़ायदे के लिये बनाई, उस में मेवे और खुजूर के पेड़ जिन पर गिलाफ़ होता है और भूसेदार गल्ला और खुश्बूदार पौधे पैदा होते हैं।

कुरआन में इस तरह की आयतें बहुत हैं जिनमें इन्सान को संबोधित कर के यह बात कही गई है कि खुदा ने ज़मीन को तुम्हारी रोज़ी और कमाई का ज़रिया बनाया है।

هُوَ الَّذِىْ جَعَلَ لَكُمُ الْاَرْضَ ذَلُوْلًا فَامْشُوْا فِىْ مَنَاكِبِهَا وَكُلُوْا مِنْ رِّزْقِهٖ (سورۂ ملک۔۱۵)

''हुवल्लज़ी जअ़ला लकुमुल अर्ज़ा ज़लूलन फ़म्शू फ़ी मनाकिबिहा वकुलू मिर्रिज़्क़ही'' (सूरह मुल्क, 15)

अनुवादः वह अल्लाह जिसने ज़मीन तुम्हारे लिये ऐसी पस्त कर दी कि तुम उसके ऊपर चलो और और उसकी उगाई हुई रोज़ी खाओ।

इन आयतों में इन्सान को ज़मीन से फ़ायदा उठाने और उससे रोज़ी का सामान हासिल करने की तर्गीब (प्रेरणा) भी है ज़मीन से फ़ायदा उठाने के इस अमल को फुक़हा ने मुज़ारिअत, मुसाक़ात और मुख़ाबरत की शब्दावलियों में बयान किया है।

ज़िराअत का शाब्दिक परिचयः यह 'ज़रआ' शब्द से बना है यानी बीज डालना, जिसका मतलब ज़मीन में बीज बोना है। इम्बिात (यानी उगाना) इस अर्थ में इस शब्द का संबंध अल्लाह तआला की पाक ज़ात की तरफ़ ही किया जा सकता है, चुनाचे इस अर्थ में किसी शख़्स को "ज़रअतु" कहना हदीस में मना फ़रमाया गया है बल्कि "हरस्तु" कहना चाहिये जिस का अर्थ है "मैंने जोता बोया" कुरआन में कहा गया है -

اَفَرَءَيْتُم مَا تَحْرُثُوْنَ. ءَ اَنْتُمْ تَزْرَعُوْنَهُ اَمْ نَحْنُ الزَّارِعُوْنَ. (سورہ واقعہ، آیت ٦٤)

"अफ़रऐतुम मा तहरूसून, अ अन्तुम तज़रऊनहू अम नहनुज़्ज़ारिऊन" (सूरह वाक़िआ, 64)

अनुवाद: तुम्हारा क्या ख़याल है जो खेती तुम करते हो क्या तुम उसे उगाते हो या उगाने वाले हम हैं।

अल्लाह ने खेती के काम यानी बीज बोने को बन्दों की तरफ़ संबंधित किया है, रहा उसका उगाना तो बन्दे उसका दावा नहीं कर सकते, वह सिर्फ़ बीज डालते हैं, उगाना उनके बस में हर्गिज़ नहीं, अगर उग भी आये तो अल्लाह ने फ़रमाया لَوْ نَشَاءُ لَجَعَلْنَاهُ حُطَامًا "लौ नशाउ लजअलनाहु हुतामा" (यानी हम चाहें तो उसे बरबाद कर के रख देंगे)।

फिर भी "ज़रआ़" (खेती) की निसबत (संबंध) इन्सान की तरफ़ इन अर्थों में जाइज़ है कि वह ज़मीन को जोते, उसमें बीज डाले और आम साधनों के मुताबिक़ उसकी देख भाल करे, रहा उसका उगाना तो आज साइंस का मामूली छात्र जानता है कि ज़ाहिर में दो आदमी ज़मीन में मेहनत करते जोतते बोते खाद देते और पानी पहुंचाते नज़र आते हैं, मगर अल्लाह तआला अपनी छुपी हुई फ़ौज यानी छोटे-छोटे कीड़ों (बेक्टेरियाज़) के ज़रिये कई आदमियों की ताक़त पहुंचाता है तब पौधे उग पाते हैं और हम ग़ल्ला और फल हासिल करते हैं, अगर यह छुपी हुई फ़ौज काम छोड़ दे तो इन्सान की सारी मेहनत बेकार जाये फिर यह ज़मीनी मअदनियात (खनिज पदार्थ) को लिये हुये समुद्र का खारा पानी भाप में तबदील होकर खेती पर न बरसे तो सूखी हुई ज़मीन पर कुछ न उगे।

اَنَّا نَسُوْقُ الْمَاءَ اِلَى الْاَرْضِ الْجُرُزِ فَنُخْرِجُ بِهٖ زَرْعًا تَاكُلُ مِنْهُ اَنْعَامُهُمْ وَاَنْفُسُهُمْ ط اَفَلَا يُبْصِرُوْنَ. (سورہ سجدہ، آیت ۲۷)

"अन्ना नसूकुलमाआ इलल अर्ज़िलजुरूज़ि फ़नुख़िरजु बिही ज़रअन ताकुलु मिनहु अनआमुहुम व अनफ़ुसुहुम, अफ़ला युब्सिरून"
(सूरह सजदा आयत 27)

अनुवादः हम सूखी हुई ज़मीन पर पानी बरसाते फिर उससे खेती उगाते हैं जिसको तुम्हारे जानवर भी खाते हैं और तुम भी खाते हो क्या वह देखते नहीं रहते हैं।

जब यह सब कुछ ख़ुदा की पैदा करने की कुव्वत का नतीजा है तो उन तमाम हुदूद की पाबन्दी इन्सान पर ज़रूरी हो जाती है जो ख़ुदा की तरफ़ से लागू की जाये।

اِنَّا جَعَلْنَا مَا عَلَى الْاَرْضِ زِيْنَةً لَّهَا لِنَبْلُوَهُمْ اَيُّهُمْ اَحْسَنُ عَمَلًا.
(سورۂ کہف، آیت۔۷)

"इन्ना जअलना मा अलल अर्ज़ि ज़ीनतल्लहा लिनबलुवहुम अय्युहुम अहसनु अमला" (सूरह कहफ़, आयत, 7)

अनुवादः हम ने ज़मीन पर पैदा होने वाली चीज़ों को उसके लिये ख़ूबसूरती का सामान बना दिया ताकि हम लोगों को आज़माएं कि कौन अच्छे अमल करता है।

कुरआन ने उन चीज़ो का ज़िक्र कर के जिनका वारिस इन्सान बन जाता है कहा है -

وَمَنْ يَّعْصِ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَيَتَعَدَّ حُدُوْدَهٗ يُدْخِلْهُ نَارًا خَالِدًا فِيْهَا. (سورۂ نساء، آیت۱۳)

"वमय्यंअसिल्लाहा व रसूलहू व यतअद्दा हुदूदहू युदख़िलहु नारन ख़ालिदन फ़ीहा" (सूरह निसा, आयत 13)

अनुवादः जो अल्लाह और उस रसूल की नाफ़रमानी और उसके मुक़र्रर किये हुए हुदूद (सीमा) से आगे जायेगा अल्लाह उसे आग में डालेगा जिसमें वह हमेशा रहेगा।

ज़मीन की पैदावार को काटते वक़्त यह हुक्म है कि -

وَاٰتُوْحَقَّهٗ یَوْمَ حَصَادِهٖ وَلَا تُسْرِفُوْا ۚ اِنَّهٗ لَا یُحِبُّ الْمُسْرِفِیْنَ. (سورہ انعام، آیت ۱۴۱)

"वआतू हक़्क़हू यौमा हसादिही वला तुसरिफ़ू, इन्नहू ला युहिब्बुल मुस्रिफ़ीन'' (सूरह अनआम, 141)

अनुवाद: उसका हक़ कटाई के दिन दे दो और फ़ुज़ूलख़र्ची न करो, अल्लाह तआला फ़ुज़ूलख़र्ची करने वालों को पसन्द नहीं करता।

''हक़'' में हर तरह का वह इन्सानी हक़ आ गया जो ख़ुदा ने इन्सान पर मुक़र्रर कर दिया है और फ़ुज़ूलख़र्ची से रोकने में वह तमाम ज़्यादतियां, हक़ मारना, बेएहतियातियाँ आ गईं जो ज़मीन के सिलसिले में आदमी करता है।

नबी (स.अ.व.) के फ़रमान में विस्तार के साथ हुकूक़ की जानकारी और वह हिदायतें मिलती हैं जिन से ज़मीन को जाइज़ तरीक़े से इस्तेमाल में लाने का हुक्म मालूम हो सकता है, आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया -

مَنْ اَخَذَ شِبْرًا مِنَ الْاَرْضِ ظُلْمًا فَاِنَّهٗ یُطَوَّقُهٗ یَوْمَ الْقِیَامَةِ مِنْ سَبْعِ اَرْضِیْنَ .

''मन अख़ज़ा शिबरन मिनल-अर्ज़ि ज़ुल्मन फ़इन्नहू युतव्वक़ुहू यौमल क़ियामति मिन सबइ अर्ज़ीना''

अनुवाद: जिसने एक बालिश्त ज़मीन भी ज़ुल्म से दबाई अल्लाह क़यामत के दिन उसके गले में ज़िल्लत (बेइज़्ज़ती) का तौक़ डालेगा जो उस ज़मीन से सात गुना बोझल होगा।

ज़ुल्म से कोई ज़मीन हासिल करने की कई सूरतें हो सकती हैं, ज़बरदस्ती किसी की ज़मीन का मालिक बन जाना, धोखा दे कर या झूठे मुक़दमे के ज़रिए ज़मीन को अपने नाम करा लेना, क़र्ज़ लेने

वाले पर दबाव डाल कर उसकी ज़मीन कम क़ीमत पर अपने नाम लिखवा लेना वग़ैरा यानी हक़ मारने की तमाम शक्लें ज़ुल्म में दाख़िल हैं।

खेती करने के तरीक़े: खेती करने की दो सूरतें हैं, एक यह कि जो जाइज़ तरीक़े से उसने ज़मीन हासिल की है या विरासत में मिली है उसको अपने हाथ से जोते बोये, दूसरी यह कि वह किसी मजबूरी या मशग़ूलियत की वजह से ख़ुद यह काम न कर सके तो दूसरों से मदद ले, इसकी तीन सूरतें हैं (अपना खेत किसी को बटाई पर दे यानी ज़मीन और बीज वग़ैरा उसका हो और मेहनत हल बैल दूसरे शख़्स के और उससे जो कुछ पैदा हो दोनों बाँट लें (2) नक़द लगान तै करके ज़मीन किसी को दी जाये ज़मीन का मालिक मुक़र्रर किया हुआ लगान वसूल करता रहे और लगान देने वाला पैदावार से फ़ायादा उठाता रहे (3) ज़मीन, बीज, हल, बैल सब एक आदमी के हों और वह आदमी दूसरों से मज़दूरी पर काम ले, मज़दूरों को मज़दूरी देता रहे और जो कुछ पैदा हो वह ख़ुद ले।

अपने हाथ से खेती करने के फ़ायदे: ग़िज़ा इन्सान की बुनियादी ज़रूरत है इस लिये जो लोग अपने हाथ से खेती कर के अपने बाल बच्चों को पालते हैं और उनकी ज़रूरत से जो बच जाता है उसे ख़ुदा के दूसरे बन्दों के हाथ बेच देते हैं, वे इन्सानी ज़िन्दगी के लिये बड़ी सेवाएँ करते हैं तो जो शख़्स अपनी ज़मीन पर तमाम हुदूद की पाबन्दी करते हुए खेती करता है या बाग़ लगाता है तो अपने लिये हलाल रोज़ी कमाता है और दूसरी मख़लूक़ अगर उसमें से कुछ खा ले तो उस शख़्स को सदक़ा (दान) का सवाब मिलता है, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया है -

مَا مِنْ مُسْلِمٍ يَغْرِسُ غَرْسًا اَوْ يَزْرَعُ زَرْعًا فَيَاكُلُ مِنْهُ طَيْرٌ اَوْ اِنْسَانٌ اَوْبَهِيْمَةٌ اِلَّا كَانَ لَهُ بِهٖ صَدَقَةٌ.

"मा मिन मुस्लिमिन यग़रिसु ग़रसन अउ यज़रउ ज़रअन फ़याकुलु मिनहु तैरुन अउ इन्सानुन अउ बहीमतुन इल्ला काना लहू बिही सदक़तुन"

अनुवादः कोई मुसलमान जो पेड़ लगाये या खेती करे अगर उसमें से कोई पंछी या इन्सान या जानवर कुछ खा पी लेता है तो उसके लिये यह सदक़ा (दान) हो जाएगा।

ज़मीन को उजरत (किराये) पर देनाः अगर आदमी किसी वजह से खुद खेती बाड़ी नहीं करता या उसमें यह काम करने की योग्यता नहीं है तो उसे हक़ है कि वह नक़द लगान मुक़र्रर करके अपनी ज़मीन दूसरों को दे दे, इस सूरत में मालिक लगान पायेगा और खेती करने वाला पूरी पैदावार का मालिक होगा, इसको शरीअत में इजार-ए-अर्ज़ कहते हैं, यह सूरत तमाम फ़ुक़हा के नज़दीक जाइज़ है।

मुज़ारअतः अगर वह लगान पर नहीं देता या दूसरे लोग ज़मीन को लगान पर नहीं लेते तो दूसरी सूरत यह है कि बटाई पर खेती करने के लिये दे दे यानी ग़ल्ले की पैदावार में आधा हिस्सा ज़मीन के मालिक का और आधा खेती करने वाले का या कुछ कम व ज़्यादा, इसको मुज़ारअत कहते हैं। एक दूसरी इस्तिलाह में 'मुख़ाबरह' भी इसी माने में है यानी खेती बाड़ी का मुआहदा जो पैदावार के एक हिस्से की उजरत पर किया जाये। मुज़ारअत का मुआमला उजरत और किराया जैसा होता है। मगर नतीजे के एतेबार से यह शिर्कत का मुआमला है। जिस तरह उजरत और किराये के मुआमले में किसी चीज़ का फ़ायदा बदले में कुछ दे कर हासिल किया जाता है उसी तरह मुज़ारअत में एक खेती करने वाले को ज़मीन का मालिक किसी फ़ायदे की उम्मीद रखते हुए अपनी ज़मीन हवाले करता है लेकिन इस मुआमले के नतीजे में जो पैदावार होती है उनको उन्हीं उसूलों पर बाँटा जाता है जिन पर शिराकती (पार्टनरशिप) कारोबार के

फ़ायदे को बाँटा जाता है इसलिये मुज़ारअत के मुआमले में उजरत और शिर्कत दोनों के शराइत व पाबन्दी का लिहाज़ ज़रूरी है।

मुज़ारअत का ख़ास हुक्मः जैसा कि अभी बयान किया गया कि मुज़ारअत शुरू में उजरत और किराये का मुआमला लेकिन नतीजे के तौर पर शिर्कत का मुआमला है, इस लिये इसका ख़ास हुक्म यह है कि पैदावार को हिस्से के एतबार से बांटा जाये यानी पैदावार का चौथाई (1/4) या आधा (1/2) या दो तिहाई (2/3) फ़लाँ को मिलेगा और बाक़ी फ़लां को, इस तरह न हो कि इतने मन पैदावार या ज़मीन के किसी ख़ास हिस्से की पैदावार मेरी होगी और बाक़ी जो कुछ बचे वह तुम्हारी होगी, दोनों सूरतों में बड़ा फ़र्क़ है, मात्रा मुक़र्रर कर देने की सूरत में अगर उतना ही ग़ल्ला पैदा हुआ जो ज़मीन के मालिक ने अपने लिये तै किया था तो वह तो फ़ायदे में रहेगा और खेती करने वाला घाटे में, लेकिन अगर हिस्से के एतेबार से पैदावार बाँटी जायेगी तो कम या ज़्यादा जितना भी पैदा होगा दोनों को अपने हिस्से के मुताबिक़ मिलेगा, अगर फ़ायदा होगा तो दोनों को और नुक़सान होगा तो दोनों को। इस हुक्म के सही होने की बुनियाद सही हदीसों पर है, बुख़ारी और मुस्लिम में हज़रत इब्ने उमर (र.त.अ.) की रिवायत मौजूद है वह कहते हैं कि आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने ज़मीन से हासिल होने वाले आधे फल या पैदावार के बदले पर मुआमला तै किया था।

मुज़ारअत के अरकान व शर्तेः इमाम अबू हनीफ़ा (रह०) के नज़दीक मुज़ारअत के अरकान वे काम हैं जिन से मालिक और खेती करने वाले के बीच समझौता होता है, ये अरकान हैं ईजाब व कुबूल। अगर ज़मीन का मालिक खेती करने वाले से कहे कि मैं यह ज़मीन तुमको देता हूँ और तुम पैदावार के आधे या तिहाई पर काम करो और काश्तकार (किसान) कहे कि मुझे मंज़ूर है तो समझौता हो गया। ज़ाहिर है कि ऊपर ज़िक्र की गई बातों में ये चीज़ें शामिल हैं,

खेती करने वाले की मेहनत, खेती के क़ाबिल ज़मीन, खेती करने के आलात और वह बीज जो ज़मीन में डाला जाये, इसी लिये कुछ लोगों ने मुज़ारअत के अरकान की संख्या चार बताई है, ज़मीन, काश्तकारी, बीज और खेती करने के आलात।

शर्तों में सब से पहली शर्त यह है कि मुआमला करने वाले दोनों अक़्लमन्द हों, अपनी मर्ज़ी से मुआमला कर सकने के क़ाबिल हों यानी, नफ़ा नुक़सान का शुऊर (समझबूझ) रखते हों, फ़ातिरुल अक़्ल (मंदबुद्धि) और बेशऊर न हों। बालिग़ होना ज़रूरी नहीं है।

दूसरी शर्त यह हैं कि जो ज़मीन दी जाये वह खेती करने के क़ाबिल हो, ऊसर या बन्जर ज़मीन जिसमें खेती नहीं की जा सकती उस में अक़्द-ए-मुज़ारअत सही नहीं, और

ज़मीन के जिस रक़बे के बारे में खेती का समझौता हुआ है वह मालूम हो यानी उसके हुदूदे अरबआ (चारों तरफ़) बता दिये गये हों वर्ना मुआमला सही न होगा, इसी तरह ज़मीन के एक हिस्से पर खेती करने वाले से समझौता करते वक़्त अगर यह कहा कि ज़मीन के इतने हिस्से पर गेहूं बोना और इतने हिस्से पर चना या कोई और चीज़, तब भी मुआमला सही न होगा जब तक ज़मीन की हदबंदी न कर दी जाये।

तीसरी शर्त मालिक और खेती करने वाले दोनों को यह तै करना कि किसको पैदावार का कितना हिस्सा मिलेगा, अगर दोनों के हिस्से का ज़िक्र न हो तो एक के हिस्सा का ज़रूर ज़िक्र कर दिया जाये, किसी को यह जाइज़ नहीं है कि अपने लिये ज़मीन के किसी हिस्से को मख़सूस कर के यह कहे कि इस की पैदावार मेरी होगी। और न वज़न व पैमाने की मिक़दार (मात्रा) मुक़र्रर करना जाइज़ है।

चौथी शर्त यह है कि ज़मीन हल बैल और बीज के बारे में तै होना चाहिये कि किस की कौन सी चीज़ होगी।

यानी आया (1) मालिक सिर्फ़ ज़मीन देगा और बाक़ी तमाम चीज़ें हल बैल, बीज और मेहनत खेती करने वाले की होगी। या

(2) ज़मीन, हल बैल और बीज सब चीज़ें एक शख़्स की हों और सिर्फ़ मेहनत खेती करने वाले की हो। या

(3) ज़मीन और बीज एक आदमी का हो और हल बैल और मेहनत दूसरे आदमी की। ये तीनों सूरतें सबके नज़दीक जाइज़ हैं। या

(4) ज़मीन और हल बैल एक आदमी के हों और बीज और मेहनत दूसरे की। या

(5) बीज और हल बैल एक का हो और मेहनत और ज़मीन दूसरे की। या

(6) बीज एक आदमी का हो और तमाम चीज़ें दूसरे की हों, आख़िरी दोनों सूरतें सबके नज़दीक नाजाइज़ हैं जबकि चौथी सूरत को इमाम अबू यूसुफ़ जाइज़ कहते हैं, उनकी राय इस लिये भी वज़नी है कि क़ाज़ी होने की वजह से इस क़िस्म के मुआमलात उन के सामने आते रहते थे।

पाँचवीं शर्त यह है कि ज़मीन पर खेती करने की मुद्दत खेती करने वाले को बता दी जाये कि इतने महीनों या साल के लिये है।

छठी शर्त यह है कि जो चीज़ बोने के लिये ज़मीन दी जा रही है वह बता दी जाये या खेती करने वाला यह बता दे कि गेहूँ बोयेगा या तरकारी या तम्बाकू। क्योंकि हो सकता है कि ज़मीन का मालिक किसी चीज़ को बोना अपनी ज़मीन में पसन्द न करता हो और बाद में इख़्तिलाफ़ हो, फिर हिस्सा लगाने में भी जिन्स की सराहत कर देने से मदद मिलती है, हाँ अगर ज़मीन का मालिक यह इजाज़त दे दे कि जिस चीज़ की चाहो खेती करो तो खेती करने वाले को इख़्तियार है जो चीज़ चाहे बोये।

सातवीं शर्त यह है कि ज़मीन को ख़ाली कर के खेती करने वाले के हवाले कर दिया जाये।

आठवीं शर्त यह है कि बटाई पर देने के बाद तै किये हुए हिस्से के मुताबिक़ पैदावार में शरीक रहना है।

फ़स्ल कटने के बाद अगर कोई फ़रीक़ (पक्ष) उसमें अदल बदल (परिवर्तन) करना चाहेगा तो कुबूल नहीं किया जायेगा।

इजारा-ए-अर्ज़ (ज़मीन) की शर्तें: 1. नक़द लगान पर खेत देने के लिये उन तमाम शर्तों का ख़याल रखना होगा जो किसी चीज़ के किराये पर देने की हैं, इसके अलावा खेती करने की पांचवीं और आठवीं शर्त के अलावा वह तमाम शर्तें पाई जानी चाहिएँ। खेती करने की तीसरी शर्त मालिक व खेती करने वाले के पैदावार में हिस्से से मुतअल्लिक़ है। इजारा-ए-अर्ज़ में हिस्से के बजाए लगान तै होगा। लगान का निश्चित होना ज़मीन और बोई जाने वाली चीज़ की नौईयत (प्रकार) पर निर्भर है, इस लिये इन दोनों का वज़ाहत से ज़िक्र करना चाहिये कि कौन सी ज़मीन किस चीज़ को बोने के लिये खेती करने वाले को लगान पर दी जा रही है। मकई, बाजरा, तम्बाकू और आलू की काश्त में फ़ायदे के लिहाज़ से काफ़ी फ़र्क़ होता है इस लिये बोई जाने वाली चीज़ की सराहत ज़रूरी है ताकि बाद में इख़्तिलाफ़ पैदा न हो। अगर ज़मीन का मालिक पूरी इजाज़त दे दे कि जो चाहो बोओ तो खेती करने वाले को इख़्तियार है चाहे आलू बोये चाहे तम्बाकू या ज़ाफ़रान। इसी तरह ज़मीन या खेत की सराहत भी ज़रूरी है ताकि लगान क़ायम करने में धोखा न हो जो बाद को इख़्तिलाफ़ का सबब बने।

2. लगान पर ज़मीन लेने वाले को यहं इख़्तियार है कि साल में जितनी फ़सलें चाहे बोये और काटे हाँ अगर ज़मीन के मालिक ने यह क़ैद लगा दी हो कि सिर्फ़ एक फ़स्ल बोने के लिये ज़मीन दी

जा रही है तो उसी सूरत में क़ानूनी तौर पर एक से ज़्यादा फ़स्ल की काश्त को रोकने का हक़ हासिल है, मगर अख़लाक़न ऐसा करना अच्छा नहीं है।

मुसाक़ातः खजूर के पेड़ों, अंगूर की बेलों वग़ैरा की बेहतरी और देख भाल के लिये उसकी पैदावार के मुक़र्रर हिस्से के मुआवज़े में काम करने को मुसाक़ात कहते हैं।

मुसाक़ात का अर्थ और परिभाषाः "सक़िय्युन" का अर्थ पानी देने के हैं मुसाक़ात में खजूर के पेड़ वग़ैरा में पानी देने के अलावा और दो बातें भी शामिल हैं जैसे पेड़ों की सफ़ाई उनकी काट छांट और देख भाल, इन कामों में पानी देना सबसे अहम काम है, इस लिये इसकी वजहे तसमिया (नामकरण) में दूसरी बातों को छोड़ दिया गया है। अगर कोई शख़्स अपना बाग़ या पेड़ किसी शख़्स को इस शर्त पर दे कि तुम इस बाग़ या पेड़ों की पूरी तरह सेवा करो, इन्हें पानी दो और हर तरह के नुक़सान पहुंचाने वाले जानवरों और कीड़ों वग़ैरा से सुरक्षित रखो, फिर जो फल होगा उसे दोनों बाँट लेंगे तो इसको शरीअत में मुसाक़ात कहते हैं।

मुसाक़ात की शर्तेंः मुसाक़ात की शर्तों और मुज़ारअत की शर्तों में दो तीन बातों की वजह से फ़र्क़ पैदा हो जाता है उनके अलावा सारी शर्तें एक जैसी हैं।

1. पहली बात यह कि मुज़ारअत में बोने और ग़ल्ला पैदा होने की शर्त पर ज़मीन देना जाइज़ है जबकि मुसाक़ात का मुआमला लगे लगाये बाग़ या पेड़ों में जाइज़ है। बाग़ या पेड़ लगाने की शर्त पर मुसाक़ात का मुआमला जाइज़ नहीं।

2. दूसरी बात यह कि मुसाक़ात का मुआमला हो जाने के बाद बड़ी मजबूरी को छोड़ कर किसी को हक़ नहीं है कि वह अलग हो जाये, अगर कोई फ़रीक़ अलग होगा तो क़ानूनन उसे वादे को पूरा

करने पर मजबूर किया जायेगा, मगर मुज़ारअत जिसमें सिर्फ़ वह फ़रीक़ समझौते से अलग हो सकता है जिसने बीज दिया है लेकिन दूसरा फ़रीक़ अगर अलग होगा तो उसको क़ानूनी तौर पर समझौते को पूरा करने पर मजबूर किया जायेगा। बीज देने वाले फ़रीक़ को इस लिये इजाज़त है कि अलग होने से ख़ुद उसके बीज का नुक़सान होगा। इस लिये क़ानून का सहारा लेने की ज़रूरत नहीं है। लेकिन दूसरा शख़्स अगर अलग होता है तो बीज वाले का नुक़सान है इस लिये नुक़सान के पूरा करने के लिये क़ानून का सहारा लेना पड़ेगा। यही सूरत मुसाक़ात में है कि एक के अलग होने में दूसरे को नुक़सान पहुंचता है यानी एक की मेहनत बरबाद होती है और दूसरे का माल इस लिये दोनों को इस की इजाज़त नहीं है कि बिला वजह किसी को नुक़सान पहुंचाये।

मुज़ारअत व मुसाक़ात और इजारा-ए-अर्ज़ (ज़मीन) के कुछ ज़रूरी मसाइल:

1. काश्त के लिये अगर जिन्स की वज़ाहत नहीं की गई और न ज़मीन के मालिक ने खेती करने वाले को यह इजाज़त दी कि जिस चीज़ की चाहो काश्त करो तो यह मुज़ारअत या इजारा-ए-अर्ज़ का मुआमला ख़त्म समझा जाएगा। लेकिन अगर मुआमला फ़स्ख़ करने से पहले इस की वज़ाहत हो गई तो मुआमला सही हो जायेगा।

2. अगर लगान पर ज़मीन दी तो जिस मुद्दत के लिये दी है उसके अन्दर लगान बढ़ाने का इख़्तियार न होगा चाहे काश्तकार कई फ़सलें बोये और काटे। मुद्दत ख़त्म होने के बाद अगर चाहे तो लगान बढ़ा सकता है।

3. जिस मुद्दत के लिये ज़मीन दी गई है अगर उस मुद्दत में फ़स्ल तैयार न हो पाये तो फ़स्ल कटने तक मालिक को ज़मीन ख़ाली कराने का हक़ न होगा मगर जितनी मुद्दत ज़्यादा काश्तकार के पास ज़मीन रहेगी उस का लगान और ज़्यादा देना पड़ेगा जिसका अन्दाज़ा तै किये हुए लगान के मुताबिक़ किया जायेगा।

4. मुज़ारअत, मुसाक़ात या इजारा-ए-अर्ज़ में अगर ज़मीन के मालिक पर भी काम करने की शर्त लगा दी तो मुआमला फ़ासिद हो जायेगा। सही यह है कि मेहनत खेती करने वाले की होगी, वह ज़मीन के मालिक से मेहनत नहीं ले सकता। हाँ अगर वह ख़ुद करे तो उस को इख़्तियार है।

5. फ़स्ल की कटाई, ढुलाई और दानों से भूसा अलग करने की ज़िम्मेदारी ज़मीन के मालिक पर डालना सही नहीं है। उसका संबंध काश्तकार से है इस लिये उसका ज़िक्र काश्तकार की ज़िम्मेदारियों में करना सही है।

6. ग़ल्ला बंट जाने के बाद हर फ़रीक़ अपने हिस्से को ख़ुद उठा ले जाने का ज़िम्मेदार है, अगर ज़मीन का मालिक दूसरे फ़रीक़ से यह काम लेगा तो मज़दूरी देना पड़ेगी।

7. यह शर्त कि बीज के बराबर ग़ल्ला ले लेने के बाद बाक़ी ग़ल्ला बाँटा जायेगा सही नहीं है, क्योंकि हो सकता है कि ग़ल्ला उतना ही पैदा हो जितना बीज डाला गया है, इस लिये दूसरे को तो बिल्कुल नहीं मिलेगा, यह बात शिर्कत के उसूल के ख़िलाफ़ है।

8. मुज़ारअत के मुआहदे में दी गई ज़मीन का कोई हिस्सा, खेत का मालिक अपने लिये ख़ास नहीं कर सकता जैसे यह कहना कि खेत के फ़ुलां टुकड़े में जो पैदा होगा वह मेरा और दूसरे टुकड़े में जो पैदा हो वह तुम्हारा, या गेहूं हमारा और जौ तुम्हारे, या बोई हुई तरकारियों में लौकी हमारी और बाक़ी तरकारियाँ तुम्हारी, ये सब सूरतें नाजाइज़ हैं।

इसी तरह मुसाक़ात के मुआमले में यह कहना कि बाग के फ़लाँ पेड़ जैसे समरे बहिश्त या दसहरी का फल हमारा होगा या फ़लाँ चीज़ की फ़स्ल हमारी होगी बाक़ी सब चीज़ों की फ़स्ल तुम्हारी, तो यह शर्त लगा देने से मुआमला नाजाइज़ हो जायेगा।

9. ग़ल्ले का भूसा भी दोनों फ़रीक़ों में बांटा जायेगा, अगर किसी ने यह शर्त लगाई कि कुल भूसा हम लेंगे या ग़ल्ला एक का और भूसा दूसरे का तो यह समझौता सही नहीं होगा और ग़लत माना जायेगा, हां अगर वह शख़्स जिस ने बीज दिया है भूसा लेने की शर्त लगा दे तो शर्त सही होगी क्योंकि भूसा ज़िमनी (अतिरिक्त) नतीजा है बीज का, इस लिये फुक़हा ने इजाज़त दी है कि वह यह शर्त लगा सकता है लेकिन अगर मुआमला करते वक़्त इस शर्त को पेश नहीं किया गया था तो फिर ग़ल्ले को बांटने के मुताबिक़ भूसे को भी बांटा जाएगा।

10. फ़र्ज़ कर लो कि मुज़ारअत का मुआमला हो चुकने के बाद कुछ पैदावार नहीं हुई तो मुज़ारेअ (काश्तकार) को कुछ न मिलेगा लेकिन अगर मालिक ने ज़मीन, बीज और हल बैल दे कर ज़बरदस्ती काश्तकार से काम लिया और शर्त यह रखी कि जो पैदावार होगी उसमें इतना हिस्सा तुमको देंगे तो कुछ पैदा न होने की सूरत में उतने दिन की मज़दूरी मालिक को देनी होगी।

11. मुज़ारअत का समझौता हो जाने के बाद काश्तकार ने ज़मीन पर मेहनत की यानी दो एक बार हल चला चुका, घास वग़ैरा साफ़ कर के ज़मीन को खाद दे चुका, मगर अभी तक उसने बोया नहीं है तो मालिक को मुआमला तोड़ने का हक़ है, अगर वह मुआमला तोड़ता है तो उतने दिन की मेहनत की मज़दूरी उसको देना पड़ेगी और अगर काश्तकार ने उस पर कुछ ख़र्च किया है तो वह वापस करना पड़ेगा। (हिदाया)

12. अगर ज़मीन के मालिक ने अपना खेत जोत और बो कर किसी के हवाले कर दिया कि वह उसमें पानी चलाये और देख भाल करे जो कुछ पैदा होगा उसका चौथाई या छटा हिस्सा उसे मिलेगा तो यह सही है, इसी तरह अगर काश्तकार किसी दूसरे को उसमें शरीक करना चाहे तो अगर बीज ज़मीन के मालिक का है तो

इसकी इजाज़त उससे लेना ज़रूरी है, लेकिन अगर बीज काश्तकार का है या वह इस शर्त पर शरीक कर रहा है कि अपने हिस्से से इतना ग़ल्ला उसे देगा तो इन दोनों सूरतों में दूसरे को शरीक कर लेने का हक़ है।

13. यह क़ानून कि अगर काश्तकार इतने साल तक किसी ज़मीन में काम करता रहे तो ज़मीन पर उसका हक़ हो जाता है, सही नहीं है। किसी का खेत या बाग़ वग़ैरा काश्तकार के पास किराये, लगान या बटाई पर कितने दिन भी रहे इस्लामी शरीअत के हिसाब से वह उसका मालिक नहीं हो सकता, अगर कोई ऐसा करे तो यह अमल हराम होगा और जुल्म व ग़ज़ब क़रार दिया जायेगा।

14. जब खेती पक कर तैयार हो गई हो, बाग़ के फलों का बढ़ना रुक गया हो और पकने लगे हों उस वक़्त मुज़ारअत या मुसाक़ात पर देना सही नहीं है। सख़्त ज़रूरत के बग़ैर बटाई पर न देना चाहिये। जब तक बालियाँ हरी हों, फल की गुठलियाँ सख़्त न हुई हों, नर्म हों उस वक़्त मुज़ारअत या मुसाक़ात पर खेत या बाग़ को देना सही होगा।

मुज़ारअत का मुआमला फ़स्ख़ हो जाना: 1. जो शर्तें इजारा-ए-अर्ज़, मुज़ारअत और मुसाक़ात के सही होने की बयान की जा चुकी हैं अगर उनमें से कोई न पाई जायेगी तो मुआमला फ़ासिद और फ़स्ख़ (ख़त्म) समझा जायेगा।

2. अगर ज़मीन के मालिक और काश्त करने वाले में से किसी की मृत्यु हो जाये तो मुज़ारअत या मुसाक़ात वग़ैरा का मुआमला ख़ुद बख़ुद फ़स्ख़ हो जाएगा। हाँ अगर खेती तैयार न हुई हो या बाग़ के फल पके न हों और ज़मीन के मालिक की मृत्यु हो जाए तो काश्तकार को यह हक़ होगा कि तैयार होने तक वह फ़स्ल की देख भाल करे और कटने के बाद अपना हिस्सा उसमें से ले ले। ज़मीन के मालिक के वारिसीन को रोकने का हक़ न होगा। इसी तरह

काश्तकार के वारिसों को यह हक़ होगा कि काश्तकार की मृत्यु पर खेती या फल तैयार होने तक उसमें मेहनत करें और जो हिस्सा काश्तकार का मुक़र्रर था वह ले लें, उन्हें उस हक़ से महरूम करने का हक़ ज़मीन के मालिक को नहीं है। हाँ अगर काश्तकार या उस के वारिस काम करना छोड़ दें तो फिर उनका हक़ ख़त्म हो जाएगा।

मालिक या काश्तकार मुआमले को फ़स्ख़ (ख़त्म) कर सकते हैं: मुज़ारअत, मुसाक़ात और इजारा-ए-अर्ज़ तीनों मुआमलात ऐसे हैं कि जब एक बार तै पा जाएँ तो काश्तकार या मालिक किसी को मुआमला ख़त्म न करना चाहिये जब तक कोई बड़ी मजबूरी पेश न आ जाये जिसकी कुछ सूरतें नीचे दी जा रही हैं -

1. मिसाल के तौरपर ज़मीन का मालिक क़र्ज़दार था, और तुरन्त क़र्ज़ अदा करने की ज़रूरत पेश आ गई, वह अपनी ज़मीन को बटाई पर या बाग़ को निगरानी के लिये दे चुका है लेकिन अभी खेत में बीज नहीं पड़ा और बाग़ में फल नहीं आया था कि ज़मीन को बेच कर कर्ज़ अदा करने की ज़रूरत पेश आ गई तो वह मुआमले को ख़त्म कर के अपनी ज़मीन बेच सकता है लेकिन अगर काश्तकार ने बीज डाल दिया है या बाग़ में फल आ चुके हैं तो अब दो सूरतें हैं, अगर खेती या फल तैयार हो चुके हों तो खेती काट कर और फल तोड़ कर ज़मीन को या बाग़ को बेच सकता है लेकिन अगर खेती पकी नहीं है या फल ज़्यादा कच्चे हैं तो उस वक़्त तक मुआमला तोड़ने और बेचने का हक़ नहीं जब तक दोनों चीज़ें पक न जाएँ, क़र्ज़ख़्वाहों को खेती कटने और फल पकने का प्रतीक्षा करना पड़ेगा, वे न करेंगे तो क़ानूनन उन्हें इस पर मजबूर किया जा सकता है।

2. अगर काश्तकार इतना ज़्यादा बीमार पड़ जाए कि खेती का काम न कर सके या बाग़ की देख भाल न कर सके तो उसको हक़ होगा कि वह मुआमला तोड़ दे, और अगर दूसरे शख़्स के ज़रिये काम लेकर मुआमले को फ़स्ख़ न करे तो उसका भी उसको हक़ है।

3. अगर काश्तकार को कोई अच्छा कमाई का ज़रिया मिल रहा है जिसको अपनाने के लिये खेती बाड़ी छोड़ना चाहता है तो उसको मुआमला तोड़ने का हक़ है मगर जबकि यह सूरत अपनाने पर वह मआशी हैसियत से मजबूर हो यानी उसकी गुज़र बसर खेती बाड़ी से न हो पाती हो तो वह ऐसा कर सकता है वर्ना नहीं। (बदाएउस्सनाए)

फ़स्ख़ होने की सूरत में किसको क्या मिलेगा: मुज़ारअत व मुसाक़ात सही न होने की जितनी सूरतें बयान हुई हैं उनमें से कोई एक भी पाई जाएगी तो मुआमला फ़स्ख़ हो जाएगा। अब अगर मुआमला फ़स्ख़ उस वक़्त हुआ जब मुज़ारअत का काम शुरू हो चुका था यानी ग़ल्ला बोया जा चुका था या पेड़ में सिंचाई करने के बाद फूल या बौर आना शुरू हो गया था तो मेहनत करने वाले को दस्तूर के मुताबिक़ उतने दिन की मज़दूरी मिलेगी और अगर बीज काश्तकार ने दिया है तो ज़मीन के मालिक को दस्तूर के मुताबिक़ लगान देना पड़ेगा, लेकिन अगर अभी काम शुरू ही नहीं हुआ था तो किसी को कुछ न मिलेगा।

मिलकियत

किसी चीज़ का मालिक होने की हैसियतः किसी ज़मीन, जायदाद या माल पर किसी आदमी का मालिकाना हक़ तीन तरीक़ों से साबित होता है, जब इनमें से किसी ज़रिये से कोई शख़्स किसी चीज़ का मालिक हो जाए तो फिर उस हक़ को उसकी मर्ज़ी के बग़ैर न तो कोई शख़्स या हुकूमत छीन सकती है न उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ तसर्रुफ़ किया जा सकता है। लेकिन हुकूमत उस वक़्त दख़ल दे सकती है जब वह जायदाद और माल को फ़ुज़ूलख़र्ची में बरबाद करे या उसमें सलीक़े से रखने और बरतने की सलाहियत न हो या उसके हाथों किसी दूसरे शख़्स या समाज को नुक़सान पहुंच रहा हो।

किन सूरतों से मिलकियत क़ायम होती हैः

1. आम तौरपर कोई चीज़ किसी की मिलकियत में आने की तीन सूरतें हैं।

1. कोई शख़्स अपनी मिलकियत को राज़ी व ख़ुशी दूसरे आदमी को दे दे या उसका बदला लेकर यानी हिबा व इनआम के तौर पर दे दे या क़ीमत ले कर बेच दे तो वह दूसरा शख़्स उस चीज़ का मालिक हो जाएगा और अब पहला शख़्स उसमें कोई दख़लअन्दाज़ी नहीं कर सकता।

2. आदमी कोई चीज़ विरासत में पाए, उससे मिलकियत विरासत के ज़रिये क़ायम हो जाती है।

3. आदमी अपनी मेहनत और कोशिश से कोई मुबाह चीज़ जिसका कोई मालिक न हो हासिल कर ले तो उस पर भी मिलकियत क़ायम हो जाती है।

पहली सूरत का बयान हो चुका है और दूसरी सूरत का बयान विरासत के ज़िम्न में आया है, तीसरी सूरत की तफ़सील यहाँ बयान की जाती है।

मुबाह चीज़ें: अल्लाह तआला ने इस संसार में जो बेशुमार चीज़ें पैदा की हैं उनमें से जिन चीज़ों पर इन्सान ने मेहनत व मशक़्क़त कर के पहुंच हासिल कर ली है वे जाइज़ तौर से उसके क़ब्ज़े में हैं मगर अब भी ख़ुदा की बनाई हुई अनगिनत चीज़ें ऐसी हैं जो पूरी आबादी का मुशतरक सरमाया हैं और उनका इस्तेमाल हर फ़र्द के लिये उस वक़्त मुबाह हैं जब तक कोई उन पर मेहनत या पूंजी ख़र्च कर के अपने क़ब्ज़े में न ले ले। जैसे पानी, हवा, आग, रौशनी, अपने आप से उगने वाली घास, जंगलात और ज़मीन के अन्दर के ख़ज़ाने जिन्हें रुकाज़ कहा जाता है, आबादी से दूर, बेकार बंजर ज़मीनें जिन्हें मवात कहते हैं वग़ैरा वग़ैरा।

इन चीज़ों पर कैसे और कब मिलकियत क़ायम होती है: इनमें कुछ चीज़ें तो वे हैं जिन पर इस्लाम किसी की मिलकियत को नहीं मानता जैसे समुद्र, दरिया, हवा, फ़ज़ा और रौशनी इन्हें हर इन्सान इस्तेमाल कर सकता है अगर यह इस्तेमाल दूसरों को नुक़सान का सबब न हो। लेकिन अगर इसका इस्तेमाल दूसरों को नुक़सानदेह होगा तो फिर उससे रोका जाएगा जैसे समुद्र में हर हुकूमत अपना व्यापारी भेज सकती है, बहरी (समुद्री) बेड़ा रख सकती है, फ़ज़ा में भी हर हुकूमत अपना जहाज़ उड़ा सकती है।

हर शख़्स सूरज और चांद की रौशनी से फ़ायदा उठा सकता है। चाहे वह फ़ायदा सूरज से चलने वाला चूल्हा बना कर उठाये या किसी और तरह से, लेकिन समुद्र में जहाज़ रखने का मक़सद या फ़ज़ा में हवाई जहाज़ उड़ाने का मक़सद अगर किसी मुल्क पर हमला करना हो तो इस्लामी शरीअत के अनुसार उसे अत्याचार और

अपहरण क़रार दिया जाएगा और उस काम को दूसरे इन्सानों के लिए मुसीबत न बनने दिया जाएगा, इसी तरह अगर कोई शख़्स सूरज की किरनों से धूप चूल्हा तैयार करता है तो उसे इसका हक़ है, लेकिन अगर वह कोई ऐसी चीज़ तैयार करता है जो इन्सानी ज़िन्दगी के लिए हानिकारक हो तो उसे ज़रूर रोका जाएगा। मौजूदा ज़माने में भी अगर इस्लामी हुकूमत क़ायम होती तो एटमबम और हाईड्रोजन बम के तजर्बों पर ज़रूर पाबन्दी लगाता।

लेकिन अगर अपनी मेहनत से या पूंजी लगा कर कोई शख़्स दरिया के पानी या सूरज की रौशनी को अपने क़ब्ज़े में करके कोई नहर निकाल दे या रौशनी को सेलों में सुरक्षित कर ले तो उसकी मिलकियत इन चीज़ों पर क़ायम हो जाएगी, क्योंकि उसने मेहनत कर के और पूंजी लगा कर उन्हें बनाया है। अब वह नहर से सिंचाई करने पर उसका बिल ले सकता है सेलों को बेच सकता है इसी तरह की मुबाह चीज़ें मेहनत व पूंजी लगाने के बाद मिलकियत में आ जाती हैं कुछ चीज़ों का अलग अलग ज़िक्र किया जाता है –

पानी: पानी के ज़ख़ीरों को चार दर्जों में बाँटा जा सकता है –

(क) समुद्र और बडहे़ बड़े दरिया, दरियाओं का पानी इस का ज़िक्र ऊपर किया गया।

(ख) झीलें, बड़े तालाब, नदी और नाले, ये भी किसी की मिलकियत नहीं, इस लिये इस पानी का भी वही हुक्म है जो बड़े दरियाओं के पानी का।

(ग) वे तालाब, हौज़, पोखरे, नहरें, कुएँ जिनको हुकूमत ने या किसी शख़्स ने पूंजी लगा कर बनावाया है उनके पानी का हुक्म यह है कि पूंजी लगाने वाले की मिलकियत तो है ही लेकिन मालिक को यह हक़ नहीं है कि लोगों को पानी पीने और जानवरों को पानी पिलाने से रोक दे या पानी पिलाने का कोई किराया वसूल करे। नबी

(स.अ.व.) ने इससे मनाही फ़रमाई है और हज़रत उमर (र.त.अ.) ने तो ऐसे लोगों से जंग करने की इजाज़त दी है (बदाएअ जिल्द 6 पृष्ठ 189) हाँ अगर जानवरों के ज़्यादा आने जाने से तालाब या हौज़ के किनारे टूटने लगें और डर हो कि वे ख़राब हो जाएँगे तो पाबन्दी लागू की जा सकती है कि लोग बारी बारी से सावधानी के साथ जानवरों को पानी पिलाने को लाएँ, ख़िलाफ़वर्ज़ी की सूरत में बिल्कुल रोक देने का भी हक़ है। जो लोग ऐसे पानी के जख़ीरों से खेतों की सिचाई करना चाहें तो मालिक को हक़ है कि या तो वह रोक दे या किराया लेकर उन्हें पानी दे।

इसी तरह ट्यिूबवैल, कुएं या नहर से सींचाई करने के लिए जो छोटी नालियां बनाई जाती हैं, उनका पानी भी इन्सानों और जानवरों के पीने के लिए मुबाह है। किसी हुकूमत के लिये यह ज़्यादा मुनासिब नहीं कि अवाम के पैसों से बनाई हुई नहरों या ट्यिूबवैलों के पानी का किराया ले। इस्लामी हुकूमत खेती पर टैक्स तो लेती थी मगर सिचाई का किराया लेने की कोई मिसाल नहीं मिलती।

(घ) वह पानी जो आदमी अपने घड़े में भर लेता है या भिश्ती मशक में भर कर लाता है वह उसका मालिक हो जाता है वह उस पानी को बेच भी सकता है, दूसरों को पीने से रोक भी सकता है लेकिन अगर कोई शख़्स प्यास की ज़्यादती से बेताब है और पानी रखने वाला न दे तो उससे ज़बरदस्ती लिया जा सकता है।

पानी में शिकारः

(1) दरिया और तालाब की मछलियां किसी की मिलकियत नहीं हैं जिसका जी चाहे उन्हें पकड़ सकता है अगर किसी ने दरिया से मछलियां पकड़ने के लिये किसी से उजरत का मुआमला किया तो सही नहीं होगा। मछलियां जो वह मज़दूर शिकार करेगा उसी की मिलकियत होंगी, ठेकेदार की नहीं होंगी। अगर उसने मछलियाँ

पकड़ने का जाल अपने पास से दिया है तो उसका किराया ले सकता है मगर ख़ुदा की इस नेमत पर अपनी मिलकियत क़ायम नहीं कर सकता। जब तक वह उसे अपनी मेहनत से हासिल न करे, हां अगर किसी ने अपने ज़ाती तालाब या हौज़ में मछलियां पाली हों या किसी तालाब में मछलियां ला कर डाली हों और उनकी परवरिश पर कुछ ख़र्च किया हो तो अगर उस तालाब या हौज़ में मछलियां इतनी ज़्यादा हैं कि बग़ैर किसी मेहनत के उन्हें पकड़ा जा सकता है तो यक़ीनन वह उनका मालिक है, वह उन्हें तालाब या हौज़ में रहते हुए भी बेच सकता है लेकिन अगर उन्हें पकड़ने के लिये मछली पकड़ने का कांटा लगाना पड़ता है या जाल डालना पड़ता है तो चूंकि मछलियां उसकी मिलकियत हैं इस लिये उन्हें पकड़ने से दूसरों को मना कर सकता है अगर ख़ुद बेचना चाहता है तो पहले उनका शिकार करे फिर उन्हें बेचे।

(2) ख़ुदरू (अवपे आप उगने वाली) घास चाहे वह किसी शख़्स की अपनी ज़मीन पर ही क्यों न हो वह किसी को उसके काटने या जानवरों को चरने या चराने से रोक नहीं सकता और न उसे बेच सकता है। उसको बहरहाल यह हक़ है कि अपनी ज़मीन के अहाते में किसी को न आने दे लेकिन अगर उसने घास उगाने पर ख़र्च किया है या मेहनत की है तो फिर उसको यह हक़ होगा कि वह दूसरों को काटने या चराने से रोक दे और यह भी हक़ है कि ख़ुद काट कर या मज़दूरी पर कटवा कर या बग़ैर काटे हुए बेच दे।

(3) अपने आप उगे हुए जंगल भी किसी की मिलकियत नहीं हैं बल्कि उनसे हर इन्सान को लकड़ी काटने और ले जाने का हक़ है, लेकिन अगर वह जंगल किसी ने लगाया है या किसी की ज़मीन पर उगा है तो उसपर उसी शख़्स की मिलकियत मानी जाएगी। अगर कोई शख़्स अपने आप उगने वाले जंगल से जो न किसी ने उगाया हो, न किसी की ज़मीन पर हो लकड़ी काटे या मज़दूरी दे कर कटवाए तो वह लकड़ी उसी की होगी कोई दूसरा नहीं ले सकता।

रिकाज़ और कन्ज़: ज़मीन में पाई जाने वाली वे चीज़ें जो खुदाई के बाद ही मालूम की जा सकती है, रिकाज़ कहलाती हैं। इनकी दो क़िस्में हैं, एक वे जो खुद बखुद ज़मीन के अन्दर पैदा होती हैं जैसे कोयला, पेट्रोल, अबरक, गंधक, सोना, चाँदी, लोहा, तांबा, पीतल और नमक वग़ैरा इनको मअदनियात (खनिज पदार्थ) कहा जाता है। दूसरी वे चीज़ें जिनको किसी इन्सान ने ज़मीन में दफ़न कर दिया हो उन्हें कन्ज़ (ख़ज़ाना) कहते हैं। मअदनियात में एक तो वे जमी हुई चीज़ें शुमार होती हैं जो आग से नर्म की जा सकती हैं जैसे लोहा, चाँदी, सोना, तांबा, वग़ैरा। दूसरे वे चीज़ें जो फ़ितरतन बहने वाली हों जैसे पेट्रोल और तेल वग़ैरा या वे जो बहने वाली तो नहीं मगर आग से बहने वाली बनाई जा सकती है तो अगर कोई शख़्स पहली क़िस्म का मअदन पा जाए या मालूम कर ले तो अगर वह ऐसी ज़मीन में हो जो उसकी मिल्क हैं तो उस मअदन का पाँचवाँ हिस्सा इस्लामी हुकूमत ले लेगी और बाक़ी चार हिस्से उसके होंगे, लेकिन अगर वह ज़मीन उसकी मिल्क न हो तो फिर दो सूरतें हैं, या तो उस पर किसी की मिलकियत नहीं होगी तो उस सूरत में भी पांचवां हिस्सा बैतुलमाल का और बाक़ी चार हिस्से मालूम करने वाले के होंगे। लेकिन अगर वह ज़मीन आम लोगों की मिलकियत हो यानी सब लोग उससे फ़ायदा उठाते हों तो फिर वह पूरा मअदिन इस्लामी हुकूमत का होगा। इसी तरह अगर हुकूमत किसी भूगर्भ विज्ञानी के ज़रिये कोई मअदिन मालूम कराये तो वह इस्लामी हुकूमत की मिलकियत होगा।

कन्ज़: का हुक्म यह है कि अगर यह मालूम हो जाये कि उसे किसी शख़्स ने दफ़न किया था तो उसका हुक्म 'लुक़ता' का होगा और अगर नामालू हो तो फिर पांचवां हिस्सा हुकूमत का और बाक़ी चार हिस्से पाने वाले के होंगे।

मवात: मवात के लफ़्ज़ी माना मरी हुई या बेकार चीज़ के हैं और

शरीअत में उस ज़मीन को कहते हैं जो अब तक मुर्दा पड़ी हुई है यानी वह आबाद नहीं हुई, या कभी आबाद की गई थी मगर अब उसका कोई मालिक बाक़ी नही है। वह परती पड़ी हुई है, ऐसी ज़मीन को जो आबाद करेगा वह उसकी मिलकियत हो जाएगी। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया है "मन अहया अरज़न मैततन फ़हिया लहू" यानी जिसने किसी बेकार और ग़ैर आबाद ज़मीन को आबाद किया तो वह उसी की होगी (तिर्मिज़ी)। एक दूसरी जगह आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया "मन अम्मरा अरज़न लैसत लिअहदिन फ़हुवा अहक़्क़ु बिहा" यानी जिस ज़मीन का कोई मालिक न हो, उसे जिसने आबाद किया वही उसका हक़दार है। (बुख़ारी)

मवात का मालिक बनने की शर्तें:

1. वह बेकार बंजर और ऊसर ज़मीन मवात क़रार दी जाएगी जो आबादी के अन्दर न हो और न आबादी के आस-पास हो बल्कि आबादी से तीन चार फ़रलांग दूर हो, आबादी के अन्दर की बेकार ज़मीनें मकान बनाने या किसी इजतिमाई काम के लिये या चरागाह के तौरपर इस्तेमाल करने के लिये होती हैं, उन पर कोई बेइजाज़त क़ब्ज़ा नहीं कर सकता। आबादी से क़रीब ख़ाली ज़मीनें जो खेती के अलावा और किसी काम में न आ सकती हों उन पर हुकूमत की इजाज़त से क़ब्ज़ा किया जा सकता है।

2. वह बेकार पड़ी हुई ज़मीन जिसका न कोई मालिक पहले था न अब है या कोई मालिक रहा हो लेकिन तीन वर्ष तक उसने उसमें खेती न की हो तो हुकूमत उसे हज्र क़रार दे कर किसी दूसरे को दे देगी (हज्र की परिभाषा आगे बयान की गयी है) नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया है "लैसा लिलमुहतजिरि बअदा सलासा सिनीना हक़्क़ुन" यानी तीन साल तक ज़मीन बेकार छोड़ देने वाले का उस ज़मीन पर कोई हक़ नहीं है।

3. हुकूमत से इजाज़त लेकर ही किसी बेकार ज़मीन को आबाद किया जा सकता है, अगर कोई शख़्स हुकूमत की इजाज़त के बग़ैर ऐसा करेगा तो वह मालिक नहीं होगा। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया है "ला हिमा इल्ला लिल्लाहि व रसूलिही" यानी किसी बेकार ज़मीन को अपनाने का हक़ सिर्फ़ अल्लाह और उसके रसूल को है, यानी हुकूमत को। जाहिलिय्यत के ज़माने के उस तरीक़े को कि जहां बेकार ज़मीन को देखते कि उसमें ज़रख़ेज़ी (उपजाऊपन) की निशानियां पाई जातीं हैं तो उसे अपने और अपने जानवरों के लिए ख़ास कर लेते। आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इस्लामी हुकूमत में इस तरीक़े को ख़त्म कर दिया है। इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाह अलैह की राय में कोई आदमी इमाम (यानी हुकूमत) की इजाज़त के बग़ैर किसी बेकार ज़मीन का मालिक नहीं हो सकता। मगर इमाम मालिक रहमतुल्लाह अलैह के नज़दीक सहराई और बयाबानी (रेगिस्तानी और निर्जन) ज़मीनें या आबादी से बहुत दूर की ज़मीनों को अगर हुकूमत की इजाज़त के बग़ैर कोई शख़्स अपने इस्तेमाल में ले आये तो उसके क़ब्ज़े को स्वीकार किया जाएगा क्योंकि एक आम आदमी के लिये हुकूमत से इजाज़त हासिल करने में काफ़ी दुशवारी है। इमाम शाफ़ई, इमाम अहमद बिन हम्बल (रह०) और हनफ़ी मसलक के दो इमाम (इमाम अबू यूसुफ़ और इमाम मुहम्मद) भी इसी राय को मानते हैं।

आम तमद्दुनी और इन्तिज़ामी एतेबार से इमाम अबू हनीफ़ा (रह०) की राय राजेह है लेकिन मुल्क में ग़ल्ले की ज़्यादा ज़रूरत के वक़्त मुल्क की बेकार ज़मीनों को खेती के लायक़ बनाना भी हुकूमत की ज़िम्मेदारी है, इस लिये तमद्दुनी और इन्तिज़ामी हालात की आवश्यकता यह होती है कि बेकार ज़मीनों पर काश्त करने की आम इजाज़त हुकूमत की तरफ़ से दी जाय करे कि जो जितनी ज़मीन आबाद करके ग़ल्ला पैदा करेगा उस ज़मीन पर उसका हक़ स्वीकार कर लिया जाएगा।

4. बेकार पड़ी हुई ज़मीन का मालिक बनने के लिये चौथी शर्त यह है कि जिस ज़मीन को वह आबाद करना चाहता हो उसकी जुताई और ज़मीन तोड़ने का काम शुरू कर दे, पानी देने की नालियाँ वग़ैरा बना दे, ये चार शर्तें अगर पाई जाएँगी तो ग़ैर आबाद ज़मीन को आबाद करने वाला उसका मालिक होगा, वर्ना नहीं।

कुछ दूसरे ज़रूरी मसाइलः

1. अगर किसी बेकार पड़ी हुई ज़मीन के बारे में हुकूमत किसी को सिर्फ़ यह इजाज़त दे कि इससे फ़ायदा उठाओ मगर मिलकियत का हक़ हासिल नहीं होगा तो उसे इसका हक़ है (मुजल्ला पृष्ठ 25) लेकिन मिलकियत में देने के बाद फिर हुकूमत बग़ैर किसी वजह के वापस नहीं ले सकती।

2. हुकूमत से दस एकड़ ज़मीन खेती करने के लिये किसी ने ली, उसमें से 5 एकड़ ज़मीन जोत बो ली और 5 एकड़ छोड़ दी तो अगर मजबूरी की वजह से ऐसा किया है तो ठीक, वर्ना तीन वर्ष के बाद हुकूमत वह 5 एकड़ किसी दूसरे को दे सकती है। अगर तमाम ज़मीन आबाद कर दी और बीच में थोड़ी सी जगह छोड़ दी है तो उससे कोई हर्ज नहीं, वह उसकी मिलकियत में रहेगी हुकूमत दूसरे को नहीं देगी।

3. अगर किसी की आबाद की हुई ज़मीन के आस-पास दूसरे लोगों ने ज़मीनें आबाद कर लीं तो उन्हें ज़रूर इतना रास्ता छोड़ना पड़ेगा जिससे पहला आदमी और उससे जानवर गुज़र सकें।

4. अगर किसी ने ज़मीन के चारों तरफ़ दीवार उठवा दी या खाई खोद ली या लोहे के त.: से घेर लिया लेकिन ज़मीन को जोता बोया नहीं तो यह समझा जाएगा कि उसने ज़मीन को आबाद कर लिया चाहे खेती करे या न करे लेकिन अगर उसने सिर्फ़ कांटेदार घास या

कुछ पत्थर इधर-उधर लगा दिये या रख दिये या उसकी घास वग़ैरा साफ़ कर दी या कुवां खोद लिया और तीन वर्ष तक खेती नहीं की तो उस पर आबाद होने का हुक्म नहीं लगाया जाएगा हुकूमत वह ज़मीन किसी दूसरे शख़्स को दे सकती है या अगर वही फिर लेना चाहे और हुकूमत को यह यक़ीन दिलाये कि वह किसी मजबूरी की वजह से आबाद न कर सका था तो उसी को दे सकती है।

5. जो कुवाँ उसने ग़ैर आबाद ज़मीन में खोदा है वह उसी की मिलकियत होगा चाहे ज़मीन उसी की मिलकियत न रहे।

ग़ैर-मुस्लिम का हुक्म: जिस तरह मुसलमान किसी ज़मीन को आबाद करके उसका मालिक हो जाता है उसी तरह अगर ग़ैर मुस्लिम भी कोई ज़मीन आबाद करेगा तो वह उसकी मिलकियत होगी दोनों में कोई फ़र्क़ नहीं है।

सिंचाई का इन्तिज़ाम:

1. खेती को पानी देने के लिये कुवां खोदना या नदी या तालाब से पानी लेने के लिये इन्तिज़ाम करना हर शख़्स का हक़ है। नदी या तालाब से पानी लेने के लिये एक ही घाट हो और कुछ खेत वालों में पहले या बाद में सिंचाई करने पर इख़्तिलाफ़ हो जाये तो जिसका नुक़सान ज़्यादा हो रहा है वह पहले सिंचाई करेगा, नदी या तालाब में मशीन लगा कर भी पानी लेने का हक़ है शर्त यह है कि उससे दूसरों का नुक़सान न होता हो, अगर पानी ख़त्म हो जाने का डर हो, ग़रीब और कम आमदनी वाले लोगों के लिये सिंचाई का कोई दूसरा इन्तिज़ाम न हो, या उससे दूसरी इजतिमाई ज़रूरतें या जानवरों को पानी पिलाने की सुहूलत प्रभावित होती हो तो मशीन लगा कर पानी निकालने से रोका जाएगा।

2. जहाँ सिंचाई का इन्तिज़ाम न हो या हो तो नाकाफ़ी हो तो

हुकूमत पर उस का इन्तिज़ाम करने की ज़िम्मेदारी है। अगर हुकूमत के ख़ज़ाने में गुंजाइश न निकले तो आम लोगों से रज़ामन्दी व ख़ुशी से इस काम को करने के लिये कहा जा सकता है, लेकिन इस सूरत में हुकूमत उनसे पानी का किराया नहीं ले सकती।

3. तालाब, नहरें, कुएं जिनसे सिंचाई की जाती है अगर पट जाएँ या ख़राब होना शुरू हो जाएं तो उनसे फ़ायदा उठाने वालों पर ज़िम्मेदारी है कि सब मिल कर उन्हें ठीक कराएं। हुकूमत भी उनको उस पर मजबूर कर सकती है अगर हुकूमत ख़ुद ठीक कराएगी तो वे आम मिलकियत हो जाएँगे फिर उनसे फ़ायदा उठाने वालों को यह हक़ न होगा कि किसी दूसरे को फ़ायदा उठाने से रोक सकें।

कुएँ के चारो तरफ़ की ज़मीन: जिसकी ज़मीन में कुवां खोदा गया हो और खोदने से पहले उसकी इजाज़त ली जा चुकी हो और उसने उससे मना न किया हो तो उसके चारों तरफ़ की उतनी ज़मीन कुएँ कि मिलकियत समझी जाएगी जितनी उससे काम लेने वालों को ज़रूरत होती है जैसे आदमियों या जानवरों के पानी पीने के लिये लगभग दस गज़ ज़मीन कुएँ की समझी जाएगी और अगर उससे खेतों को भी पानी दिया जाता हो तो ज़रूरत के मुताबिक़ बढ़ोतरी भी की जा सकती है।

हज्र

शब्दकोश में हज्र का अर्थ रोक देने या बेकार कर देने का है। लेकिन इस्लामी शरीअत में यह इस्तिलाह मिलकियत में तसर्रुफ़ का हक़ रोक देने के लिये इस्तेमाल होती है। जिसकी इजाज़त कुरआन और हदीस से मिलती है, जिनको मिलकियत में तसर्रुफ़ करने से रोका जा सकता है, उनके इस्तिलाही नाम ये हैं –

सबिय्य (नाबालिग़ बच्चा), **मजनून** (पागल जिस के हवास न हों), **मअ़तूह** (जो इतना नासमझ हो कि अपने नफ़े नुक़सान को न समझ सके), **सफ़ीह** (दौलत को बे सोचे समझे ख़र्च करने वाला, अय्याश, बदचलन, ग़फ़लत और हिमाक़त से नुक़सान उठाने वाला)।

तसर्रुफ़ से रोकने का सबब: हज्र दो सबबों से किया जा सकता है – (1) तसर्रुफ़ की सलाहियत न हो, या (2) सलाहियत हो मगर इस्तेमाल ग़लत तरीक़े से किया जाये जिसकी वजह से कोई तमद्दुनी बिगाड़ पैदा होने का डर हो। इन दोनों क़िस्म के आदमियों को तसर्रुफ़ से रोक दिया जाएगा।

जैसे कोई नाबालिग़ बच्चा हो या कोई पागल हो गया हो या अक़्ल की इतनी कमी हो कि मुआमलात की अच्छाई बुराई को समझ न पाता हो, ऐसे तमाम लोगों को जायदाद और माल में तसर्रुफ़ से रोका जाएगा।

इसी तरह जो आक़िल बालिग़ और समझदार होने के बावजूद दौलत को बेवजह ख़र्च करता हो या ग़फ़लत की वजह से हमेशा मुआमलात में नुक़सान उठाताहो उसे भी तसर्रुफ़ से रोका जाएगा।

हज्र का हक़ किस को है:

1. नाबालिग़ बच्चे और मजनून को उनके माल और जायदाद में तसर्रुफ़ से रोकने का हक़ सब से पहले उनके वली को है, उसके बाद जिसको मुरब्बी और वसी बना दें वह माल और जायदाद की देख भाल करे जब तक सबिय्य बालिग़ न हो जाये और मजनून के होश व हवास ठीक न हो जाएं, जब वे महसूस करें कि लड़का बालिग़ हो गया और ज़िम्मेदारी का एहसास पैदा हो गया तो उसका माल और जायदाद उसके हवाले कर दें। इसी तरह मजनून का पागलपन दूर हो जाये तो उसके माल और जायदाद को भी उसके हवाले कर दें। अगर कोई वली या मुरब्बी और वसी न हो तो फिर हुकूमत अपनी निगरानी में जायदाद और माल व दौलत को लेगी और वली की तरह निगरानी करेगी और ऐसा इन्तिज़ाम करेगी कि उनकी ज़रूरतें पूरी होती रहें।

2. सफ़ीह (जो अपनी दौरल को बिला ज़रूरत ख़र्च करता है) को अपनी जायदाद और माल में तसर्रुफ़ से रोकने का हक़ क़ानूनी तौरपर वली या वसी को नहीं है चाहे वे मां बाप ही क्यों न हों, इसका क़ानूनी हक़ सिर्फ़ हुकूमत को है। इन दो क़िस्मों के अलावा एक और क़िसम जिसका ज़िक्र हदीसे नबवी में है, वह क़र्ज़दार के माल व जायदाद को हज्र करना (रोकना) है। अगर कोई क़र्ज़दार माल व जायदाद वाला होते हुए क़र्ज़ख़्वाह का क़र्ज़ अदा नहीं करता तो क़र्ज़ख़्वाब की दरख़्वास्त पर हुकूमत उसकी जायदाद (डाकख़ाने या बैंक का रूपया) या घर के सामान को क़ुर्क़ कर के उसको मजबूर करेगी कि वह क़र्ज़ अदा करे, अगर वह अदा नहीं करेगा तो हुकूमत उसकी जायदाद या सामान को बेच कर दाईन (क़र्ज़ख़्वाह) का क़र्ज़ अदा कर देगी।

सफ़ीह व मुसरिफ़ और नाबालिग़ बच्चों के बारे में क़ुरआन में

तफ़सीली अहकाम मौजूद हैं उनके वली ओर मुरब्बी लोगों को यह हिदायत दी गई हैं -

وَلَا تُؤْتُوا السُّفَهَاءَ اَمْوَالَكُمُ الَّتِىْ جَعَلَ اللّٰهُ لَكُمْ قِيٰمًا وَّارْزُقُوْهُمْ فِيْهَا وَاكْسُوْهُمْ وَقُوْلُوْا لَهُمْ قَوْلًا مَّعْرُوْفًا.

वला तूतुस्सुफ़हाआ अमवालकुमुल्लती जअलल्लाहु लकुम कि़यामवं वरज़ुकूहुम फ़ीहा वकसूहुम व कूलू लहुम कौ़लम्मअरूफ़ा।

अनुवादः और वह माल जिसको अल्लाह ने तुम्हारी जि़न्दगी का सहारा बनाया है कमअक्लों को न दो कि वे उसे बरबाद करें उनको खाना कपड़ा देते रहो और उनसे अच्छाई और भलाई की बातें कहते रहो।

وَابْتَلُوا الْيَتٰمٰى حَتّٰى اِذَا بَلَغُوا النِّكَاحَ فَاِنْ اٰنَسْتُمْ مِّنْهُمْ رُشْدًا فَادْفَعُوْا اِلَيْهِمْ اَمْوَالَهُمْ ج وَلَا تَاْكُلُوْهَا اِسْرَافًا وَّ بِدَارًا اَنْ يَّكْبَرُوْا ط

वबतलुल यतामा हत्ता इज़ा बलगुन्निकाहा फ़इन आनसतुम मिनहुम रुशदन फ़दफ़ऊ इलैहिम अमवालहुम, वला ताकुलूहा इसराफ़वं वबिदारन अय्यकबरू।

अनुवादः और नाबालिग़ यतीमों को आज़माते रहो यहाँ तक कि वे जब निकाह की उम्र को पहुंचें और तुम उनको अहल और नेकचलन महसूस करो तो उनके माल उनके हवाले कर दो और तुम अपनी देख-भाल के दौरान उनके माल को जल्दी जल्दी बेजा तरीक़े से न खाओ कि ऐसा न हो कि वे बड़े हो जाएं।

इन आयतों में नीचे दी हुई बातों का हुक्म मिलता है -

1. किसी शख़्स को अपनी मिलकियत में तसर्रुफ़ का हक़ उसी वक़्त तक है, जब तक वह उसको सही ढंग से इस्तेमाल करे, लेकिन

जब वह जाइज़ सीमा से आगे बढ़ने लगे तो उसके हुकूक़ जो उसकी अपनी मिलकियत में थे छील लिये जाएंगे, माल अगरचे एक आदमी का होता है मगर ख़ुदा ने उसे बहुत से आदमियों की ज़िन्दगी के क़याम का ज़रिया बनाया है, फ़ुज़ूल ख़र्च करने वाला अपना माल ही नहीं बल्कि बहुत से लोगों का फ़ायदा भी तबाह करता है इस लिये यह बात सबके फ़ायदे में है कि उसे तसर्रुफ़ के हक़ से महरूम कर दिया जाये। हां उसकी बुनियादी ज़रूरतें हर हाल में पूरी की जाएं।

2. यतीम नाबालिग़ बच्चे जो अपने नफ़े और नुक़सान को समझने की योग्यता न रखते हों उनका माल उनके हाथ में न देना चाहिये बल्कि उनके वली (संरक्षक) और मुरब्बी की निगरानी में रहे और जब उनमें अच्छे बुरे की समझ और तसर्रुफ़ की योग्यता पैदा हो जाये तो उनका माल उनके हवाले कर दिया जाये ताकि अल्लाह की दी हुई दौलत बरबाद न हो।

3. वली और मुरब्बी को यह हिदायत दी गई है कि वह एक अमानतदार की हैसियत से माल व जायदाद की सुरक्षा और उसकी देख भाल करें और इस सिलसिले में जो सेवा उन्हें करना पड़े उसका मुनासिब मुआवज़ा भी उस माल व जायदाद से लें लेकिन उनके लिये यह बिल्कुल मुनासिब नहीं कि यतीम का माल जिसके वे अमानतदार और रक्षक बनाए गए हैं उनमें से जल्दी जल्दी बेकार में ख़र्च करते रहें और जब वे जवानी को पहुंचें तो उनका माल व जायदाद लगभग ख़त्म हो चुका हो अगर ख़ुदा ने उनको ख़ुशहाली दी है तो उन्हें चाहिये कि यतीम के माल से कुछ भी न लें।

हज्र की कुछ और सूरतें: कोई अध्यापक बच्चों को ग़लत पढ़ाता हो, कोई अख़लाक़ (सदाचार) सिखाने वाला अपने छात्रों के अख़लाक़ सुधारने के बजाए बिगाड़ता हो, कोई प्रकाशक गंदी पुस्तकें प्रकाशित करता हो, कोई मुफ़्ती ग़लत फ़तवे देता हो, कोई बग़ैर डिग्री

हासिल किया हुआ डॉक्टर या नीम हकीम चिकित्सालय खोल कर लोगों की सेहत बरबाद करता हो या कोई पेशेवर धोखे का कारोबार करता हो, तो ऐसे तमाम लोगों को उनके पेशे से रोक दिया जाएगा जिसका हक़ सिर्फ़ इस्लामी हुकूमत ही को है। आम लोग हुकूमत तक शिकायत पहुंचा सकते हैं मगर क़ानून हाथ में नहीं ले सकते, हुकूमत भी सिर्फ़ पेशा या प्रैक्टिस को रोक देगी, बाक़ी मुआमलात पर पाबन्दी नहीं लगाएगी।

हज्र का हुक्म देते वक़्त महजूर की मौजूदगी: जिस किसी को तसर्रुफ़ से रोका जाये उस वक़्त उसकी मौजूदगी ज़रूरी नहीं, माल और जायदाद को माल वाले के मौजूद न होने की सूरत में भी हज्र किया जा सकता है लेकिन उसको उसकी ख़बर ज़रूर दी जाएगी।

हज्र से संबंधित कुछ ज़रूरी मसाइल:

1. अगर कोई फ़िस्क़ व फुजूर में घिरा हुआ है तो हुकूमत उसको शरई कानून के अनुसार सज़ा देगी लेकिन जायदाद और दूसरे माल को हज्र नहीं करेगी, यह उसी वक़्त होगा जब वह अपने माल को ग़लत या बिला ज़रूरत बेकार करने लगे।

2. नासमझ लड़के का वली माल पर तसर्रुफ़ करने की इजाज़त उसको नहीं देगा और अगर वह कोई तसर्रुफ़ करता है तो वह निषफल क़रार पाएगा, और उसके तसर्रुफ़ करने से अगर कोई नुक़सान पहुंच गया तो उसका गुनाह वली पर होगा। उसके ख़रीदने और बेचने का कोई एतेबार नहीं किया जाएगा। अगर वली ने इजाज़त दे दी हो तो वह क़ानूनन सही न होगी।

3. नाबालिग़ लड़का अगर समझदार हो और वह ऐसा मुआमला करे जिस में नुक़सान का ख़तरा भी न हो बल्कि फ़ायदा ही दिखाई दे तो ऐसा मुआमला वली की इजाज़त के बग़ैर किया जा सकता है,

जैसे किसी ने उसको भेंट के तौर पर कोई चीज़ दी और उसने उसे स्वीकार कर लिया तो वह चीज़ उसकी मिल्क हो जाएगी लेकिन अगर उसने ऐसा मुआमला किया जिसमें फ़ायदे की कोई उम्मीद ही न थी बल्कि नुक़सान ही का डर था तो अगर वली ने मुआमला करने की इजाज़त दे दी हो तो भी मुआमला ग़लत क़रार पाएगा। यहाँ तक कि उसका भेंट करना भी सही नहीं है, वह चीज़ क़ानूनन वापस ली जा सकती है। अगर कोई समझदार लड़का जिसमें नफ़े और नुक़सान की तमीज़ है, कोई चीज़ वली की इजाज़त से बेचे या ख़रीदे तो सही है लेकिन अगर वली इजाज़त न दे तो ग़लत है।

4. बालिग़ हो जाने के बाद जब वली उसकी जायदाद या माल उसके हवाले करना चाहे तो पहले थोड़ा माल देकर उसकी योग्यता की जाँच कर ले, जब यह तजर्बा और जांच हो जाए कि वह काम को अच्छी तरह से संभालने के क़ाबिल हो गया है तभी वह उसकी सारी जायदाद और माल उसके हवाले करे।

5. समझदार नाबालिग़ को उसकी दौलत व जायदाद सौंपने के बाद अगर वली (संरक्षक) महसूस करे कि तसर्रुफ़ ठीक ढंग से नहीं कर रहा है तो वह दोबारह हज्र कर सकता है। लेकिन बालिग़ हो जाने के बाद हुकूमत हज्र कर सकती है, वली को यह हक़ नहीं रहता।

6. इजाज़त साफ़-साफ़ शब्दों से दी जाती है लेकिन कभी तर्ज़े अमल से भी इजाज़त का मफ़हूम होता है एक होशियार नाबालिग़ लड़के को उसका वली बेचते और ख़रीदते देखे और कोई रोक टोक न करे तो यह इजाज़त समझी जाएगी और लड़के का तसर्रुफ़ करना सही माना जाएगा।

बालिग़ होने की उम्र: लड़के 12 वर्ष की उम्र से 14 वर्ष की उम्र तक बालिग़ हो जाते हैं और लड़कियां 9 वर्ष से 13 वर्ष की उम्र तक बालिग़ हो जाती हैं, बालिग़ होने की निशानियां ज़ाहिर हों या न हों

15 वर्ष की उम्र होने पर लाज़मी तौरपर बालिग़ क़रार दिया जाएगा।

हज्र के सिलसिले में वली किस को क़रार दिया जाएगा: सब से पहले विलायत का हक़दार बाप है, उसके बाद वह जिसे बाप ने अपनी ज़िन्दगी में वसी मुक़र्रर कर दिया हो (यानी लड़के को पालने वाला और उसकी देख भाल करने वाला) अगर बाप की मृत्यु हो गई हो लेकिन उसका मुक़र्रर किया हुआ वसी मौजूद हो तो वह जिसको लड़के का मुरब्बी मुक़र्रर कर दे अब वह वली हो जाएगा। बाप या बाप के मुक़र्रर किए हुए वसी दोनों के मर जाने की सूरत में दादा (अगर ज़िन्दा है) वली होगा। और उसे भी बाप की तरह अपनी ज़िन्दगी में दूसरे को वली मुक़र्रर कर देने का हक़ है। अगर उनमें से कोई न हो तो फिर हुकूमत उसकी वली होगी। रहे दूसरे क़रीबी रिश्तेदार लोग तो हज्र में वे वली नहीं हो सकते, हाँ बाप दादा या हुकूमत उनमें से किसी को निगरां बना दें तो उन्हें वली का दर्जा हासिल हो जाएगा।

सफ़ीह और मदयून की हैसियत:

1. जब सफ़ीह और मदयून को अपनी जायदाद और माल में तसर्रुफ़ से रोका जाएगा तो उनका मुआमला नाबालिग़ के साथ मुआमले से अलग नहीं होगा, इसके अलावा कि उनकी विलायत का हक़ हुकूमत के अलावा और किसी को न होगा।

2. हुकूमत उनका और उनके बाल-बच्चों का ख़र्च उनकी जायदाद या माल से पूरा करेगी।

3. जिन दूसरे लोगों के हुकूक़ उन पर होंगे वे भी उनकी जायदाद या या माल से पूरे किये जाएंगे।

4. मदयून का वही माल या जायदाद कुर्क़ की जाएगी जो हज्र के वक़्त मौजूद होगी उसके बाद वह जो कुछ कमाएगा उसमें हुकूमत को दख़लअंदाज़ी का हक़ नहीं है।

5. मदयून की जायदाद और माल जिस पर तसर्रुफ़ रोक दिया गया है अगर उसके अलावा मदयून के पास कोई कमाई का ज़रिया और नहीं है तो उसी से उसके बाल बच्चों का ख़र्च पूरा किया जाएगा।

6. सफ़ीह जिसे अपनी जायदाद में तसर्रुफ़ करने से रोक दिया गया है, अगर कोई क़र्ज़ ले ले तो वह भी उसकी जायदाद से अदा किया जाएगा, हाँ अगर किसी फ़ुज़ूल ख़र्ची के लिये क़र्ज़ लिया हो तो हुकूमत उसकी ज़िम्मेदार नहीं होगी।

शुफ़आ

शुफ़आ का अर्थ और परिभाषाः शुफ़आ का अर्थ मिलाने का है। फ़िक़्ह की इस्तिलाह (परिभाषा) में किसी शख़्स की ख़रीदी हुई जायदाद को अपनी जायदाद से मिलाने को कहते हैं जिसका हक़ पड़ोसी को होता है।

मुतअल्लिक़ा (संबंधित) इस्तिलाहें: (1) शफ़ीअ (शुफ़आ करने वाला) (2)मशफ़ूअ (जिस ज़मीन या मकान का शुफ़आ किया गया) (3)मशफ़ूअ बिही (शफ़ीअ की अपनी ज़मीन या मकान या उनका हिस्सा जो मशफ़ूअ से सटा हुआ हो) (4) जार (पड़ोसी) (5)जार-ए-मुलासिक़ (वह पड़ोसी जिसका मकान बिल्कुल सटा हुआ हो)।

शुफ़आ का हक़: कोई शख़्स अपनी जायदाद जो एक जगह से दूसरी जगह नहीं ले जाई जा सकती जैसे ज़मीन या मकान बेचना चाहता है तो उसकी ज़मीन या मकान तो किसी बड़ी ज़मीन या मकान का हिस्सा होगा या उससे सटे हुए दूसरों की ज़मीन और मकान होंगे। दोनों सूरतों में उसके संबंध दूसरे हिस्सेदारों और पड़ोसियों से होंगे यानी आपस में एक दूसरे के नफ़े नुक़सान और तकलीफ़ व आराम का ख़याल रखते होंगे जैसा कि एक अच्छे समाज में होता है। अब अगर कोई अजनबी शख़्स उस बेचने वाले शख़्स की ज़मीन या मकान के हिस्से को ख़रीदता है तो हो सकता है उससे पड़ोसियों के संबंध बने न रहें या उसका मिज़ाज उन लोगों से अलग हो जिससे दोनों को तकलीफ़ हो या समाज में किसी क़िस्म का बिगाड़ पैदा हो। इस मस्लेहत को सामने रखते हुए शरीअत ने शुफ़आ का क़ानून लागू करने की इजाज़त दी है यानी यह बेचने

वाला जितनी क़ीमत में यह जायदाद बेच रहा है अगर शफ़ीअ चाहे तो उतनी ही क़ीमत पर वह जायदाद ले सकता है।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हदीसों से पता चलता है कि आपने मुशतरक जायदादों में शुफ़आ का फ़ैसला फ़रमाया एक हदीस में है –

قَضٰى بِالشُّفْعَةِ فِىْ كُلِّ شِرْكَةٍ لَمْ تُقْسَمْ رَبْعَةٌ اَوْ حَائِطٌ لَايَحِلُّ لَهٗ اَنْ يَبِيْعَ حَتّٰى يُؤْذِنَ شَرِيْكَهٗ فَاِنْ شَاءَ اَخَذَ وَاِنْ شَاءَ تَرَكَ فَاِنْ بَاعَهٗ وَلَمْ يُؤْذِنْهُ فَهُوَ اَحَقُّ بِهٖ. (مشكوٰة)

क़ज़ा बिश्शुफ़अति फ़ी कुल्लि शिरकतिन लम तुक़सम रबअतुन औ हाएतुन ला यहिल्लु लहू अंय्यबीआ हत्ता यूज़ना शरीकहू फ़इन शाआ अख़ज़ा व इन शाआ तरका फ़इन बाअहू वलम यूज़नहू फ़हुवा अहक़्क़ु बिही। (मिशकात)

हर मुशतरक जायदाद में चाहे मकान हो या बाग़ और ज़मीन हो आप (स.अ.व.) ने शुफ़आ का फ़ैसला फ़रमाया और फ़रमाया कि यह जाइज़ नहीं है कि उसे बेच दे, जब तक कि दूसरे शरीक से इजाज़त न ले ले, अगर शरीक चाहे तो खुद ख़रीद ले वर्ना छोड़ दे। अगर शरीक की इजाज़त के बग़ैर बेच दिया तो शरीक ज़्यादा हक़दार है।

शुफ़आ के असबाब: (1) वह शख़्स जो बेची जाने वाली जायदाद में हिस्सेदार हो। (2) वह शख़्स जिस की ज़मीन या मकान और बेची जाने वाली ज़मीन या मकान में किसी क़िस्म की शिरकत हो, जैसे दोनों की ज़मीनों को एक ही कुएं से पानी दिया जाता हो या दोनों के मकान का एक ही रास्ता हो। (3) वह पड़ोसी जिस की ज़मीन बेचने वाले की ज़मीन से या जिसका मकान बेचने वाले के मकान से सटा हुआ हो, इमाम अबू हनीफ़ा के नज़दीक उन सब को शुफ़आ की इजाज़त है, मगर इमाम मालिक, इमाम शाफ़ई और इमाम

अहमद बिन हम्बल (रह०) के नज़दीक पहले दो लोगों को इजाज़त है, तीसरे शख़्स यानी पड़ोसी को नहीं है।

हक्के शुफ़आ में तर्तीबः पहला हक़दार शुफ़आ करने का वह शख़्स है जो बेची जाने वाली जायदाद में हिस्सेदार हो दूसरा हक़दार वह शख़्स जो जायदाद से नफ़ा उठाने में शरीक हो। तीसरा हक़दार वह पड़ोसी है जिसका मकान या ज़मीन सटी हुई हो यानी पड़ोसी। उस पड़ोसी को फ़ौक़ियत (प्रधानता) हासिल होगी जो नफ़ा उठाने में मुशतरक हो, जैसे दोनों के मकानों का रास्ता एक हो या दोनों ज़मीनों को एक ही ज़रिये से पानी पहुंचता हो।

नोटः 1. दो मंज़िला मकान जिसमें ऊपर की मंज़िल किसी एक शख़्स की हो और दूसरी मंज़िल किसी दूसरे की, तो दोनों एक दूसरे के जार-ए-मुलासिक़ हैं।

2. अगर दो पड़ोसियों के मकानों की एक दीवार साझी हो तो दोनों मकान में शरीक समझे जाएँगे यानी पहले उन्हीं को शुफ़आ का हक़ हासिल होगा। लेकिन अगर किसी पड़ोसी ने पड़ोसी की दीवार पर बल्ली या कड़ी रख ली या उस पर सलीब लगा ली और पड़ोसी ने एतेराज़ नहीं किया तो उससे वह शरीक नहीं बल्कि पड़ोसी ही समझा जाएगा।

3. अगर किसी ज़मीन या मकान के दो या ज़्यादा शफ़ीअ हों और सब के हिस्से बराबर न हों तो भी शुफ़आ के हक़ के लिये सब बराबर होंगे, जैसे तीन शरीक हों जिनमें एक का आधा हिस्सा हो और बाक़ी आधे में दो आदमी हों जिनमें से एक का तीसरा और एक का छआ हिस्सा हो तो अगर आधे हिस्से वाला अपना हिस्सा बेचता है तो उन दोनों को बराबर के शुफ़आ का हक़ होगा और दोनों उसे शुफ़आ के हक़ से लेकर बराबर से बाँट लेंगे, क़ीमत भी दोनों को बराबर से देना होगी, हिस्से की कमी बेशी का कोई असर शुफ़आ के हक़ पर नहीं पड़ेगा।

शुफ़आ की शर्तें और ज़रूरी मसाइलः

1. जैसे ही शफ़ीअ को ख़बर मिले कि शिर्कत की या जिवार की ज़मीन बेची या हिबा की गई है उसी वक़्त उसे एलान कर देना चाहिये कि मैं शुफ़आ का हक़ इस्तेमाल करूंगा या ऐसा तर्ज़ेअमल जिस से उसकी नाराज़गी या शुफ़आ में लेने का रुजहान ज़ाहिर हो इख़्तियार करना चाहिये। अगर वह यह सुन कर ख़ामोश रहा तो फिर शुफ़आ का हक़ नहीं रहा।

2. जायदाद बेचने या हिबा करने से पहले सिर्फ़ इरादा मालूम होने पर शुफ़आ का हक़ क़ायम नहीं होता।

3. जिस जायदाद के बेचने या हिबा करने में शफ़ीअ की रज़ामन्दी शामिल हो उसमें उसको शुफ़आ का हक़ नहीं है जैसे उसने ख़ुद बेचने का मश्वरा दिया या बैअ का इल्म होने पर कहा कि "अच्छा हुआ" तो फिर उसको शुफ़आ का हक़ नहीं रहा।

4. सिर्फ़ ग़ैर मनकूला जायदाद जैसे बाग़, ज़मीन और मकान वग़ैरा ही शुफ़आ हो सकता है, मनकूला माल या वक़्फ़ और हुकूमत की जायदाद में शुफ़आ का हक़ न होगा।

5. अगर जायदाद ख़रीदने वाले से शफ़ीअ ने यह कहा कि तुम इतनी रक़म दो तो मैं शुफ़आ के हक़ से हट जाऊँ तो इस कहने से शुफ़आ का हक़ बाक़ी नहीं रहेगा हक़ का दबाव डाल कर रूपया लेना रिशवत की तरह हराम है।

6. किसी मकान का ख़रीदने वाला शफ़ीअ को गुमराह करने के लिये कहे कि मैंने यह मकान दस हज़ार में ख़रीदा है। शफ़ीअ ने रक़म की ज़्यादती की वजह से शुफ़आ नहीं किया लेकिन बाद में उसे मालूम हुआ कि वह मकान कम क़ीमत में बिका है तो उसे दोबारह शुफ़आ करने का हक़ होगा।

7. लेकिन अगर इस मुद्दत में ख़रीदने वाले ने ख़रीदी जाने वाली चीज़ में कोई बढ़ोतरी कर दी जैसे ज़मीन में कोई इमारत बना ली या बनी हुई इमारत को और लम्बा चौड़ा बना दिया या पेड़ लगा लिये तो शफ़ीअ या तो तमाम क़ीमत दे कर उस जायदाद को ले ले या अपने हक़ से हट जाये।

8. शफ़ीअ ने जिस मकान या बाग़ का शुफ़आ किया है उसकी पूरी क़ीमत अदा करना होगी चाहे मकान शुफ़आ करने के बाद गिर गया हो या बाग़ के पेड़ सूख गये हों इस शर्त पर कि ख़रीदने वाले ने जान बूझ कर मकान न गिराया हो और बाग़ के पेड़ों को जानबूझ कर नुक़सान न पहुंचाया हो।

9. अगर शुफ़आ का दावा करने के बाद फ़ैसला होने से पहले शफ़ीअ की मृत्यु हो जाये तो शुफ़आ का हक़ ख़त्म हो जाएगा, वारिसों को यह हक़ नहीं मिलेगा।

10. शफ़ीह ने शुफ़आ का दावा नहीं किया लेकिन उस का इरादा ज़ाहिर कर चुका है तो इस देरी करने से उस हक़ पर कोई असर नही पड़ेगा, शफ़ीअ मशफ़ूअ को दो तरह से हासिल कर सकता है।

(1) इस्लामी हुकूमत के सामने अपना दावा पेश कर के।

(2) ख़रीदार को क़ीमत अदा कर के अगर वह उस पर राज़ी हो जाये।

मुस्लिम और ग़ैर मुस्लिम का हक़ बराबर है: साहिबे हिदाया फ़रमाते हैं कि शुफ़आ का हक़ नुक़सान को दूर करने के लिये है उसमें मुस्लिम, ग़ैर मुस्लिम, बाग़ी न्याय करने वाले सब बराबर हैं, इस लिये शुफ़आ का हक़ भी बराबर सब को हासिल है।

ग़सब (हड़पना)

किसी की कोई चीज़ उसकी रज़ामंदी और इजाज़त के बग़ैर और बग़ैर किसी हक़ के ज़बरदस्ती ले लेना ग़सब कहलाता है और यह बड़ा गुनाह है, कुरआन व हदीस में इसको बहुत बुरा क़रार दिया गया है यहाँ तक कि पत्नी को पति की चीज़ और पति को पत्नी की चीज़, बाप को बेटे की चीज़ और बेटे को बाप की चीज़ भी बेइजाज़त लेना और इस्तेमाल करना सही नहीं है ऐसा करने वाले को ग़ासिब कहा जाएगा। इसकी सज़ा उसको दुनिया में भी दी जा सकती है और आख़िरत में उसको अज़ाब से डराया गया है। "ग़सब" अत्याचार की सबसे बुरी क़िस्म है, कुरआन में नाहक़ और बिला ज़रूरत किसी का माल खाने वालों के बारे में फ़रमाया है कि वे अपने पेट में आग भर रहे हैं यानी अपना ठिकाना जहन्नम को बना रहे हैं कुरआन ने यहां ज़ुल्म का शब्द इस्तेमाल किया है जो हर तरह की ज़्यादती, ज़बरदस्ती, हक़ मारने और ग़सब के लिये इस्तेमाल होता है ग़सब तो ज़ुल्म इस हैसियत से भी है कि ग़ासिब या तो किसी कमज़ोर का या किसी नाबालिग़ यतीम का माल नाजाइज़ तरीक़े से खाता है, अगर कमज़ोर को ताक़त हासिल होती और यतीम अगर बालिग़ होता तो अपनी दौलत को इस तरह हरगिज़ बरबाद करने की इजाज़त न देता।

नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के फ़रमान में इसकी मज़म्मत (निन्दा) की गई है जिससे मालूम होता है कि ग़सब एक बदतरीन ज़ुल्म है। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ताकीद और चेतावनी देने के अन्दाज़ में फ़रमाया–

أَلَا لَا تَظْلِمُوْا أَلَا لَا يَحِلُّ مَالُ امْرِءٍ إِلَّا بِطِيْبِ نَفْسِهِ.

अला ला तज़्लिमू अला ला यहिल्लु मालुमरिइन इल्ला बितीबि नफ़्सिही।

अनुवादः होशियार! ख़बरदार! किसी पर ज़ुल्म न करना, होशियार! ख़बरदार! किसी आदमी का माल उस की मर्ज़ी के बग़ैर लेना हराम है।

आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि बिला इजाज़त किसी की चीज़ न तो संजीदगी से लेना सही है न मज़ाक़ और तफ़रीह के अन्दाज़ से।

لَا يَأْخُذَنَّ أَحَدُكُمْ مَتَاعَ أَخِيْهِ جَادًّا وَلَا لَاعِبًا.

ला याख़ुज़न्ना अहदुकुम मताआ अख़ीहि जाद्दवं वला लाइबन।

अनुवादः तुम में से हरगिज कोई अपने भाई का माल न तो संजीदगी से ले और न हंसी में।

आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया किसी की छड़ी भी बग़ैर इजाज़त न उठानी चाहिये, आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि किसी को यह हक़ नहीं है कि वह किसी का दूध देने वाला जानवर पा जाये और बग़ैर इजाज़त उसका दूध दुह ले, आप (स.अ.व.) ने एक मिसाल दे कर फ़रमाया कि तुम्हारे खाने पीने की कोई चीज़ किसी बरतन में हो क्या तुम पसन्द करोगे कि उसको तोड़ दिया जाये और वह चीज़ गिर जाये तो जिस तरह तुम यह गवारा नहीं करोगे कि तुम्हारे खाने पीने की चीज़ को कोई इस तरह बरबाद कर दे, जानवर भी ग़िज़ा के बरतन की तरह हैं उनको मालिक की इजाज़त के बग़ैर ख़ाली कर देना सही नहीं है। (मुस्लिम)

आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि अगर कोई शख़्स एक बालिश्त ज़मीन भी किसी की नाहक़ दबा ले तो क़यामत के दिन उसकी सात गुली ज़मीन का बोझल तौक़ उसके गले में डाल दिया जायेगा।

आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि अगर कोई शख़्स किसी की ज़मीन पर बग़ैर उसकी इजाज़त के खेती करे तो उसको उस खेती का हासिल नहीं दिया जाय हाँ उसकी मेहनत की मज़दूरी देदी जाये। इस्लामी क़ानून में इसी पर अमल होगा एक हदीस में है कि क़यामत में किसी का हक़ मारने वाले से कहा जायेगा कि वह ग़सब की हुई चीज़ को वापस करे, ज़ाहिर है कि वह ऐसा नहीं कर सकेगा इस लिये उसकी नेकी का कुछ हिस्सा उस शख़्स को दे दिया जाएगा जिसकी चीज़ ग़सब की गई होगी। अगर उसके आमालनामे में कोई नेकी न होगी तो हक़दारों के गुनाहों का कुछ बोझ उस पर डाल दिया जायेगा और जिसके साथ ज़्यादती की गई थी उसको अज्र मिलेगा शर्त यह है कि उसने भी ज़ुल्म के बदले में ज़ुल्म और ग़सब के जवाब में ग़सब न किया हो यह तो था आख़िरत का अज़ाब, दुनिया में ज़ुल्म की सज़ा की तफ़सील आगे ज़िक्र की जा रही है।

इस्तिलाहें: (1) ग़ासिब, ग़सब करने वाला (2) मग़सूब, वह चीज़ जो ग़ासिब ने ग़सब की है (3) मग़सूब मिनहु, वह शख़्स जिसका माल ग़सब किया गया है।

ग़सब की शरई परिभाषा: किसी हलाल माल को उसके जाइज़ मालिक की इजाज़त के बग़ैर इस तरह लेना कि वह मग़सूब मिनहु (यानी असल मालिक) के क़ब्ज़े से निकल कर ग़ासिब के क़ब्ज़े में आ जाये।

ग़सब का हुक्म: 1. जैसा कि बयान किया जा चुका है किसी की चीज़ उसकी इजाज़त के बग़ैर ले लेना बड़ा गुनाह है, अगर लेने वाले ने जानबूझ कर ऐसा किया है, अगर ग़लती से या धोखा खा कर अपनी चीज़ समझते हुए किसी की कोई चीज़ ले ली तो गुनाह तो नहीं होगा सिर्फ़ वह चीज़ वापस करनी होगी। ग़लती और चूक को अल्लाह तआला माफ़ कर देता है। अगर सच्चे दिल से माफ़ी मांगी

जाये। शरीअत के मुताबिक़ दोनों सूरतों में मग़सूब चीज़ मग़सूब मिनहु को वापस करना होगी, या उसका तावान देना पड़ेगा।

2. ग़ासिब के पास मग़सूब वैसे का वैसा ही पड़ा हो तो वही उससे वापस लिया जाएगा लेकिन अगर उसे ख़र्च कर दिया या ख़राब कर दिया तो अगर वह चीज़ ऐसी थी कि उसी तरह की मिल सकती है तो ख़रीद कर वापस करना होगी लेकिन अगर नहीं मिल सकती या बिलकुल उसी तरह की नहीं मिल सकती तो फिर उसकी क़ीमत देना पड़ेगी।

3. मग़सूब माल की क़ीमत ग़ासिब वापस कर दे और मग़सूब मिनहु कुबूल न करे तो हुकूमत उसको लेने पर मजबूर करेगी।

4. मग़सूब चीज़ में ख़राबी या कमी आने की वजह से अगर मामूली ख़राबी है तो वह चीज़ वापस करने के साथ ख़राबी के मुताबिक़ तावान भी देना पड़ेगा। लेकिन अगर ज़्यादा ख़राबी आई है तो मालिक को इख़्तियार होगा कि वह चीज़ वापस ले और नुक़सान के बराबर उसका तावान ले ले, या चीज़ वापस न ले बल्कि पूरी क़ीमत वसूल कर ले।

5. अगर ग़ासिब ने मग़सूब चीज़ में ऐसी तबदीली कर दी कि उसकी शक्ल या नाम बदल गया जैसे गेहूं ग़सब कर के उसका आटा बना दिया या बकरी ग़सब करके ज़िब्ह कर डाला तो यह समझा जाएगा कि यह चीज़ ग़ासिब की मिलकियत बन गई तो उसको चीज़ की पूरी क़ीमत देना पड़ेगी और जब तक क़ीमत अदा नहीं कर देगा उसको इस्तेमाल का हक़ न होगा, इसी तरह अगर किसी ने कपड़ा ग़सब किया और उसे रंगवा लिया तो मालिक को कपड़ा लेने या पूरी क़ीमत लेने यानी दोनों बातों का हक़ होगा, कपड़ा लेने की सूरत में रंगाई की क़ीमत मालिक को देना पड़ेगी, इसी तरह अगर किसी ने सोना या चांदी ग़सब करके उसका ज़ेवर

बनवा लिया तो इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाह अलैहि वही चीज़ मालिक को वापस कर देने का हुक्म देते हैं। मगर साहिबैन के नज़दीक ज़ेवर नहीं बल्कि सोने या चांदी की क़ीमत दिलाई जायेगी।

6. मग़सूब चीज़ में जो ख़ुदबख़ुद ज़्यादती होगी वह सब मालिक (यानी मग़सूब मिनहु) की होगी जैसे जानवर ने बच्चा दिया बाग़ में फल आ गया तो यह सब मालिक का हक़ है अगर ग़ासिब उसे बेचे या बरबाद करेगा तो तावान देना पड़ेगा।

7. अगर ग़ासिब ने ग़सब करने के बाद उसमें ख़ुद कुछ बढ़ोतरी कर दी जैसे ज़मीन को ग़सब करके मकान बना लिया या उसमें पेड़ लगा लिये तो उसे हुक्म दिया जायेगा कि अपनी तामीर को ढा दे, पेड़ों को काट ले जाये लेकिन अगर मकान को गिराने या पेड़ों को काटने से ज़मीन को कोई नुक़सान होता हो तो मालिक अगर उसकी क़ीमत देकर ख़ुद ले ले तो यह बाद अख़लाक़न ज़्यादा ठीक है बनिसबत उसके कि क़ानूनन ग़ासिब पर ज़्यादती की जाये।

माल की बरबादी

किसी का नुक़सान कर देना या जानबूझ कर किसी नुक़सान का सबब बनना भी बड़ा गुनाह है। जान से मार डालना तो सब से बड़ा गुनाह है, इसके अहकाम भी बहुत सख़्त हैं, यहाँ सिर्फ़ माल के बरबाद होने के अहकाम का ज़िक्र मक़सूद है।

एक बार हज़रत आयशा (र.त.अ.) ने हज़रत सफ़िय्या (र.त.अ.) का बरतन तोड़ दिया तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उसका तावान दिला दिया, इस लिये अगर कोई शख़्स किसी की चीज़ जान बूझ कर या अंजाने में खो देता है तो उसका तावान देना पड़ेगा, जान बूझ कर ऐसा करने में गुनाह भी होगा और तावान भी देना पड़ेगा जबकि अनजाने में खोने में गुनाह तो नहीं होगा मगर तावान लिया जाएगा।

किसी चीज़ को खोने या नुक़सान पहुंचाने की दो सूरतें होती हैं एक तो यह कि सीधे-सीधे कोई चीज़ खो दी जाये या उसको नुक़सान पहुंचा दिया जाये। दूसरे यह कि कोई काम नुक़सान करने का या खो देने का सबब बना, जैसे किसी ने एक चीज़ ज़मीन पर पटक दी और वह टूट गई या जानबूझ कर ऐसी जगह रख दी या किसी नासमझ बच्चे के हाथ में दे दी कि गिर कर टूट गई, तो पहली सूरत में सीधे-सीधे नुक़सान किया गया, जबकि दूसरी सूरत में वह नुक़सान का सबब बना। दोनों सूरतों में तावान लाज़िम होगा, पहली सूरत में तो नुक़सान पहुंचाने वाला पहला और आख़िर एक ही शख़्स है लेकिन दूसरी सूरत में एक दूसरा शख़्स भी नुक़सान पहुंचाने का मुरतकिब हुआ तो पहले शख़्स पर उसकी ज़िम्मेदारी नहीं रहेगी, जैसे किसी ने रास्ते में कुवाँ खोद लिया अब अगर कोई आदमी उसमें ख़ुद गिर गया तो उसका ख़ूंबहा कुवाँ खोदने वाले को देना पड़ेगा। लेकिन अगर कोई दूसरा आदमी किसी आदमी या जानवर को

कुएँ में गिरा दे तो उसकी ज़िम्मेदारी गिराने वाले पर होगी कुवाँ खोदने वाले पर नहीं होगी।

बराहेरास्त नुक़सान करना: बराहेरास्त नुक़सान करने वाले को तावान देना पड़ेगा चाहे वह जानबूझ कर किया हो या अंजाने में। जैसे किसी ने कोई चीज़ मुसतआर ली या किराये के तौर पर ली या अमानत के तौर पर रखी और उसने उसको जानबूझ कर तोड़ दिया या ग़लत तरीक़े पर इस्तेमाल किया और उसकी उस तरह से हिफ़ाज़त नहीं की जिस तरह करनी चाहिये तो उस को नुक़सान का जुर्माना देना पड़ेगा, जैसे किसी ने साइकल ली और ख़राब रास्ते पर या भीड़ में तेज़ चलाई और कोई पुरज़ा टूट गया या किसी से लड़ गई। तो उसको उसका जुर्माना देना पड़ेगा, या किसी से किताब आरियतन (वक़्ती तौरपर) ली और उसे ऐसी जगह रख दिया कि चूहे ने उसका कुछ हिस्सा काट डाला या किसी बच्चे ने उसे फाड़ दिया तो उसको नुक़सान के बराबर जुर्माना देना पड़ेगा और अगर वह बिल्कुल बेकार हो गई तो पूरी क़ीमत देना पड़ेगी।

2. कोई फ़िसल कर गिर पड़ा और हाथ में दूसरे की कोई चीज़ थी जो टूट गई या किसी चीज़ के ऊपर गिर पड़ा और वह चीज़ टूट गई तो दोनों सूरतों में तावान देना पड़ेगा।

3. किसी दूसरे शख़्स की कोई चीज़ अपनी समझ कर तोड़ी दी या गुम कर दी या ख़र्च होने वाली चीज़ को ख़र्च कर दिया तो उसका भी जुर्माना देना पड़ेगा।

4. एक शख़्स ने किसी का कपड़ा पकड़ कर खींचा और वह फट गया तो पूरी क़ीमत देना पड़ेगी लेकिन अगर उसने दूसरे आदमी का दामन पकड़ा और दूसरे ने झटका दे कर छुड़ाया और कपड़ा फट गया तो आधी क़ीमत देना पड़ेगी क्योंकि दोनों के काम से कपड़ा फटा इस लिये ज़िम्मेदारी आधी आधी डाली जाएगी।

5. अगर किसी का बच्चा किसी शख़्स की चीज़ का नुक़सान कर दे तो तावान उसके वारिस से नहीं लिया जा सकता। हाँ उस बच्चे के नाम कोई माल या जायदाद है तो उससे उसकी क़ीमत अदा की जाएगी या उस वक़्त तक इन्तिज़ार किया जाएगा जब वह अदा करने के क़ाबिल हो जाए, यह क़ानूनी हुक्म है लेकिन अख़लाक़न बच्चे का बाप जो उसके ख़र्च का ज़िम्मेदार है क़ीमत अदा कर सकता है।

6. अगर किसी शख़्स ने दूसरे के मकान का कोई हिस्सा गिरा दिया या कोई पेड़ काट दिया या पेड़ का फल तोड़ कर गिरा दिया तो नुक़सान करने वाले को तावान देना पड़ेगा। मकान जो गिरा दिया उसके मलबे की क़ीमत (अगर उसकी कोई क़ीमत है) तै करके बक़िया का तावान काट कर बाक़ी का तावान मकान के मालिक को दिया जाएगा। मकान के मालिक को इख़्तियार है कि मलबा मकान ढाने वाले को दे दे और पूरे नुक़सान का बदला ले ले, इसी तरह पेड़ की लकड़ी और फल की क़ीमत निकाल कर के जुर्माना ले या पूरी क़ीमत ले दोनों बातों का इख़्तियार है।

7. अगर गांव या मुहल्ले में आग लग जाये और लोग इस ख़याल से कि दूसरे मकानों तक न पहुंचे पास का मकान गिरा दें और पीट पीट कर आग को दबा दें तो मकान गिराने या आग बुझाने में कोई चीज़ टूट गई तो उसका तावान उन लोगों को देना पड़ेगा जिन लोगों ने नुक़सान किया है लेकिन अगर हुकूमत के ज़िम्मेदारों के हुक्म से मकान गिराया गया या उसको नुक़सान पहुंचाया गया है तो गिराने वालों से कोई जुर्माना नहीं लिया जा सकता, उसकी ज़िम्मेदारी हुकूमत पर होगी।

नुक़सान के बदले में नुक़सान करना जाइज़ नहीं: 8. अगर ज़ैद ने उम्र की किसी चीज़ या माल का नुक़सान किया है तो उम्र उससे तावान ले सकता है लेकिन शरीअत ने यह हक़ नहीं दिया है कि वह

ज़ैद की किसी चीज़ या माल का नुक़सान करे, अगर ऐसा करेगा तो गुनहगार होगा और ज़ैद की चीज़ के नुक़सान का जुर्माना भी देना पड़ेगा, नुक़सान के बदले में नुक़सान पहुंचाना जाइज़ नहीं, सिर्फ़ जुर्माना की बदला हो सकता है, वर्ना दोनों को एक दूसरे के नुक़सान का बदला देना पड़ेगा।

नुक़सान करने पर तावान है सिर्फ़ हुक्म देने पर नहीं है:
9. अगर ख़ालिद ने तारिक़ से कहा कि ज़ैद की फ़लाँ चीज़ तोड़ दो या फेंक दो या किसी और तरह का नुक़सान पहुंचाओ तो सज़ा और तावान नुक़सान करने वाले पर है हुक्म देने वाले पर नहीं, हाँ अगर यह हुक्म इस्लामी हुकूमत का ज़िम्मेदार दे या ऐसा करने पर उसे मजबूर कर दिया जाये तो इन दोनों सूरतों में करने वाले पर ज़िम्मेदारी नहीं है।

नुक़सान का सबब बनना:

"اَلْمُسَبِّبُ لَايُضْمَنُ اِلَّا بِالتَّعَمُّدِ"

''अल मुसब्बिबु ला युज़मनु इल्ला बित्तअम्मुदि''

अनुवाद: जान बूझ कर किसी नुक़सान का सबब बनने वाला ही ज़िम्मेदार क़रार दिया जाएगा।

इसकी निम्नलिखित व्याख्याएं हैं:

1. किसी ने किसी के कमरे या बक्स का ताला खोल दिया और इस सबब से कोई चीज़ चोरी हो गई तो उसका तावान कमरे या बक्स का ताला खोलने वाले पर होगा। इसी तरह किसी ने किसी की खेती या बाग़ में पानी जाने नहीं दिया जिससे खेती या फलों को नुक़सान हो गया या अपने खेत का ज़्यादा पानी दूसरे के खेत में काट दिया जिससे उसकी खेती बरबाद हो गई तो पानी के रोकने वाले और काटने वाले से उस का तावान लिया जाये, क्योंकि इन तमाम सूरतों में जानबूझ कर नुक़सान पहुंचाया गया।

2. कोई शख़्स रास्ते में जा रहा है और कोई जानवर उसे देख कर भड़का और रस्सी तुड़ा कर भाग गया और वह गुम गया तो उस शख़्स पर कोई ज़िम्मेदारी नहीं है, हाँ अगर उसने भड़का दिया था या छतरी दिखा कर डराया था तो उसे उसकी क़ीमत देना पड़ेगी। किसी ने शिकार करने के लिये बन्दूक़ चलाई और आवाज़ से डर कर कोई बच्चा गिर पड़ा और उसे मौत आ गई या कोई जानवर रस्सी तुड़ा कर भागा और गुम हो गया तो बन्दूक़ चलाने वाले पर कोई ज़िम्मेदारी नहीं है लेकिन अगर उसने जान बूझ कर डाराने के लिये ही बन्दूक़ चलाई थी तो वह ज़िम्मेदार होगा।

3. अगर किसी ने आम रास्ते पर कोई कुवाँ हुकूमत के हुक्म से खोदा और कोई गिर गया तो उस पर उसका ख़ूँबहा नहीं है बल्कि हुकूमत पर है लेकिन अगर खुद उसने अपनी तबीअत से ऐसा किया है तो उसको ख़ूँबहा देना पड़ेगा अगर उसने अपनी ज़ाती ज़मीन पर कोई कुवाँ खोदा है और कोई आदमी गिर कर मर गया तो उस पर कोई ज़िम्मेदारी नहीं है।

मज़दूरों और पेशावरों के नुक़सान करने और तावान लिये जाने का बयान इजारे के बयान में आ चुका है।

जानवरों से नुक़सान हो जाने का तावानः 1. अगर किसी का जानवर रात में या दिन में इत्तिफ़ाक़ से खुल गया और उसने किसी का खेत खा लिया तो इस नुक़सान का तावान जानवर के मालिक से नहीं लिया जा सकता, नबी करीम (स.अ.व.) का फ़रमान है -

अल-उजमाउ जुरहुहा जुबारुन — اَلْعَجْمَاءُ جُرْحُهَا جُبَارٌ

जानवरों के नुक़सान का कोई तावान नहीं है।

लेकिन अगर जानबूझ कर उसने खोल दिया या खुल जाने का इल्म हुआ और उसने बांधने की कोशिश नहीं की, या चरवाहा साथ था मगर इसके बावजूद खेत में जानवर पड़ गया तो इन तमाम सूरतों में चाहे रात हो या दिन तावान लिया जायेगा।

2. अगर कोई शख़्स अपने जानवर आम रास्ते से ले जा रहा है और जानवरों ने किसी का खेत चर लिया या कुचल दिया या उसमें घुस गए और बहुत से पेड़ पाधे बरबाद हो गए तो उसको तावान देना पड़ेगा। हाँ अगर जानवर ने पैर झाड़ा, दोलत्ती चलाई या दुम हिलाई और उससे कोई नुक़सान हो गया तो तावान नहीं होगा क्योंकि यह हैवान की फ़ितरत है जिससे मालिक उसको रोक नहीं सकता।

3. सवारी के जानवरों का भी यही हुक्म है जो आम जानवरों का है। लेकिन अगर रास्ते में कोई घोड़े या ऊँट पर सवार जा रहा है और किसी ने उसे भड़का दिया और वह भाग पड़ा तो जितना नुक़सान होगा उसका तावान भड़काने वाले के ज़िम्मे होगा सवार पर नहीं होगा। अगर भड़काने वाले को जानवर की दोलत्ती लगे और वह मर जाये तो उसका ख़ूँबहा भी मालिक से नहीं दिलाया जायेगा क्योंकि मरने वाले ने ख़ुद जानवर को छेड़ा था।

4. अगर दो चरवाहे जानवरों के साथ हों, एक उनके आगे (क़ाइद) और दूसरा उनके पीछे (साइक़) तो जानवरों से जो नुक़सान होगा उसका तावान उन दोनों चरवाहों से लिया जाएगा।

बे जान सवारियों से नुक़सान पहुंचने का तावानः वे बेजान सवारियाँ जो ड्राइवर (चलाने वाले) के ज़रिया चलाई जाती हैं चाहे जानबूझ कर उनसे नुक़सान पहुँचे या अनजाने में उसका तावान ड्राईवर से लिया जाएगा जैसा कि साइक़ और क़ाइद के बारे में अभी बयान किया गया, मगर यह कि कोई ख़ुद सवारी के आगे आ जाए या कोई चीज़ डाल दे तो फिर ड्राइवर की ज़िम्मेदारी नहीं है।

वकालत

बहुत से काम ऐसे पेश आ जाते हैं जिनको आदमी ख़ुद नहीं देता बल्कि दूसरे लोगों से करवाता है किसी काम को करने या न कर सकने की कई सूरतें हो सकती हैं - कभी यह होता है कि किसी काम की आदमी को ज़रूरत तो होती है लेकिन उसको पूरा करने की ख़ुद उसमें योग्यता नहीं होती, कभी यह होता है कि वह एक काम में मशग़ूल होता है और कोई दूसरा काम पेश आ जाता है इस लिये दूसरे से मदद लेने पर मजबूर होता है या यह कि वह काम इतना लम्बा चौड़ा और फैला हुआ होता है कि एक आदमी के बस का नहीं होता इस लिये दूसरों को शरीक करना पड़ता है, ग़र्ज़ यह कि जो काम आदमी ख़ुद कर लेता है या कर सकता है उसको दूसरों से भी करा सकता है। शरीअत में इसकी इजाज़त है और इसी को वकालत कहते हैं।

वकालत का अर्थ और उसकी ज़रूरत: वकालत का अर्थ सुरक्षा, ज़िम्मेदारी और काम बनाने का है, अल्लाह तआला की सिफ़त वकील भी है क्योंकि वह तमाम कामों का देख भाल करने वाला, रक्षक और कामों को बनाने वाला है। जब कहा जाता है कि फ़लाँ शख़्स फ़लाँ का वकील है तो इसका मतलब यह होता है कि उस का रक्षक या उसके बजाये उसका ज़िम्मेदार है, इसी से तौकील का शब्द है जिसका अर्थ किसी को निगराँ मुक़र्रर करने या किसी को काम का ज़िम्मेदार बनाने का है।

जो शख़्स अपना काम किसी दूसरे के हवाले करता है या उसका ज़िम्मेदार बनाता है उसे मुवक्किल और जो यह ज़िम्मेदारी क़बूल करता है उसे वकील और जिस काम के लिये वकील बना

उसे मुवक्कल फ़ीह या मुवक्कल बिही कहते हैं, मिसाल के तौर पर अहमद को एक घड़ी ख़रीदना है लेकिन उसे घड़ी की अच्छाई या बुराई की पहचान नहीं है इस लिये वह घड़ी की पहचान रखंने वाले एक शख़्स ख़ालिद से कहता है कि आप मेरे लिये एक घड़ी इतने रूपये में ख़रीद दीजिये, ख़ालिद इस बात को कुबूल कर लेता है तो अहमद मुवक्किल हुआ और ख़ालिद वकील और घड़ी "मुवक्कल बिही" हुई इसी तरह ऐसे तमाम कामों के लिये आदमी किसी को अपना वकील बना सकता है जिन्हें वह ख़ुद करने का हक़ तो रखता है लेकिन किसी वजह से नहीं कर पाता, ऐसे मौक़ों पर वकालत का ज़रिया इख़्तियार करने की शरीअत ने इजाज़त दी है जो इजमा से साबित है, फ़िक़ह के इमामों में किसी को इससे इख़तिलाफ़ नहीं है, कुरआन से उसका जवाज़ सूरह कहफ़ की इस आयत में है -

فَابْعَثُوْا اَحَدَكُمْ بِوَرِقِكُمْ هٰذِهٖ اِلَى الْمَدِيْنَةِ فَلْيَنْظُرْ اَيُّهَا اَزْكٰى طَعَامًا فَلْيَاْتِكُمْ بِرِزْقٍ مِّنْهُ. (سورہ کہف، آیت ۱۹)

फ़बअसू अहदकुम बिवरिक़िकुम हाज़िही इलल मदीनति फ़लयन्ज़ुर अय्युहा अज़का तआमन फ़लयातिकुम बिरिज़्क़िम्मिनहु।

अनुवादः अपने में से किसी को यह सिक्का देकर शहर में भेजो और वह देखे कि सबसे अच्छा खाना कहाँ मिलता है वहाँ से वह कुछ खाने के लिये लाये।

नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने ख़ुद अपने बहुत से कामों के लिये दूसरों को वकील बनाया है, जैसे आपने हज़रत हकीम बिन हिज़ाम को अपने लिये कुर्बानी का जानवर ख़रीदने के लिये फ़रमाया और वह ख़रीद कर लाये और आप (स.अ.व.) ने हज़रत अबू राफ़ेअ को उम्मुल मोमिनीन हज़रत मैमूना (र.त.अ.) से निकाह के लिये अपना वकील बना कर भेजा, उस वक़्त आप मदीने में थे

और हज़रत मैमूना (रज़ि०) बिन्त हारिस मक्के में थीं। इस से ज़ाहिर है कि ख़रीद व फ़रोख़्त, मुज़ारबत, शिर्कत, रहन, सुलह अपने दावे की पैरवी निकाह वग़ैरा कामों में अपना वकील बनाने की शरीअते इस्लामी में इजाज़त है।

वकालत की फ़िक़्ही परिभाषा और वकील की हैसियत: वकालत का शब्द आम तौर से हमारी ज़बान में उस पेशे के लिये बोला जाता है जिसके ज़रिये हक़ या नाहक़, सच या झूट अपना दावा मनवाने की कोशिश की जाती है और वकील वह कहलाता है जो ग़ैर इस्लामी क़ानून के ज़रिये ग़ैर इस्लामी अदालत के सामने ऐसे मुक़द्दमात की पैरवी और नुमाइन्दगी करता है लेकिन इस्लामी शरीअत में वकालत का मतलब इससे बहुत बुलंद है वकील हक़ व नाहक़ की तमीज़ के बग़ैर पैसा कमाने वाले को नहीं कहते। जो जाइज़ ज़िम्मेदारी किसी इन्सान के हवाले की जाती है उसके लिये शरीअत में अमानत का शब्द बोला जाता है यानी वह उस ज़िम्मेदारी को उसी तरह अदा करे जिस तरह एक अमीन अपनी अमानत को अदा करता है। वकालत भी एक ज़िम्मेदारी है और उसे इसी तरीक़े से पूरा करना है जिस तरह एक अमीन अमानत की ज़िम्मेदारी को पूरा करता है, वकालत की परिभाषा फ़ुक़हा ने इस तरह से की है تَفْوِيْضُ اَحَدٍ اَمْرَهٗ لِاٰخَرَ وَاِقَامَتُهٗ مَقَامَهٗ. "तफ़वीज़ु अहदिन अमरहू लिआख़रा व इक़ामतुहू मक़ामहू" किसी को अपना काम सोंपना और उसे अपना नायब बना देना।

किसी से भी मुआमला करने के लिये दो चीज़ें बुनियादी तौर पर ज़रूरी हैं - (1) तराज़ी यानी मुआमला करने वालों की रज़ामंदी और (2) मुआमले का हराम, बातिल और नाहक़ न होना, ज़ाहिर है कि किसी ग़ैर इस्लामी अदालत से रुजूअ करना और ग़ैर इस्लामी क़ानून के मुताबिक़ फ़ैसला चाहना, इस्लामी शरीअत के नज़दीक बातिल है और बातिल पर राज़ी होना हराम है। वकालत के पेशे की

यह महदूद, ग़लत और ग़ैर ज़िम्मेदाराना हैसियत इस्लामी शरीअत में मक़बूल नहीं है बल्कि वकालत का मतलब अमानत और हक़ की ज़िम्मेदारी को पूरा करना है।

वकालत दो क़िस्म की होती है: (1) वकालत बा उजरत और (2) वकालत बे उजरत, दोनों के अहकाम एक जैसे हैं सिर्फ़ एक मुआमले में वकील बे उजरत की ज़िम्मेदारी वकील बा उजरत से कम हो जाती है जिसका ज़िक्र आगे आ रहा है।

मज़दूरी लेकर या कमीशन पर काम करने वाला वकील बा उजरत कहलाता है इसी तरह हुकूमत के तमाम मुलाज़िम अपनी हुकूमत की मर्ज़ी की मुताबिक़ काम करते हैं, वे हुकूमत के वकील बा उजरत होते हैं। इसी तरह अगर आप अपने ज़ाती मुलाज़िम से काम लें या कोई कमीशन एजेन्ट मुक़र्रर कर दें तो दोनों आपके वकील क़रार पाएँगे यानी उन्हें आपकी हिदायत के मुताबिक़ काम करना होगा।

वकालत के अरकान व शर्तें:

1. दूसरे तमाम मुआमलात की तरह वकालत में भी मुवक्किल और वकील आपस में समझौता करते हैं इस लिये दोनों का ईजाब व क़बूल ज़रूरी है ज़बानी या लिखित रूप में जैसे आपने किसी से कहा या किसी को लिखा कि मेरा फ़लाँ काम आप कर दीजिये और उसने कह दिया या लिख दिया कि मैं आपका फ़लाँ काम करूंगा तो ईजाब व क़बूल हो गया। या उसने कोई जवाब ज़ुबानी या लिख कर तो नहीं दिया मगर आपका काम करना शुरू कर दिया तो अब वह वकील हो गया अगर वह ज़बानी या लिखित रूप में आपके कहने या लिखने को रद्द कर दे तो उसको इसका हक़ है।

2. ईजाब व क़बूल के बाद दूसरी शर्त यह है कि वकील मुवक्किल की राय और मर्ज़ी के मुताबिक़ काम करे क्योंकि अगर वह आपकी मर्ज़ी और राय से मुख़ातलिफ़ कोई काम करेगा तो उसकी ज़िम्मेदारी उसी पर होगी जैसे आपने अपने मुलाज़िम से एक

थान छालटीन का लाने को कहा और वह मारकीन ख़रीद लाया या आपने मुनक्क़े मंगवाए और वह किशमिश ख़रीद लाया, आपने कहा आधा किलो सेब ख़रीद लाओ और वह एक किलो नाशपाती ले आया वग़ैरा वग़ैरा तो आप ये चीज़ें वापस कर सकते हैं अगर दुकानदार वापस न ले और आप भी रखना ना चाहें तो मुलाज़िम या तो उसे बेच दे या अपने इस्तेमाल में लाये, आप उससे अपने दाम वसूल कर सकते हैं। इसी तरह अगर हुकूमत के मुलाज़िम और काम करने वाले अगर हुकूमत की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ काम करें जिससे कोई नुक़सान हो जाये तो उसकी ज़िम्मेदारी उस मुलाज़िम काम करने वाले पर होगी। लेकिन अगर आपने वज़न नहीं बताया और कहा कि गोश्त ला दो या कपड़े की क़िस्म नहीं बताई और कहा कि दस गज़ कपड़ा ले आओ तो वह जितना भी गोश्त और जैसा भी कपड़ा लाएगा उसे लेना पड़ेगा।

3. तीसरी शर्त यह है कि मुवक्किल और वकील दोनों अक़्लमंद और तमीज़ वाले हों नासमझ बच्चे या पागल न किसी को वकील बना सकते हैं न ख़ुद वकील बन सकते हैं।

4. वकील चूंकि एक अमीन और मुवक्किल के नुमाइन्दे की हैसियत रखता है इसलिये जो काम उसके हवाले किया गया है उसकी निसबत अपनी तरफ़ करना सही नहीं है, मुवक्किल की तरफ़ होना चाहिये। हां ख़रीद व फ़रोख़्त, किराये पर देना या लेना, मज़दूर मुक़र्रर करना इस शर्त से अलग हैं। दोनों सूरतों में फ़र्क़ यह है कि जिन मुआमलात में अपनी तरफ़ निसबत करना सही नहीं है उनमें मुतालबा मुवक्किल से होगा वकील से नहीं जैसे अगर किसी से किसी का निकाह वकील की हैसियत से कर दिया तो औरत महर की माँग वकील से नहीं मुवक्किल से करेगी। किसी मुक़द्दमे का फ़ैसला उसके ख़िलाफ़ हुआ तो उसका जो जुर्माना होगा या जो जायदाद और माल अदा करना होगा वह सब मुवक्किल अदा करेगा वकील से कोई मतलब नहीं। जिन मुआमलों की निसबत अपनी तरफ़ करने की

इजाज़त वकील को नहीं है अगर उनकी निसबत अपनी तरफ़ करता है तो उसकी वकालत सही नहीं है। जिन मुआमलात में उसको अपनी तरफ़ निसबत करने की इजाज़त है उस काम से जितने मुतालबात संबंधित होंगी उसका ज़िम्मेदार वही होगा। जैसे आपके मुलाज़िम ने कोई चीज़ उधार ख़रीदी और यह नहीं बताया कि वह किसके लिये ख़रीद रहा है तो अब दुकानदार उसी से मुतालबा करेगा मुवक्किल से नहीं कर सकता लेकिन अगर मुलाज़िम ने यह कह कर कोई चीज़ उधार ख़रीदी या बेची कि यह फ़लाँ साहब की है या फ़लाँ साहब के लिये है तो फिर उसके ऊपर ज़िम्मेदारी नहीं है, उसकी हैसियत एक दूत की होगी। इस लिये अगर किसी ने किसी को अपने कारोबारी उमूर का वकील बनाया फिर अगर वकील मुवक्किल की कोई चीज़ हिबा करे या उसके लिये भेंट क़बूल करे या उसके लिये कोई चीज़ आरियतन (वक़्ती तौरपर) ले या दे या किसी मुआमले में शिर्कत करे या मुज़ारबत के तौरपर रूपया ले या उसके नाबालिग़ लड़के या लड़की का निकाह करे या उसके मुक़द्दमे की पैरवी करे तो वकील को मुआमला करने वालों से स्पष्ट कर देना ज़रूरी है कि मैं फ़लाँ की तरफ़ से वकील की हैसियत से काम कर रहा हूँ। लेकिन अगर ख़रीद व फ़रोख़्त या इजारा व किराए का वकील बनाया गया है तो मुवक्किल का नाम लिए बग़ैर भी वह ख़रीद व फ़रोख़्त कर सकता है और कोई चीज़ किराया पर ले या दे सकता है।

5. वकील ने मुवक्किल के लिये कोई चीज़ ख़रीदी या किसी से उसका क़र्ज़ वसूल किया, लाते हुये रास्ते में चीज़ हाथ से गिर के टूट गई या रूपया कहीं खो गया तो अगर उसमें जानबूझ कर करने या लापरवाही और ग़फ़लत का दख़ल नहीं है तो उसका तावान नहीं लिया जा सकता। क्योंकि उसकी हैसियत अमीन की है और अमानत गुम हो जाने पर तावान नहीं है। लेकिन यह बात साबित होने पर कि चीज़ साफ़ तौर से ग़फ़लत और लापरवाही से बरबाद हुई है या जान बूझ कर ऐसा किया गया है तो उस पर ज़िम्मेदारी होगी।

6. वकील को यह हक़ नहीं है कि जिस चीज़ को मुवक्किल ने अपने लिये ख़रीदने को कहा हो उसे वह खुद ख़रीद ले, हां अगर मुवक्किल ने यह बता दिया था कि फ़लाँ क़ीमत से ज़्यादा क़ीमत न दी जाये और उस क़ीमत पर वह चीज़ नहीं मिल रही है तो उसे हक़ है कि ज़्यादा क़ीमत पर अपने लिये ख़रीद ले लेकिन क़ीमत का ज़िक्र अगर नहीं किया था तो फिर वह चीज़ उसको अपने लिये किसी क़ीमत पर ख़रीदने का हक़ नहीं है।

7. अगर मुवक्किल ने वकील को किसी मुआमले में अपनी तरफ़ से काम करने को कहा और कोई क़ैद नहीं लगाई तो वह अपने हिसाब से जिस तरह चाहे मुआमले को तै कर सकता है लेकिन यह इख़्तियार उसको मशहूर तरीक़ों और आम रिवाज के ख़िलाफ़ जाने की इजाज़त किसी हाल में नहीं दे सकता।

8. मुक़द्दमा चाहे वह दीवानी मुआमले से संबंधित हो या फ़ौजदारी से ग़ैर इस्लामी अदालत में ग़ैर इस्लामी क़ानून के मुताबिक़ किसी मुसलमान को ले जाने की इजाज़त नहीं है, और न ग़ैर इस्लामी क़ानून की तौजीह (स्पष्टता) के लिये किसी मुसलमान को वकील बनना चाहिये, कुरआन में उन लोगों को ज़ालिम, फ़ासिक़, बल्कि काफ़िर तक कहा गया है जो ग़ैर इस्लामी क़ानून के मुताबिक़ मुआमले का फ़ैसला कराएँ या ऐसी अदालत में ले जाएँ जो इस्लामी शरीअत के मुताबिक़ फ़ैसले न करती हो।

9. अगर किसी मुआमले में दो आदमियों को वकील बनाना हो तो दोनों को मौजूद रहना चाहिये।

10. वकील को खुद बख़ुद किसी दूसरे को वकील बनाने का हक़ नहीं है, जब तक मुवक्किल की मर्ज़ी न मालूम हो। आपने कोई चीज़ अपने मुलाज़िम से मंगाई उसने पैसा किसी दूसरे को दे दिया और कह दिया कि फ़लाँ चीज़ लेते आना। आपको यह हक़ है कि दूसरे की लाई हुई चीज़ को लें या वापस कर दें।

11. कोई जिन्स या कोई चीज़ लाने के लिये किसी शख़्स को वकील बनाया तो उसे यह हक़ नहीं है कि वह चीज़ अपने पास से आपको दे दे, अगर चीज़ उसके पास है और वह उसे बेचना चाहता है तो उसे बता देना चाहिये कि यह चीज़ मेरे पास है अगर इजाज़त हो तो मैं ही दे दूं।

वकील की बरतरफ़ी:

1. किसी काम के करने से पहले या बाद में मुवक्किल को हक़ है कि वकील को अलग कर दे, लेकिन अगर वकील ने काम अधूरा किया है तो अलग करने का हक़ नहीं है। अगर इससे किसी का हक़ मारा जाता हो या नुक़सान होता हो। इसी तरह काम करने से पहले वकील को भी अलग हो जाने का हक़ है। लेकिन काम अधूरा करने की सूरत में उसे भी अलग होने का हक़ नहीं है अगर उससे किसी का हक़ मारा जाता हो या नुक़सान होता हो, लेकिन अगर कोई हक़ उसके ऊपर न हो और न किसी को कुछ नुक़सान पहुंचता हो तो फिर वकील के अलग हो जाने या मुवक्किल के अलग करने में कोई हर्ज नहीं है।

2. वकील को अलग करने की ख़बर चाहे ज़बानी दी जाये या लिख कर या किसी आदमी के ज़रिये, ये तमाम सूरतें सही हैं, इसी तरह वकील मुवक्किल को अपनी मजबूरी की ख़बर ज़बानी, लिख कर या किसी आदमी के ज़रिये दे दे तो यह भी सही है यानी वकालत से अलाहदगी हो जाएगी।

वक़्फ़

वक़्फ़ के लुग़वी और इस्तिलाही अर्थः वक़्फ़ का अर्थ डिक्शनरी में रोक लेने, क़ायम व साकिन (स्थिर) कर देने के हैं, शरीअत की परिभाषा में अपनी कोई चीज़ या उसका फ़ायदा किसी एक मक़सद या नेक काम के लिये ख़ास कर देने को वक़्फ़ कहते हैं। जिस तरह सदक़ा कर देने से वह चीज़ आपकी नहीं रहती लेकिन उसका सवाब आपको मिलता रहता है इसी तरह किसी चीज़ को नेक काम के लिये वक़्फ़ कर देने से भी वह चीज़ वाक़िफ़ की मिलकियत नहीं रहती बल्कि जिस अच्छे काम के लिये सवाब की नियत से वक़्फ़ किया है उसका सवाब उसके नामा-ए-आमाल में लिखा जाता रहेगा जब तक लोग उससे फ़ायदा उठाते रहेंगे। इस तरह सदक़े से भी ज़्यादा अज्र उसको मिलेगा। नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया कि मौत के बाद इन्सान के तमाम आमाल उससे कट जाते हैं मगर तीन आमाल ऐसे हैं जिनका सवाब उसको बराबर मिलता रहेगा। صَدَقَةٌ جَارِيَةٌ اَوْ عِلْمٌ يُنْتَفَعُ اَوْ وَلَدٌ صَالِحٌ يَدْعُوْ لَهُ. "सदक़तुन जारियतुन औ इल्मुन युनतफ़उ औ वलदुन सालिहुन यदऊ लहू" (1) सदक़ा-ए-जारिया या (2) इल्म जिससे लोग फ़ायदा उठाएँ या (3) नेक और सालेह औलाद जो उसके लिये दुआ करे। सदक़ा-ए-जारिया से मुराद अपनी चीज़ को ख़ैर और भलाई के कामों में ख़र्च होने के लिये वक़्फ़ (दान) कर देना है क्योंकि उसका सवाब मिलता रहता है जब तक वह नेक काम होता रहे और लोग उससे फ़ायदा उठाते रहें। इल्म से फ़ायदा उठाने का मतलब यह है कि इल्मे दीन लोगों को पढ़ाया और उन्होंने दूसरों को पढ़ाया या कोई किताब इस जज़्बे से लिखी कि लोग उसे पढ़ते और दीन का इल्म

हासिल करते रहें। तो जब तक उस किताब और इल्म से लोगों को फ़ायदा पहुंचता रहेगा उसका सवाब मिलता रहेगा।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और सहाबा किराम (र.त.अ.) जब मक्के से हिजरत कर के मदीना तशरीफ़ लाये तो वहाँ मेठे पानी की बड़ी कमी थी, शहर के जिस हिस्से में आप और मुहाजिरीन आबाद थे उसमें सिर्फ़ एक कुवां (बिर-ए-रूमा) था जो एक शख़्स की मिलकियत था जिसका पानी वह क़ीमत लेकर देता था आप (स.अ.व.) ने उससे कहा कि "तुम उसको आम लोगों के लिये वक़्फ़ कर दो ख़ुदा उसका बदला जन्नत में देगा" उसने अर्ज़ किया "या रसूलल्लाह! मेरे और मेरे बाल बच्चों की परवरिश के लिये इसके अलावा कोई और ज़रिया नहीं है"। इसके बाद आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि जो शख़्स इसको ख़रीद कर आम मुसलमानों के लिये वक़्फ़ कर दे ख़ुदा उसका अज्र जन्नत में देगा, यह फ़रमान हज़रत उसमान (र.त.अ.) तक पहुंचा तो उन्होंने 35 हज़ार दिर्हम देकर कुवाँ उसके मालिक से ख़रीद लिया और आंहज़रत (स.अ.व.) की ख़िदमत में आकर उसकी ख़बर दी, आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया "जअलतुहा लिलमुस्लिमीन" मैंने इसको आम मुसलमानों के लिये वक़्फ़ कर दिया। (अल-मुनतक़ा)

इसी तरह हज़रत उमर रज़िअल्लाह अनहु ने अपना एक बाग़ सदक़ा (दान) कर देने का इरादा ज़ाहिर किया तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि बाग़ को अपने क़ब्ज़े में रखो और उसका फ़ल ग़रीबों मिस्कीनों और ज़रूरतमंदों के लिये मख़सूस कर दो, चुनाचे उन्हों ने ऐसा ही किया और यह एलान कर दिया कि अब न तो यह बाग़ बेचा जा सकता है न कोई उसे विरासत के हक़ के तौरपर ले सकता है। यानी नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बाग़ का निगरां हज़रत उमर (र.त.अ.) ही को बनाया लेकिन उसका फ़ायदा आम लोगों के लिये ख़ास कर दिया।

आप (स.अ.व.) का फ़रमान है कि जो शख़्स एक घोड़ा ख़ुदा की राह में ईमान व एहतिसाब के साथ वक़्फ़ करता है तो घोड़े का खाना पीना, उसका पेशाब व पाख़ाना और हर चीज़ उसके हक़ में नेकी है। (बुख़ारी)

जब क़ुरआन की यह आयत उतरी - لَنْ تَنَالُوا الْبِرَّ حَتّٰى تُنْفِقُوْا مِمَّا تُحِبُّوْنَ. "लन तनालुल बिर्रा हत्ता तुनफ़िक़ू मिम्मा तुहिब्बूना",

(तुम उस वक़्त तक नेकी नहीं पा सकते जब तक अपनी महबूब चीज़ों को ख़ुदा की राह में ख़र्च न करो) तो हज़रत अबू तलहा अंसारी ने नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से कहा बैरुहा की ज़मीन मुझे सबसे ज़्यादा पसन्द है मैं चाहता हूं इसे अल्लाह की राह में वक़्फ़ कर दूं! आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया तुम्हारे क़बीले में जो ग़रीब लोग हैं उनके लिये उसको वक़्फ़ कर दो, चुनाचे उन्हों ने हज़रत हस्सान बिन साबित, उबई इब्ने कअब और कुछ दूसरे ग़रीब ख़ानदान के लोगों के लिये वक़्फ़ कर दी। (बुख़ारी, व मुस्लिम)

ऊपर ज़िक्र की हुई हदीस से कई अहम बातें मालूम हुईं जिन को बयान किया जाता है -

1. पहली बात यह मालूम हुई कि एक शख़्स को सदक़ा देने का सवाब महदूद होता है लेकिन आम लोगों के लिये अपनी चीज़ को वक़्फ़ कर देना या आम लोगों के लिये कोई चीज़ बनवा कर या ऐसा काम करके जिसका फ़ायदा दो चार लोगों को नहीं बल्कि बेशुमार लोगों को पहुंचे छोड़ जाना बड़े अज्र का सबब है इसका सवाब उस वक़्त तक क़ायम रहता है जब तक वह चीज़ क़ायम रहती है जैसे किसी ने मदरसा क़ायम किया या किताबों की दुकान खोल दी तो जब तक लोग इन संस्थाओं से फ़ायदा उठाते रहेंगे उनके बनाने वालों को उसका सवाब पंहुंचता रहेगा। अज्र व सवाब के लिये दो शर्तें ज़रूरी हैं एक यह कि ख़ालिस अल्लाह की ख़ुशी की चाहत हो अपना नाम पैदा करने की ख़्वाहिश न हो वैसे ये चीज़ें ख़ुद-बख़ुद

हासिल हो जाएं तो उन्हें सिर्फ़ अल्लाह का फ़ज़ल समझा जाए। दूसरी शर्त यह है कि वक़्फ़ की हुई चीज़ सही माना में फ़ायदा पहुंचाने वाली हो यानी इन्सान की माद्दी दुनियादी ज़रूरत को इस तरह पूरी करती हो कि अख़लाक़ व किरदार में बिगाड़ न आने पाये। अगर ये दोनों बातें न होंगी तो वह चीज़ जब तक रहेगी सवाब के बजाये गुनाह की बढ़ोतरी वक़्फ़ करने वाले के नामा-ए-आमाल में होता रहेगा। नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का फ़रमान है कि जो शख़्स अच्छा तरीक़ा राइज कर जाएगा तो जो लोग उस पर चलेंगे उनका सवाब उसको मिलता रहेगा, और जो लोग बुरी राह दिखा जाएँगे उनकी गर्दन पर उन लोगों का अज़ाब भी डाल दिया जाएगा, अगर आपने शिफ़ाख़ाना बनाने के बजाए सिनेमा हाउस बना कर वक़्फ़ कर दिया, मदरसा बनवाया लेकिन मुश्रिकाना व मुलहिदाना (नास्तिकतावादी) तालीम का दरवाज़ा भी खुला रखा तो जितना अज़ाब सिनेमा देखने वालों और छात्रों के मुश्रिकाना व मुलहिदाना ख़यालात से उनपर होगा उतना ही अज़ाब आपकी गर्दन पर भी होगा।

2. दूसरी बात यह मालूम हुई कि आदमी जो चीज़ सदक़ा कर के या वक़्फ़ कर के देता है वह ऐसी चीज़ हो जिससे उसका दिली लगाव और मुहब्बत भी हो। अगर आपके पास कई मकान हैं और एक मकान वक़्फ़ करना चाहते हैं या कई ज़मीनें हैं और उनमें से एक को वक़्फ़ करना चाहते हैं तो वह मकान और वह ज़मीन वक़्फ़ कीजिये जिसको आप सबसे ज़्यादा पसन्द करते हों क्योंकि अल्लाह की ख़ुशी घटिया और रद्दी चीज़ से हासिल नहीं की जा सकती और न उसका सवाब मिलता है।

इसी तरह अगर आपका एक ही बच्चा है और उससे आपको बहुत ज़्यादा मुहब्बत है तो आपकी दीनदारी और इस्लामी हिस का तक़ाज़ा है कि उसको ग़ैर दीनी और अख़लाक़ को बिगाड़ने वाली तालीम न दिलाएँ बल्कि दीनी और ख़ुदापरस्ताना तालीम दिलाएं। ऐसे

ही बच्चे की ही दुआ और उसका अमल आपके लिए सदक़ा-ए-जारिया हो सकेगा, ग़लत तालीम व तर्बियत पा कर जो लड़का जवान होगा वह न तो अच्छे कर्मों वाला होगा कि उसके अच्छे कर्मों का सवाब आपको मिले और न वह आपके हक़ में दुआ कर सकेगा।

3. तीसरी बात यह कि जो चीज़ आप वक़्फ़ करें उसकी निगरानी ऐसे लोगों के हवाले होना चाहिये जो अमानतदारी से उस रिफ़ाही (जन-कल्याणकारी) काम में ख़र्च करें जिसके लिये आपने वक़्फ़ किया है जो शख़्स ख़ुद निगरानी करना चाहता हो उसे यह अमानत न सौंपी जाए और न फ़ासिक़ को उस काम पर रखा जाए जो इस्लामी आदेशों का पाबन्द न हो, ये दोनों बातें या एक भी जिस किसी में पाई जाएं उसको मुतवल्ली बनाना सही न होगा।

वक़्फ़ का हुक्म: आदमी जब अपनी ज़ुबान से कह दे कि फ़लाँ चीज़ मैं ने वक़्फ़ कर दी तो अब वक़्फ़ हो गई, उसने कोई ज़मीन क़ब्रिस्तान के लिये दे दी और उसमें किसी मय्यत को दफ़न कर दिया गया तो यह ज़मीन वक़्फ़ हो गई, वक़्फ़ दो तरह का होता है एक यह कि आदमी उसको ख़ुदा के लिए वक़्फ़ कर दे और उसके बाद उससे ख़ुद कोई फ़ायदा न उठाए, दूसरी सूरत यह कि वह यह शर्त लगा दे कि मैं अपनी ज़िन्दगी भर इससे फ़ायदा उठाऊंगा और मेरे बाद यह आम मुसलमानों के लिये होगा या मेरे बाद मेरी औलाद इसके कुछ हिस्से से फ़ायदा उठाएगी और बाक़ी आम लोगों के लिये होगा, तो दोनों सूरतों में वक़्फ़ की हुई चीज़ पर वक़्फ़ करने वाले का कोई हक़ नहीं रहता वह अल्लाह की हो गई, अब न वह उसको बेच सकता है और न हिबा कर सकता है न रहन रख सकता है न उसमें विरासत जारी हो सकती है, हाँ अगर अपने या अपनी औलाद के लिये जितने हिस्से से फ़ायदा उठाने की क़ैद लगा दी है तो उतने हिस्से से वह फ़ायदा उठा सकते हैं। (हिदाया)

ज़रूरी मसाइलः

1. अगर वक़्फ़ की चीज़ ख़राब हो रही हो तो उसके मुतवल्ली का फ़र्ज़ है कि वह उसको ठीक कराए अगर उसकी आमदनी में इतनी गुंजाइश न हो या वह ऐसी चीज़ हो जिससे कोई आमदनी न होती हो तो इस्लामी हुकूमत का और अगर ग़ैर इस्लामी हुकूमत है तो आम मुसलमानों का फ़र्ज़ है कि उसको ठीक कराएं।

2. अगर किसी ने मस्जिद बना दी तो अब उसकी कोई चीज़ मस्जिद बनाने वाला या कोई और शख़्स अपने ज़ाती इस्तेमाल में नहीं ला सकता, यहाँ तक कि ईंट, गारा, लोटा और चटाई भी अपने ज़ाती इस्तेमाल में लाने की मनाही है, अगर उसकी कोई चीज़ बेकार हो जाये या सड़ गल जाये तो उसे बेच कर फिर मस्जिद के काम में लगा देना चाहिये।

3. मस्जिद या मदरसा बनवा कर वक़्फ़ कर देने वाला अगर उनके दरवाज़े के साथ या बग़ल में कुछ दुकानें इस ख़याल से बनवा ले कि उनके किराये से वह अपनी और बाल बच्चों की परवरिश कर लेगा तो यह जाइज़ है। उन दुकानों को वक़्फ़ की हुई मस्जिद या मदरसे के क़रीब या उनके नीचे होने की वजह से वक़्फ़ नहीं समझा जाएगा। इमाम अबू यूसुफ़ रहमतुल्लाह अलैहि ने यह इजाज़त भी दी है कि अगर कोई शख़्स मस्जिद बनवा कर उसके ऊपर के हिस्से में अपने रहने की कोई इमारत बनवा ले तो यह जाइज़ है, हाँ उसको पेशाब पाख़ाने के लिये ऐसा इन्तिज़ाम करना ज़रूरी होगा कि मस्जिद का सम्मान पूरी तरह बाक़ी रहे।

वसिय्यत

वसिय्यत की परिभाषाः लुग़त/डिक्शनरी के एतेबार से यह शब्द तीन अर्थों में इस्तेमाल होता है -

(1) किसी के हक़ में माल की वसिय्यत करना यानी उसको माल का मालिक बना देना।

(2) किसी से अपने लड़के के बारे में वसिय्यत करना यानी लड़के के साथ नर्मी का मुआमला करने को कहना।

(3) किसी को नमाज़ की वसिय्यत करना यानी नमाज़ का हुक्म देना।

फुक़हा की इस्तिलाह में वसिय्यत नाम है अपनी चीज़ का दूसरे को मालिक बना देना जब वसिय्यत करने वाले की मृत्यु हो जाए, इस लिये यह ज़रूरी नहीं है कि वसिय्यत करते वक़्त "मेरे मरने के बाद" भी कहा जाये, अगर सिर्फ़ यह कहा कि "मैं इस बात की वसिय्यत करता हूं" तब भी सही है या अगर वसिय्यत का शब्द ज़ाहिर कर के न कहा बल्कि ऐसी बात कही जो वसिय्यत पर दलालत करती हो तब भी वसिय्यत सही होगी, जैसे यह कहा कि "मेरे माल के एक तिहाई हिस्से में से एक हज़ार रूपये फ़लां शख़्स के लिये हैं, तो यह वसिय्यत ही मानी जाएगी क्योंकि एक तिहाई हिस्सा विसय्यत के मफ़हूम पर दलालत करता है।

वसिय्यत का सुबूतः इसका हुक्म शरई होना किताब व सुन्नत से साबित है कुरआन में अल्लाह का फ़रमान है -

كُتِبَ عَلَيْكُمْ اِذَا حَضَرَ اَحَدَكُمُ الْمَوْتُ اِنْ تَرَكَ خَيْرَا الْوَصِيَّةُ (بقره،١٨٠)

"कुतिबा अलैकुम इज़ा हज़रा अहदकुमुल मौतु इन तरका ख़ैरनिल वसिय्यति"। (बक़रह:180)

अनुवाद: जब तुम में से किसी की मौत क़रीब आये और तरके में माल छोड़ना है तो उसके बारे में वसिय्यत करना तुम पर फ़र्ज़ किया गया है।

आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत से इसका सुबूत इस हदीस में है -

ما حق امرىء مسلم له شيء يوصى فيه يبيت ليلتين الاّ وَصية مكتوبة عنده.

"मा हक्क़ा इमरिउन मुस्लिमुन लहू शैउन यूसी फ़ीहि यबीतु लैलतैनि इल्ला वसिय्यतन मकतूबुहू इनदहू"।

अनुवाद: यह बात सही नहीं है कि एक मुसलमान के पास वसिय्यत के क़ाबिल माल हो और दो रातों में भी वसिय्यत लिख कर अपने पास न रखे।

दो रातों से मक़सद यह है कि जल्द से जल्द यह काम कर लिया जाये।

वसिय्यत के अरकान और शर्तें: वसिय्यत के लाज़िमी अजज़ा ये हैं -

(1) मूसी (वसिय्यत करने वाला) (2) मूसी लहू (जिसके हक़ में वसिय्यत की जाये) (3) मूसा बिही (जिसके बारे में वसिय्यत की जाए और (4) वसिय्यत के शब्द।

वसिय्यत किसी चीज़ के बारे में हो या किसी चीज़ से फ़ायदा उठाने के बारे में हो इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। हनफ़ी फ़ुक़हा का यही मसलक है। मालिकी फ़ुक़हा वसिय्यत को एक अक़्द यानी मुआमला क़रार देते हैं, जिसकी रू से वसिय्यत करने वाले के एक तिहाई माल में उसकी मृत्यु के बाद किसी का हक़ वाजिब हो जाता

है। या मरने वाले के उस माल में मरने वाले की नियाबत (प्रतिनिधित्व) किसी शख़्स को हासिल हो जाती है तो वसिय्यत करने वाला या तो अपनी मौत के बाद किसी को अपना नायब बनाता है या माल के बारे में वसिय्यत करता है।

वसिय्यत का सिर्फ़ एक रुक्न है ईजाब व कुबूल, जैसा कि दूसरे मुआमलात में होता है। ईजाब यह है कि एक शख़्स कहे कि मैं फ़लाँ के हक़ में यह वसिय्यत करता हूँ या मेरी यह वसिय्यत फ़लाँ शख़्स के लिये है या मैंने फ़लाँ शख़्स को अपनी मौत के बाद अपने माल के एक तिहाई का हक़दार बना दिया (इसी तरह के और शब्द जो वसिय्यत के अर्थों में इस्तेमाल होते हैं) वसिय्यत की क़बूलियत वसिय्यत करने वाले के मरने के बाद हो सकती है क्योंकि वसिय्यत में तमलीक (मालिक होने का हक़ देना) मौत पर निर्भर होती है, क़बूलियत या तो सराहतन होगी यानी ज़बान से कहे कि मैं ने वसिय्यत को क़बूल कर लिया या दलालतन यानी जिसके हक़ में वसिय्यत की जाए का तर्ज़े अमल लफ़्ज़न क़बूल करने के बजाए मुतसव्वर हो। अगर मूसी लहू या वसी ने अमलन वसिय्यत को पूरा कर दिया तो उसे क़बूल करना माना जाएगा।

वसिय्यत करने वाले के लिये यह शर्त है कि वह तमलीक का अहल हो यानी दूसरे को मालिकाना हक़ दे सके, ऐसा शख़्स वह हो सकता है जिसमें निम्नलिखित बातें पाई जाएँ –

एक यह कि वह बालिग़ हो, कम उम्र के बच्चे की वसिय्यत सही न होगी चाहे वह अक़्लमंद हो या न हो फिर भी एक चीज़ ऐसी है कि उस बारे में अक़्लमंद बच्चे की वसिय्यत सही मानी जाएगी, वह है "तजहीज़ व तकफ़ीन (कफ़नाने व दफ़नाने) के बारे में वसिय्यत" रिवायत है कि हज़रत उमर (र.त.अ.) ने छोटी उम्र के बच्चे को वसिय्यत करने की इजाज़त दी थी, वह रिवायत इसी पर आधारित है।

दूसरी बात यह कि वसिय्यत करने वाला बालिग़ होने के साथ अक़्लमंद भी हो, किसी मजनून का वसिय्यत करना सही नहीं है, अगर उसका जुनून ख़त्म हो गया हो और अच्छा भला होकर उसकी मौत हुई हो तो भी उस की वसिय्यत पर अमल नहीं होगा क्योंकि उस वक़्त वह वसिय्यत करने के लायक़ नहीं था। अगर जुनून दूर होने के बाद वसिय्यत की और फिर जुनून तारी हो गया और बराबर 6 महीने तक यही हालत रही तो वसिय्यत बातिल हो जाएगी, वर्ना बातिल न होगी। सेहतमंदी की हालत में वसिय्यत करने के बाद वसवसों का ग़लबा हुआ यहां तक कि होश व हवास जाते रहे और उसी हालत में मौत आ गई तब भी वसिय्यत बातिल हो जाएगी।

तीसरी शर्त यह है कि वसिय्यत करने वाले पर इतना क़र्ज़ न हो जो उसके तमाम माली सरमाये के बराबर हो ऐसी सूरत में वसिय्यत करना सही नहीं, क़र्ज़ का अदा करना वसिय्यत को पूरा करने से ज़रूरी है।

चौथी शर्त यह है कि वसिय्यत करने वाला न तो वसिय्यत करने पर मजबूर किया गया हो न उसे किसी धोखे में डाला गया हो, बल्कि पूरी संजीदगी और राय की आज़ादी के साथ वसिय्यत की जाए जिसमें हंसी मज़ाक़ का दख़ल न हो।

पांचवीं शर्त यह है कि वसिय्यत करने वाला गुलाम न हो और मुकातब (लिखित रूप में गुलामी से मुक्ति चाहने वाला) भी न हो यह शर्त अतीत काल में मुफ़ीद थी जब गुलामों का एक तबक़ा पाया जाता था।

छटी शर्त यह है कि वसिय्यत करने वाले की ज़बान बन्द न हो यानी अगर ऐसी बीमारी ज़बान में हो गई कि बोल नहीं सकता तो जब तक ज़बान ठीक न हो जाए वसिय्यत सही न होगी। गूंगा आदमी जो बोल न सकता हो और ख़ास इशारों से अपना मतलब अदा कर सकता हो तो उसके इशारों को बोलने के बराबर समझा जाएगा।

वसिय्यत करने वाले के मुसलमान होने की शर्त नहीं है इस लिये काफ़िर मुसलमान के हक़ में वसिय्यत करे तो सही है मगर जबकि वसिय्यत ऐसी चीज़ के बारे में न हो जो मुसलमान पर हराम है जैसे शराब, जुआ, सुवर वग़ैरा।

मूसा लहू से संबंधित कुछ शर्तें: एक शर्त यह है कि जिसके हक़ में वसिय्यत की जाए वह वसिय्यत करने वाले का वारिस न हो, जैसे एक शख़्स ने अपने भाई के हक़ में वसिय्यत की जो बेटे की मौजूदगी की वजह से वारिस न था तो यह वसिय्यत सही होगी, अब अगर वह बेटा बाप से पहले मर गया और भाई वारिस हो गया तो वसिय्यत बातिल मानी जाएगी, फिर भी अगर वारिस लोग किसी दूसरे के हक़ में वसिय्यत की इजाज़त दे दें (मगर इस शर्त पर कि हर वारिस अक़लमंद सेहतमंद और बालिग़ हों) तो वह वसिय्यत लागू होगी। लेकिन अगर भाई के हक़ में वसिय्यत की और वह उस का वारिस भी था तो अगर मूसी की मौत के वक़्त तक वह वारिस ही है तो वसिय्यत पर अमलदरामद नहीं होगा, लेकिन अगर मौत के वक़्त वह वारिस नहीं रहा जैसे वसिय्यत करने वाले का बेटा पैदा हो गया जिसने चचा को विरासत से रोक दिया तो वसिय्यत लागू होगी।

एक शर्त यह है कि मूसी लहू मालिक होने के लायक़ हो जो मालिक बनने के लायक़ न हो उसके हक़ में वसिय्यत नहीं की जा सकती। अगर यूँ कहा कि मैं इस भूसे की वसिय्यत फ़लाँ शख़्स के जानवरों के हक़ में करता हूं तो इस का मतलब यह हुआ कि उस ने जानवरों को भूसे का मालिक बना दिया तो यह सही नहीं। अगर यूँ कहा जाता कि मैं इस भूसे के बारे में वसिय्यत करता हूँ कि फ़लां शख़्स के जानवरों को खिलाया जाए तो यह वसिय्यत सही होती, इस तरह की वसिय्यतों में क़बूलियत ज़रूरी नहीं, जिस तरह फ़क़ीरों और मिस्कीनों के हक़ में वसिय्यत करने की सूरत में ज़रूरी नहीं है।

एक शर्त यह है कि मूसा लहू वसिय्यत के वक़्त मौजूद हो या मौजूद होने की सम्भावना हो इस लिये पेट के बच्चे के हक़ में वसिय्यत करना सही है जिस तरह उसके बारे में वसिय्यत करना जाइज़ है।

एक शर्त यह है कि जिसके हक़ में वसिय्यत की जाए उसका नाम व निशान मालूम हो या कम से कम यह कि वह एक मिस्कीन या फ़क़ीर हो, एक शर्त यह है कि मूसा लहू ने वसिय्यत करने वाले को जान बूझ कर या ग़लती से क़त्ल न किया हो जैसे मूसी ने जिस के हक़ में वसिय्यत की उसी के हाथों उस ने ज़ख़्म खाया और हलाक हो गया तो वसिय्यत बातिल हो जाएगी लेकिन अगर मूसा लहू, बच्चा या मजनून है तो बातिल नहीं होगी।

मूसा लहू का मुसलमान होना शर्त नहीं है, किसी ज़िम्मी के हक़ में वसिय्यत की जा सकती है इस शर्त पर कि वह दारुल हर्ब में न हो, मुर्तद के हक़ में मुसलमान का वसिय्यत करना सही नहीं है।

अगर मूसा लहू वसिय्यत क़बूल करने से पहले मौत पा जाए तो उसके वारिस उसके बजाए क़बूल करें।

वसिय्यत के माल से संबंधित भी कुछ शर्तें हैं:

(1) माल की वसिय्यत ऐसी चीज़ हो जो मिलकियत में आ सकती हो चाहे माल हो या फ़ायदा (माल में जायदाद, जानवर, रूपया और क़ीमती चीजें शुमार होती हैं और फ़ायदे में किरायेदारी के ज़रिये फ़ायदा या मकान और जानवर को इस्तेमाल का हक़ शामिल है।

(2) ऐसी चीज़ जो अभी मौजूद नहीं लेकिन मौजूद होने की आशा है जैसे बाग़ के फल के बारे में किसी शख़्स के हक़ में वसिय्यत की जा सकती है।

(3) जिस चीज़ के बारे में वसिय्यत की जाए वह वसिय्यत करने वाले का सिर्फ़ एक तिहाई माल हो, एक तिहाई से ज़्यादा माल के बारे में वसिय्यत लागू नहीं होगी। सिवाए इसके कि तमाम वुरसा बालिग़ हों और वे इस बात की इजाज़त दे दें लेकिन यह इजाज़त वसिय्यत करने वाले की मौत के बाद मुफ़ीद हो सकेगी, अगर ज़िन्दगी में इजाज़त दे भी दी तो उन्हें उससे पलटने का हक़ भी होगा।

अगर एक शख़्स ने अपने तमाम माल के बारे में किसी के लिये वसिय्यत की और उसका कोई वारिस नहीं है तो उसकी वसिय्यत पर अमल होगा, इसी तरह अगर पति ने अपनी पत्नी के नाम या पत्नी ने पति के नाम अपने सारे माल की वसिय्यत की और उन दोनों का कोई और वारिस नहीं है तो वसिय्यत सही होगी।

वसिय्यत पर अमल की शरई हैसियतः अमले वसिय्यत की शरई हैसियत हालात के मुताबिक़ अलग अलग होती है। कभी तो वसिय्यत वाजिब होती है, कभी मुसतहब और कभी हराम हो जाती है। हनफ़ी फ़ुक़हा ने वसिय्यत की चार क़िस्में बयान की हैं - (1) वाजिब (2) मुसतहब (3) मुबाह और (4) मकरूह, और इमाम शाफ़ई के मसलक में पाँचवीं क़िस्म भी है यानी "वसिय्यते हराम"।

वसिय्यते वाजिब वह है जो हक़दारों के हुक़ूक़ की अदाएगी के लिये की जाए, इसमें अमानतों और क़र्ज़ों की वापसी शामिल है ताकि किसी का हक़ न मारा जाए जिसका बोझ उसके ऊपर रह जाए और वह गुनाहगार हो।

वसिय्यते मुसतहब वह है जो हुक़ूक़ुल्लाह की अदाएगी जैसे कफ़्फ़ारा, ज़कात, रोज़ा, नमाज़ का फ़िदिया, हज और सवाब वाले काम के लिये की जाये, जैसे फ़क़ीरों मिस्कीनों के हक़ में या किसी दीनदार सालेह के हक़ में जो वारिस न हो।

वसिय्यते मुबाह वह वसिय्यत है जो खुशहाल रिश्तेदारों और अपने क़रीबी लोगों के हक़ में हो, अल्लाह तआला का फ़रमान है –

كُتِبَ عَلَيْكُمْ اِذَا حَضَرَ اَحَدَكُمُ الْمَوْتُ اِنْ تَرَكَ خَيْرَا نِ الْوَصِيَّةُ لِلْوَالِدَيْنِ وَالْاَقْرَبِيْنَ بِالْمَعْرُوْفِ حَقًّا عَلَى الْمُتَّقِيْنَ.

"कुतिबा अलैकुम इज़ा हज़रा अहदकुमुल मौतु इन तरका ख़ैरल वसिय्यतु लिलवालिदैनि वल अक़रबीना बिल मअ़रूफ़ि हक़्क़न अललमुत्तक़ीना"।

अनुवादः यानी जब तुम में से किसी की मौत का वक़्त क़रीब आए और तरके में माल हो तो तुम पर लाज़िम है कि माँ बाप और क़रीबी रिश्तेदारों के हक़ में नेक सुलूक की वसिय्यत कर जाओ, यह ख़ुदा से डरने वालों पर ज़रूरी है"।

यह वह हुक्म था जो मीरास वाली आयत के उतरने और विरासत के हुकूक़ का निज़ाम मुक़र्रर होने से पहले माँ बाप और रिश्तेदारों को माले मतरूका से देने के लिये था जो विरासत के अहकाम उतरने के बाद ख़त्म हो गया लेकिन वसिय्यत का मुसतहब होना बहरहाल बाक़ी है और शरीअत ने उसे 1/3 के अन्दर महदूद कर दिया है इस तरह वुरसा का हिस्सा भी सुरक्षित हो गया और अच्छे कामों में सहयोग का हक़ भी बाक़ी रहा।

वसिय्यते मकरूह वह वसिय्यत है जो फ़ासिक़ों, गुनाह का काम करने वालों, गुमराही और बुरी बातों में पड़े हुए लोगों के हक़ में की जाए, इमाम शाफ़ई के नज़दीक एक तिहाई माल से ज़्यादा के लिये या किसी विरासत के हक़ में वसिय्यत करना भी मकरूह है और इमाम मालिक (रह०) के नज़दीक अगर माल थोड़ा हो और उसका वारिस मौजूद हो तो भी वसिय्यत करना मकरूह है।

वसिय्यते हराम, इमाम शाफ़ई रहमतुल्लाह अलैहि के नज़दीक किसी सरकश फ़सादी के हक़ में वसिय्यत करना है क्योंकि ऐसा शख़्स तरके से हिस्सा पा कर फ़साद ही फैलाएगा, मालिकी फुक़हा के नज़दीक वसिय्यते हराम वह है जो किसी हराम काम के लिये की जाए जैसे मय्यत पर नौहा व मातम के लिये वसिय्यत करना वग़ैरा।

हज कराने और कुरआनख़्वानी के लिये वसिय्यत: अगर किसी शख़्स पर हज वाजिब है तो मुसतहब यह है कि अपनी तरफ़ से हज या (हज्जे बदल) की वसिय्यत कर जाए। वसिय्यत को पूरा करने के लिये 1/3 से ज़्यादा माल वुरसा की इजाज़त के बग़ैर ख़र्च नहीं किया जाएगा। अगर सफ़र का आरम्भ घर से करने के लिये माल काफ़ी न हो तो जिस जगह से सफ़र करने के लिये माल काफ़ी हो वहीं से किसी आदमी के ज़रिये हज करा दिया जाए, पैदल चल कर हज्जे बदल करना सही नहीं, हज उसी शख़्स पर वाजिब होता है जिसे सवारी पर जा कर हज करने की ताक़त हो, यही हुक्म उसके नाइब के लिये भी है।

क़ब्रों पर या किसी ख़ास जगह पर क़ुरआनख़्वानी के बारे में वसिय्यत करना हनफ़ी फ़ुक़हा के नज़दीक यह ऐसी वसिय्यत है जिस पर अमल करना फ़ुज़ूल है लेकिन अगर ऐसी वसिय्यत किसी ख़ास शख़्स के बारे में हो जैसे यह कि मैं अपने माल में से इतने माल के बारे में फ़लां क़ारी के हक़ में वसिय्यत करता हूं कि मेरी क़ब्र पर कुरआन पढ़ने के लिये दिया जाए तो फ़ुक़हा ने उसको जाइज़ क़रार दिया है क्योंकि यह अच्छे व्यवहार के तौरपर माना गया है, कुरआन पढ़ने की मज़दूरी के तौर पर न होगा।

अगर किसी ने वसिय्यत की कि मौत के बाद उसको किसी ख़ास मक़ाम पर ले जा कर दफ़न किया जाए तो इस वसिय्यत पर

भी अमल करना ज़रूरी नहीं, वसी ने अगर मय्यत को दूसरी जगह ले जाने का बंदोबस्त किया तो उसके ख़र्चे की ज़िम्मेदारी भी उसी पर होगी, हाँ अगर मरने वाले के वुरसा उसके छोड़े हुए माल से ख़र्च करने की इजाज़त दे दें तो ऐसा करना सही होगा।

अगर क़ब्र पर गुंबद वग़ैरा बनाने की वसिय्यत की गई तो वह सब के नज़दीक बातिल होगी क्योंकि उससे नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने रोका है हाँ अगर यह वसिय्यत है कि क़ब्र पर मिट्टी या चूने वग़ैरा का पोचा फेर दिया जाए और उसका मक़सद क़ब्र को वहशी जानवरों से सुरक्षित रखना या क़ब्र को ख़राब होने न देना है तो उस पर अमल किया जा सकता है।

जो चीज़ें शरीअत में नाजाइज़ या मकरूह या ग़ैर ज़रूरी और फ़ुज़ूल ख़र्ची की हैं जैसे किसी ने वसिय्यत की कि मुझे क़ीमती कपड़े का या टेरीकाट का कफ़न दिया जाए, मेरी क़ब्र पुख़्ता बनाई जाए, या ख़ूब धूम धाम से चेहलुम या तीजा किया जाए तो ये वसिय्यतें पूरी नहीं की जाएंगी क्योंकि इनमें से कोई चीज़ भी शरीअत की एतेबार से सही नहीं है।

1/3 माल से ज़्यादा वसिय्यत करना या वुरसा के हक़ में वसिय्यत करना जाइज़ नहीं है जिसका ज़िक्र ऊपर हो चुका है इसी तरह अगर क़र्ज़ अदा करने के बाद कुछ न बचे तो वसिय्यत पूरी नहीं की जाएगी।

दूसरों का हक़ मारने या नुक़सान पहुंचाने वाली वसिय्यतें: जिस तरह नाजाइज़ वसिय्यतें करना गुनाह है उसी तरह जिस वसिय्यत से किसी वारिस का हक़ मारा जा रहा हो या नुक़सान पहुंचता हो वह भी गुनाह है, कुरआन में वसिय्यत और क़र्ज़ की अदायगी का हुक्म देते हुए कहा गया है -

مِنْ بَعْدِ وَصِيَّةٍ يُوْصِىْ بِهَا اَوْ دَيْنٍ غَيْرَ مُضَارٍّ۔ (النساء:١١)

''मिम्बअदि वसिय्यतिन यूसी बिहा औ दैनिन ग़ैरा मुज़र्रिन''।

अनुवादः (मीरास को बांटा जाए) वसिय्यत और क़र्ज़ की अदाएगी के बाद की जाए यह वसिय्यत और क़र्ज़ वुरसा को नुक़सान पहुंचाने वाला न हो।

नबी करीम (स.अ.व.) ने फ़रमाया, "कितने मर्द व औरतें ऐसे होते हैं कि पूरी उम्र 60 वर्ष तक ख़ुदा की आज्ञापालन करते रहते हैं और जब मौत का वक़्त क़रीब आ जाता है तो अपनी वसिय्यत के ज़रिए वुरसा को नुक़सान पहुंचा जाते हैं या हक़दारों को वसिय्यत नहीं करते जिसकी वजह से वे दोज़ख़ के हक़दार हो जाते हैं।

(अबू दाऊद)

नुक़सान पहुंचाने की कई सूरतें हो सकती हैं जैसे -

1. अक्सर एक तिहाई यानी 1/3 से ज़्यादा वसिय्यत करने से वारिसों का हक़ मारा जाता है।

2. वारिसों को नुक़सान पहुंचाने के लिये यह कहना कि मेरे ज़िम्मे फ़लां का इतना क़र्ज़ है या इतनी रक़म अमानत है वह अदा कर दी जाए। हालांकि वाक़ई में ऐसा न हो तो यह वसिय्यत गुनाह है।

3. इसी तरह अगर उसने किसी को क़र्ज़ दिया या अपनी कोई क़ीमती चीज़ किसी के यहां अमानत रखवाई लेकिन इक़रार यह कर लिया कि मैं क़र्ज़ या अमानत पा चुका हूँ तो वह सख़्त गुनहगार होगा, क्योंकि वह हक़ वालों का हक़ मार कर ग़ैर हक़ वालों को फ़ायदा पहुंचा रहा है।

वसिय्यत से पलटनाः मूसी (वसीय्यत करने वाला)जब तक ज़िन्दा है उसको अपनी वसिय्यत से पलटने का हक़ रहता है जैसे किसी ने एक मकान किसी को देने की वसिय्यत की लेकिन कुछ दिनों के

बाद उस ने कहा कि मैं उससे पलटता हूँ तो उसे इसका हक़ है, अगर ज़बान से नहीं कहा मगर ऐसा तरीक़ा इख़्तियार किया जिससे पता चलता है कि वह विसिय्यत से पलट गया है तो भी वसिय्यत बातिल हो जायेगी, जैसे अपनी कोई ज़मीन किसी को देने की वसिय्यत की फिर उसने मकान बनवा लिया या उसे बेच दिया तो यह समझा जाएगा कि वह अपनी वसिय्यत से पलट गया।

वसी का बयानः वसी मजाज़ वह है जिसको एक शख़्स ने अपनी मौत के बाद अपना नाइब बनाया हो कि वह उसके माल में तसर्रुफ़ करे और उसके कमज़ोर व नासमझ वारिसों की भलाई का ख़याल रखे। वसी, वसिय्यत करने वाले की ज़िन्दगी में ज़िम्मेदारी कुबूल करने से इन्कार कर सकता है लेकिन उसकी मौत के बाद अलग होने का हक़ नहीं है।

वसी के बारे में जो अहकाम हैं उनका ज़िक्र 'हज्र' के बयान में भी किया गया है, यहां कुछ और मसाइल बयान किए जाते हैं, जिस शख़्स को वसी बनाया जाए उस के लिए कुछ शर्तें हैं –

1. बालिग़ होना, अगर किसी ने एक बच्चे को अपने बाद वसी मुक़र्रर किया तो वह बालिग़ होने पर वसी माना जाएगा जब तक वह बच्चा है शरीअत के हाकिम पर लाज़िम होगा कि उसके बजाए किसी और को बना दे और उसको बरतरफ़ करदे। हाकिम के नाबालिग़ वसी को बरतरफ़ करने से पहले अगर उसने माल में कोई तसर्रुफ़ कर लिया तो उसे सही माना जाएगा क्योंकि बुलूग़ की शर्त वसी बने रहने के लिए है वसिय्यत के सही होने की शर्त नहीं है, इस लिये अगर हटाए जाने से पहले वह बालिग़ हो जाए तो वह वसी रहेगा।

2. मुसलमान होना, अगर उसने किसी काफ़िर को वसी बनाया तो क़ाज़ी पर लाज़िम है कि उसकी बजाए किसी मुसलमान को वसी

बना दे लेकिन हटाए जाने से पहले उसने माल में कुछ तसर्रूफ़ किया तो उसको सही माना जाएगा, क्योंकि वसिय्यत उसके हक़ में भी ठीक थी या अगर वह मुसलमान हो गया तो वसी के मंसब (पद) पर बरक़रार रहेगा।

3. आदिल (न्यायवान) होना, किसी बदकार को वसी बनाना ऐसा ही है जैसे किसी नाबालिग़ को वसी बनाना उसको वसी के फ़राइज़ से हटाने की शर्त यह है कि वह माली मुआमलात में बदनाम हो, अगर वह माली मुआमलों में किसी नुक़सान का कारण न हो तो उसे बरतरफ़ करना सही नहीं है।

4. ईमानदार होना, अगर उसकी बेईमानी साबित हो जाए तो हाकिम पर लाज़िम है कि उसे वसी के फ़राइज़ से बरतरफ़ कर दे।

5. वसिय्यत का काम करने के लायक़ होना, अगर वह कुछ काम न कर सकता हो तो हाकिम उसके साथ किसी और शख़्स को लगाएगा जो उन कामों को कर सके या अगर वह बिल्कुल काम न कर पाता हो तो किसी और को वसी बना देगा लेकिन सिर्फ़ शिकायत पर उस भरोसे को तोड़ा नहीं जाएगा जो वसिय्यत करने वाले को वसी पर था।

दो लोगों को वसी मुक़र्रर करना: अगर दो लोगों को वसी बनाया जाए तो उनमें से एक को दूसरे की इजाज़त के बग़ैर तसर्रुफ़ करना जाइज़ नहीं, हाँ अगर वसिय्यत करने वाले ने यह तसरीह कर दी हो कि दोनों में से हर एक को खुद बखुद तसर्रुफ़ करने का हक़ होगा तो दोनों का अलग अलग तसर्रुफ़ सही माना जाएगा। कुछ काम ऐसे हैं जिन्हें दोनों वसियों में से हर एक अकेला कर सकता है इस में तमाम फ़ुक़हा एक राय रखते हैं जैसे वसिय्यत करने वाले की मृत्यु के बाद उसका कफ़न दफ़न, हुक़ूक़ के बारे में दावा, बच्चे की

शुरू की ज़रूरतों का इन्तिज़ाम करना, अमानत को वापस करना, वसिय्यत को पूरा करना, ऐसी चीज़ों को बेच देना जिनके ख़राब हो जाने का ख़तरा हो, जो माल ख़राब हो रहा हो उसको सुरक्षित रखने का इन्तिज़ाम करना।

इमाम मालिक (रह०) ने फ़रमाया है कि वसी मुसलमान अगर मुरतद हो जाए (इस्लाम को त्याग दे) तो उसे फ़राइज़ से बरतरफ़ कर दिया जाएगा, या तसर्रुफ़ की क़ाबलियत रखता हो लेकिन बाद में मअज़ूर (असमर्थ) हो जाए तो भी बरतरफ़ कर दिया जाएगा।